स्वर्ण जयन्ती प्रकाशन 2013

BIHAR YOGA

क्रियात्मक योग

बिहार योग का आधार

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार

क्रियात्मक योग



WORLD YOGA CONVENTION 2013
GANGA DARSHAN, MUNGER, BIHAR, INDIA
23rd–27th October 2013

क्रियात्मक योग

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

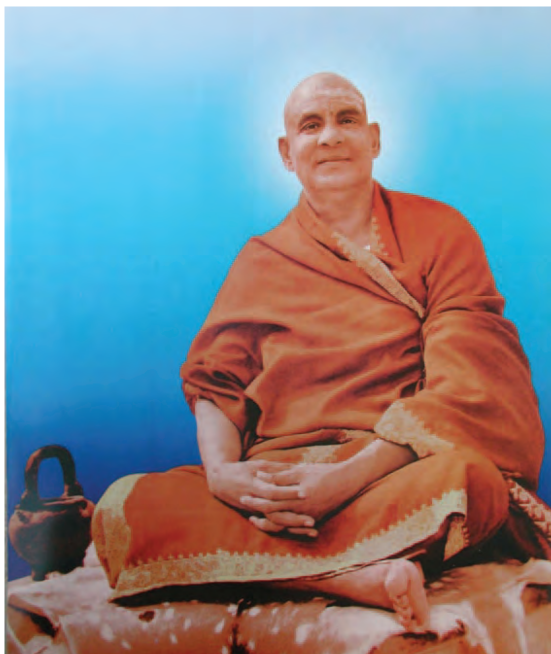
नि:शुल्क वितरण

बिहार योग विद्यालय द्वारा — *प्रथम संस्करण 1974*
पुनर्मुद्रण 1978, 1983, 1992
द्वितीय संशोधित संस्करण 1998
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा — *पुनर्मुद्रण 2003, 2006, 2007, 2009*
तृतीय संशोधित संस्करण 2012

ISBN: 978-81-85787-59-6

प्रकाशक एवं वितरक—योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट,
मुंगेर, बिहार, भारत
मुद्रक—थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड,
नई दिल्ली

वेबसाइट: www.biharyoga.net
www.rikhiapeeth.net



सविनय समर्पण

स्वामी शिवानन्द सरस्वती के चरणों में
जिन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को योग के रहस्यों की शिक्षा दी



नमो नारायण

योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन-पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीनकाल में सुखी, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते थे। जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ, तभी से भारतवासी गरीब, दुःखी और अस्वस्थ हैं। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शान्ति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वास्थ्य। भारत में सुख, समृद्धि, शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ, 2005

विषय-सूची

आमुख

योग पर अनेक पुस्तकें लिखी गई हैं। कुछ भारत के योगियों द्वारा लिखी गई हैं, जो अधिकांशत: योग के निगूढ़ पक्षों से सम्बन्धित हैं, जैसे कि ध्यान और समाधि। अन्य पुस्तकें पश्चिमी देशों के लेखकों द्वारा लिखी गई हैं, जिन्होंने व्यावहारिक योग की अधिक मूर्त्त शारीरिक सम्भाव्यताओं, जैसे, आसन और प्राणायाम पर जोर देने का प्रयत्न किया है। मनोशारीरिक चिकित्सा की विशाल क्षमता; आध्यात्मिक मार्ग पर इसका अनन्त विस्तार; एक जीवन-शैली के रूप में इसकी अतुल उपयोगिता, जो आधुनिक, तीव्रतापूर्वक परिवर्तित होते संसार की कष्टकारी परिस्थितियों में प्रसन्नता का मार्ग प्रशस्त करती है और कल की संस्कृति के रूप में इसका उज्ज्वल भविष्य–योग के इन पक्षों का वर्णन विस्तारपूर्वक आज तक नहीं किया गया है।

अनेक लोग योग को पर्वत की चोटियों पर या गुफाओं में बैठे साधुओं से, काँटों के बिछावन पर सोने वाले व्यक्तियों अथवा जो सामान्य तौर पर अजूबा करतब दिखाते हैं, उनसे जोड़ते हैं। किन्तु संसार में अधिकतर लोगों के मन में योग की कोई स्पष्ट धारणा नहीं है, क्योंकि योग का वर्णन जंतर-मंतर और रहस्य के आवरण से रहित ऐसे शब्दों में नहीं किया गया है जिसे लोग आसानी से समझ सकें। इस दिशा में बहुत कम कार्य किया गया है। यह आशा की जाती है कि यह पुस्तक लोगों को योग को समझने और इस बात की अनुभूति कराने में सहायक होगी कि यह एक ऐसा विज्ञान है जो आधुनिक जीवन से सीधे तौर पर जुड़ा हुआ है।

हमारा यह विश्वास है कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर योग के प्रचार-प्रसार हेतु एक विश्वव्यापी समेकित आन्दोलन चलाया जाय तो योग विषयक रहस्य का आवरण हट जायेगा और योग अपनी प्राचीन गरिमा और सत्य के साथ जगत्

के समक्ष प्रकट होगा। योग केवल गिने-चुने लोगों के लिए नहीं है, बल्कि यह युवा और वृद्ध, स्वस्थ और बीमार, अमीर और गरीब, सभी लोगों के लिए है। अपने असीम संसाधनों और अनन्त सम्भावनाओं के साथ यह मानवता को विकासक्रम के एक नए और यशस्वी युग में ले जाएगा।

यह पुस्तक योग के महान् उद्देश्य के प्रति हमारे समर्पण तथा योग और यौगिक विधियों को स्पष्ट और बोधगम्य भाषा में व्याख्यायित करने का एक प्रयास है। यह एक विनम्र भेंट है।

योग की व्याख्या

योग के नये क्षितिज

सामान्य लोगों में योग के विषय में अत्यन्त अस्पष्ट एवं प्राय: विचित्र धारणायें हैं। परन्तु जिन्हें इस प्राचीन योग विज्ञान की कुछ जानकारी है, जो इससे व्यावहारिक रूप से जुड़े हैं, उन्हें भी इसके कतिपय अधिक स्पष्ट सत्य को समझने में प्राय: कठिनाई होती है। वस्तुत: इस अध्याय में जो विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं, वे नये लग सकते हैं और संभवत: पहले के मान्य योग सिद्धान्तों का उन्मूलन भी कर सकते हैं।

आखिर ये नये विचार हैं क्या? प्रथमत:, योग अभ्यास के लिए व्यक्ति को घर-बार छोड़ कर जंगल या एकान्त में जाने की आवश्यकता नहीं है। हम इस विचार को भी नहीं मानते कि योगाभ्यास केवल संन्यासी, योगी या साधु ही कर सकते हैं। दूसरी बात, वैवाहिक जीवन या गृहस्थ जीवन योगाभ्यास में बाधक नहीं है। तीसरी बात, जो मांसाहार करते हैं उन्हें मांसाहार केवल इसलिए नहीं छोड़ना है कि वे योग का अभ्यास करना चाहते हैं। योग का वास्तविक लक्ष्य है अपने अन्दर शान्ति एवं आनन्द का अनुभव करना। उपर्युक्त लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अपनी सामान्य जीवन-शैली को छोड़ने की आवश्यकता नहीं है।

जीवन के संकटों से पलायन मुक्ति का मार्ग नहीं है। जीवन का युद्धक्षेत्र काल्पनिक नहीं है। दार्शनिकों को ऐसा लग सकता है, क्योंकि वे कल्पना लोक में रहते हैं, उनके पाँव धरती पर पड़ते भी नहीं। योग व्यावहारिक है और दार्शनिकों की काल्पनिक उड़ानों से इसका कोई सरोकार नहीं है। ऐसा कदापि नहीं समझिये कि गृहस्थ का जीवन संन्यासी के जीवन से निम्न है। स्त्रियों को भी यह कभी सोचना नहीं चाहिए कि उनका स्थान पुरुषों से किसी प्रकार कम है।

आज योग को विश्व में एक विशेष भूमिका निभानी है। केवल इसके अभ्यास से शारीरिक एवं मानसिक क्लेश दूर हो सकते हैं। यह हमारे हृदय

एवं घरों में खुशियों का संचार कर सकता है। योग आत्मानुशासन एवं व्यवहार के आदर्शों की असाधारण शर्तें नहीं लगाता है। आप जीवन के सुखों का भोग करते हुए भी योगी हो सकते हैं। योगाधारित जीवन के लिए अपनी सांसारिक महत्त्वाकांक्षाओं और भौतिक इच्छाओं को छोड़ना आवश्यक नहीं है। तथापि, साथ-ही व्यक्ति को अपनी वासनाओं का दास भी नहीं होना चाहिए।

योग का निष्ठावान साधक उस सागर के समान अविचलित रहता है, जिसमें अनेक वेगवती नदियों की उग्र जलराशि समाहित होती है। इन्द्रिय-सुख का आनन्द लेता हुआ योगी इतना सतर्क अवश्य रहता है कि इन्द्रियाँ उसके ऊपर हावी न हो जाएँ। यह जीवन से घृणा करना नहीं सिखाता। जंगल में जाकर एकान्त समाधि में बैठने का आनन्द लेना कोई विशिष्ट गुण नहीं है। जीवन की हलचल में भी अडिग खड़े रहना शूरता है, विशेष रूप से उस समय जब सभी चीजें हमारे विपरीत जा रही हों, तथा विषमताओं के मध्य सन्तुलन प्राप्त करना ही समाधि है।

डॉक्टर यदि चाहे कि स्वस्थ व्यक्ति ही उसके दवाखाने में आएँ तो वह सही डॉक्टर नहीं हो सकता है। उसी प्रकार यदि शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति पर ही योग का चमत्कार प्रकट हो सकता हो, तब यह जीवन का अपूर्व विज्ञान नहीं रह जाएगा। तब तो इसका क्षेत्र अत्यन्त सीमित हो जायेगा। एक अत्यन्त विवेकपूर्ण विज्ञान होने के कारण यह जीवन की सभी परिस्थितियों में, सभी व्यक्तियों को लाभ पहुँचा सकता है। प्रतिदिन के शारीरिक एवं मानसिक परिश्रम के पश्चात् यह व्यक्ति में पुनः समुत्थान शक्ति, ऊर्जा एवं सन्तुलन ला सकता है।

सांसारिक मनुष्य का जीवन एक अनवरत यज्ञ है। घर के चूल्हे को जलाये रखने तथा अपने सामाजिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दायित्वों को पूरा करने के निमित्त किये गये कार्य उस यज्ञ की आहुतियाँ हैं। एक बार यह सत्य समझ में आ जाये तो अपने जीवन की स्थिति के अनुसार अहर्निश कठिन श्रम के मध्य भी व्यक्ति के जीवन में आत्म-साक्षात्कार की झलक को प्रखर रखा जा सकता है।

जीवन के संघर्ष में अनवरत चल रहे क्रियाकलाप अपना प्रभाव डालते ही हैं। चिन्ता, निराशा, शरीर और मन की थकान, सभी मिल कर वार्द्धक्य की गति को ही तीव्र करते हैं। इन विनाशकारी शक्तियों के विरुद्ध योग एक सशक्त उपाय है।

आत्मोत्थान में सहायक योग विज्ञान के सम्बन्ध में प्राचीन तत्त्वदर्शी योगियों के कथन के आलोक में योगाभ्यास के लिए आजीवन ब्रह्मचर्य-पालन क्या अनिवार्य है? उत्तर है, नहीं। अवस्था भी योग साधना में बाधक नहीं है। चाहे व्यक्ति जीवन की दहलीज पर हो, अपनी युवावस्था में हो या जीवन के अन्तिम चरण की ओर अग्रसर हो, वह योगाभ्यास सीख सकता है, कर सकता है। योगाभ्यास के लिए कोई प्रतिबन्धक तत्त्व नहीं है।

भारतीय शास्त्रों में वर्णित अष्टांग योग ही एकमात्र योग नहीं है। नियमित रूप से किये जाने पर आसन, प्राणायाम, जप, नादयोग और त्राटक जैसे सरल अभ्यास भी उतने ही प्रभावशाली हैं। कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग, ज्ञानयोग, योग के विभिन्न पक्ष हैं। संगीत भक्तियोग का अभिन्न अंग है, दमित भावनाओं और उत्तेजित मन पर इसका शान्तिप्रद प्रभाव होता है। इतनी दूर क्यों जायें? जीवन स्वयं ही योग है। हमारे दैनिक कर्म ही योग हैं। इसका क्षेत्र विशाल और आकर्षक है। आइये, योग के स्पन्दन एवं रोमांच के द्वारा अपने जीवन के सभी क्रियाशीलनों को रूपान्तरित होने दें।

जीवन के जंजालों और फन्दों में पड़कर व्यक्ति वास्तविकता से मुँह नहीं मोड़ सकता। पतञ्जलि के यम और नियम एक काल विशेष के लिए अत्यन्त प्रासंगिक थे। कठोर सत्य यही है कि यम और नियम की यदि पूर्व काल की व्याख्या को ही लें, तो आज के युग में उनका कोई स्थान नहीं रह जाता है। प्राचीन काल में जिस हवा में हमारे पुरखे श्वास लेते थे वह इन सद्‌गुणों से पूर्ण थी। आज जिस वायु को हम ग्रहण करते हैं वह असत्य, हिंसा और अनगिनत दोषों से परिपूर्ण है। सत्य, अहिंसा आदि निश्चित रूप से अधिक सामर्थ्यपूर्ण शक्तियाँ हैं, परन्तु वे तभी कारगर हो सकती हैं जब आन्तरिक प्रेरणा के वशीभूत हो उनका अभ्यास किया जाए।

योग असम्भव सद्‌गुणों को उत्पन्न करने में रुचि नहीं लेता। अच्छा हो हम उन्हें नैतिकतावादियों के लिए ही छोड़ दें। योग एक विवेकपूर्ण विज्ञान है, जिसमें अशान्त मन को शान्त करने, शारीरिक एवं मानसिक ऊर्जाओं का उपयोग करने और उनमें लचीलापन बनाये रखने की विधियाँ हैं। संक्षेप में योग का लक्ष्य है–एक समन्वित व्यक्तित्व का विकास। मनुष्य को बुद्धिसम्पन्न ही नहीं होना है, और न उसे पूरी तरह से भावनाप्रधान ही होना है। दोनों का सुखद संयोग होना चाहिए, अन्यथा जीवन में शान्ति नहीं रह पायेगी।

योग शब्द अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह संस्कृत की युज् धातु से बना है, जिसका अर्थ होता है जोड़ना या एक करने की क्रिया। योग का अर्थ है जुड़ना, एकात्मता। सबके सुख-दु:ख से जुड़ें। अपने हृदय को उदार बनायें और जीवन की क्षुद्रताओं से ऊपर उठें। योग को यदि इस अर्थ में लें तो यह व्यक्तिपरक नहीं रह जाता। जैसे, माता और सन्तान में भावनात्मक एकात्मता रहती है उसी प्रकार अपने परिवेश के साथ भावनात्मक एकात्मता विकसित करें।

योग शारीरिक और मानसिक उत्थान के लिए है, दु:खी मानवता के लिए यह मनोदैहिक चिकित्सा पद्धति के रूप में एक आशीष है, वरदान है। सत्य के खोजियों के लिए ईश्वरानुभूति की सीधी राह है। वस्तुत: योग पूर्णता की योजना है। आप इसे एक कार्यक्रम, एक विधि या एक दर्शन के रूप में ले सकते हैं। निश्चित लक्ष्यों एवं ध्येयों के साथ जब यह आन्दोलन का रूप ग्रहण करता है, तब यह एक कार्यक्रम है। यह एक विधि इस अर्थ में है कि योग के अभ्यास शुद्ध एवं सुव्यवस्थित हैं। मनुष्य की आध्यात्मिक दिशा जो भी हो, ध्यान तथा अन्य अभ्यास सदा ही उपयोगी हैं। आत्म-साक्षात्कार की कुछ विधियाँ सारे विश्व में मान्य एवं साध्य हैं। अत: योग एक सार्वभौम नुस्खा है और वस्तुत: आत्म-साक्षात्कार का राजमार्ग है।

लोग बड़े ऊँचे संकल्प करते हैं, आत्म-साक्षात्कार चाहते हैं, उच्चादर्शों का पालन करना चाहते हैं। परन्तु इसमें एक ही अड़चन है, उनमें संकल्पशक्ति का अभाव है। संकल्प शक्ति के अभाव में न भौतिक उन्नति सम्भव है और न आध्यात्मिक। दुहरे व्यक्तित्व का विकास न करें–बाहर में लोगों के सामने संकल्प शक्ति का प्रदर्शन और एकांत में अपने दोषपूर्ण कर्मों में लिप्त रहना–वास्तविकता और आदर्श का द्वन्द्व।

क्या आपको सुखी और सामंजस्यपूर्ण जीवन अच्छा लगता है? क्या आप अपने दैनिक कार्य-कलापों में उत्साह से भरे रहते हैं? जब प्रतिकूल परिस्थितियाँ आपको झकझोर देती हैं, तब क्या आप शान्त मन और सहज भाव से अपना सिर ऊँचा रख पाते हैं? यदि नहीं, तो फिर योग की शरण में आइये।

योग और शारीरिक स्वास्थ्य विज्ञान

योग का मनोदैहिक पक्ष अति महत्त्वपूर्ण है। यह प्राचीन विज्ञान मानव को मात्र एक जैव इकाई नहीं मानता। प्राचीन चिन्तकों ने मन के कार्यों और उसकी आन्तरिक संरचना पर अधिक ध्यान दिया है। आज, मनोविज्ञान ने भी अपने शोध क्षेत्र में इस मौलिक पक्ष को स्वीकार किया है और शरीर एवं मन के अन्तर्सम्बन्धों को अधिक से अधिक समझ रहा है।

अत: यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि किसी भी कार्य-क्षेत्र में मनुष्य की प्रगति के लिए न केवल उसको शारीरिक रूप से स्वस्थ होना चाहिए, वरन् उसका मानसिक रूप से स्वस्थ होना भी अनिवार्य है। योग के क्षेत्र में मानव की उच्चतम प्रगति के लिए उसके स्वस्थ और समन्वित व्यक्तित्व के विकास को योग ने सदा ही अपना लक्ष्य माना है। अत: यह कोई आश्चर्यजनक बात नहीं कि महर्षि पतञ्जलि अपनी अष्टांग-योग-पद्धति में दोनों पक्षों–बहिरंग और अन्तरंग को योग की पूर्णता के लिए आवश्यक मानते हैं। प्रथम कोटि में आते हैं-यम, नियम, आसन और प्राणायाम तथा द्वितीय कोटि में आते हैं–प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

प्रथम चार शारीरिक स्वास्थ्य के मौलिक तत्त्व हैं। यम, नियम, आसन और प्राणायाम सबके शारीरिक स्वास्थ्य के चार आधार स्तम्भ हैं। फिर हठयोग छ: शुद्धिकारक तकनीकों, नेति, धौति, बस्ति, नौलि, त्राटक और कपालभाति को षट्कर्म के रूप में रखता है। ये सभी शारीरिक स्वास्थ्य विज्ञान की महत्त्वपूर्ण तकनीकें हैं। प्राचीन योग विज्ञान ने मेरुरज्जु और मस्तिष्क को केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र के अवयव के रूप में माना है तथा उनको स्वस्थ रखने पर बल दिया है। योग में अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियों की समुचित क्रियाशीलता और शरीर की रासायनिक प्रतिक्रियाओं को भी महत्त्वपूर्ण माना गया है। अतएव

साधक प्रसन्नता से अपने जीवन के स्वैच्छिक नियमन के लिए तैयार हो जाता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि उस समय वह अपने जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं को अस्वीकार कर अपनी सहज प्रवृत्तियों का दमन करता है, अपितु वह एक उच्च प्रयोजन हेतु अपनी इन सहज प्रवृत्तियों के रूपान्तरण के लिए सतत् परिश्रमपूर्ण प्रयास करता है।

अत: शरीर को स्वस्थ एवं चुस्त-दुरुस्त रखने के लिए आसन, प्राणायाम और मुद्रा मुख्य विधियाँ हैं। ये स्वास्थ्य के मुख्य आधार हैं, क्योंकि योग में लम्बे काल तक एक ही स्थिति में बैठकर भी अभ्यास करना होता है। आसन केवल शारीरिक व्यायाम नहीं हैं, बल्कि विभिन्न शारीरिक स्थितियाँ हैं जो मांसपेशियों को प्रभावित करती हैं। योग में पेशीय बल का अधिक महत्त्व नहीं है और शरीर को केवल एक यंत्र माना गया है।

योगाभ्यास में थकावट, क्लान्ति, आलस्य आदि से दूर रहा जाता है। प्रयास तो यही रहता है कि मन सदा प्रसन्न रहे। आसन वह तकनीक है जिसका प्रतिदिन अभ्यास कर समस्त मानव तन्त्र को स्वास्थ्य एवं पुनर्जीवन प्रदान किया जा सकता है।

केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र समस्त ऊर्जा का भंडार है। शरीर में कई अप्रकट केन्द्र भी हैं जो निष्क्रिय हैं और उन्हें सक्रिय करने की आवश्यकता है। आसन इसमें कुछ हद तक सहायक होते हैं। हालाँकि कुल आसनों की संख्या चौरासी हैं, पर उनमें कुछ ही मुख्य हैं। पीछे झुकने वाले आसन, जैसे–भुजंगासन, शलभासन और धनुरासन; आगे झुकने वाले आसन, जैसे–हलासन और पश्चिमोत्तानासन; मुड़ने वाले आसन, जैसे–अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन; सिर के बल किये जाने वाले आसन, जैसे–सर्वांगासन, शीर्षासन, ये सभी मेरुदण्ड को लचीला बनाए रखते हैं। यौगिक शरीर रचना शास्त्र के अनुसार प्रमुख नाड़ी सुषुम्ना है, जो मेरुदण्ड से होकर निकलती है। चौदह प्रमुख नाड़ियों में इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना मुख्य तीन नाड़ियाँ हैं। आसन मेरुदण्ड को लचीला और स्वस्थ रखते हैं जिससे साधक अतीन्द्रिय पथ के माध्यम से अपनी संचित ऊर्जा को उन्मुक्त कर सकते हैं।

ऊपर वर्णित षट्कर्म केवल आन्तरिक अंगों को शुद्ध रखने में सहायक होते हैं। शरीर में केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र ही महत्त्वपूर्ण नहीं है। अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ, जैसे–पीनियल, पीयूष, चुल्लिका, उप-चुल्लिका, थाइमस आदि भी हैं। ये हारमोन स्रावित करती हैं जो सीधे रक्त-प्रवाह में जाते हैं। अत: यह

आवश्यक है कि इन्हें समुचित रूप से क्रियाशील रखा जाय, क्योंकि ये न केवल स्थूल शरीर-संरचना के विकास में योगदान देती हैं, वरन् सूक्ष्म रूप से व्यक्तित्व संरचना को भी प्रभावित करती हैं। इस प्रकार योग शारीरिक मनोविज्ञान के क्षेत्र में प्रविष्ट हो जाता है। मुद्राएँ स्वाभाविक अभ्यास हैं जो ग्रन्थियों और आन्तरिक अंगों को पुनः पुनर्जीवन प्रदान करते हैं। मुद्राओं के कुछ उदाहरण हैं– योगमुद्रा, महामुद्रा, महाभेद मुद्रा आदि। ये मुद्राएँ शारीरिक स्वास्थ्य के लिए योग की आवश्यक विधियाँ हैं।

तीसरी महत्त्वपूर्ण विधि है, प्राणायाम। इसके द्विपक्षीय प्रभाव होते हैं। यह शरीर तन्त्र को शुद्ध एवं स्वस्थ रखने में सहायक होता है तथा मनुष्य के मनो-भावनात्मक अस्तित्व को नियन्त्रित, व्यवस्थित और निर्देशित करता है। प्राणायाम का अर्थ है नियन्त्रित लयबद्ध व्यवस्थित श्वसन। प्राण शरीर में सार्वभौम ब्रह्माण्डीय ऊर्जा की स्थूल अभिव्यक्ति है। ब्रह्माण्डीय ऊर्जा समस्त सचेतन अस्तित्व को जीवन प्रदान करती है। प्राणायाम इसी जीवनी-शक्ति के संरक्षण एवं समुचित वितरण की तकनीक है।

श्वास लेते समय श्वसन तन्त्र ऑक्सीजन लेता है और श्वास छोड़ते समय कार्बन-डाईऑक्साइड छोड़ता है। तन्त्र के ऑक्सीकरण से शरीर शुद्ध, हल्का और सक्रिय बनता है। जब तक श्वसन के इस विज्ञान को समुचित रूप से समझकर सही ढंग से इसका अभ्यास नहीं किया जाएगा तब तक श्वसन में असन्तुलन की सम्भावना रहेगी जिसकी मानसिक और भावनात्मक परिणति द्वन्द्वों एवं आवेगों में हो सकती है। असंख्य सुख-दुःख से भरा संसार हम पर हिंसक प्रभाव डालता है, और हम जीवन में अक्सर यथार्थ समाधान पाने में असमर्थ हो जाते हैं। मनुष्य पर प्राण के प्रभाव और मन एवं शरीर के सह-सम्बन्ध का सम्पूर्ण ज्ञान योग द्वारा होता है।

अतः योग के पास शारीरिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में देने के लिए काफी कुछ है तथा उसे वहाँ एक प्रभावशाली एवं वैज्ञानिक भूमिका निभानी है।

योग और मन

मन शरीर का बड़ा रहस्यात्मक अवयव है। यह सुख और दु:ख, दोनों का कारण है। *मन एव मनुष्याणां कारणं मोक्षबन्धयो:*–इस ज्ञान के होते हुए भी दार्शनिक और ऋषि इसका उपयोग करने में असमर्थ रहे हैं। मन वह सेवक है जो समस्त सूचनाएँ प्राप्त करता है एवं उनका उपयोग करता है और साथ-ही शारीरिक क्रियाओं को नियंत्रित करता है। यह विभिन्न भूमिकाओं में कार्य करता है। स्वचालित प्रतिवर्त क्रियाएँ और सुचिन्तित विचार, दोनों ही मानसिक तरंगों द्वारा प्रेरित होते हैं। जब तक हम तन्त्रिका-विज्ञान और कपाल-विज्ञान सम्बन्धी शोधों पर विचार नहीं करेंगे तब तक मन की गहराई तक नहीं पहुँचा जा सकता है।

अतीतकाल के ऋषियों द्वारा प्रतिपादित प्राचीन योग-विज्ञान हमें मन को उपयोग में लाने की प्रक्रिया बताता है। शापेनहावर ने एक बार लिखा था "हमारी इच्छाएँ अनन्त हैं और उनकी पूर्ति की संभावना सीमित है।" इच्छाओं में पकड़ने की शक्ति तो अधिक है, पर उपलब्धि कम है। सुखी जीवन को सुनिश्चित करने का तरीका है, "अपनी इच्छायें और आवश्यकताएँ न्यूनतम हों।" इच्छाएँ सगर्भा होती हैं, एक इच्छा से दूसरी इच्छा का जन्म होता है और यह प्रक्रिया अनवरत चलती रहती है। यह सत्य है। पूर्व के हमारे सन्त और दार्शनिक युगों से यही कह रहे हैं– *'मन एव मनुष्याणां कारणं मोक्षबन्धयो:'।* जो मन पर विजय प्राप्त कर लेता है वह सुख-दु:ख से ऊपर उठ जाता है।

किन्तु मन पर विजय कैसे प्राप्त करें? हम मानते हैं कि ऐसा केवल योग के द्वारा सम्भव है। इस पृथ्वी के बाहर कहीं शान्ति या मोक्ष नहीं है, सही मानसिक अनुशासन के द्वारा इसे अभी और यहीं प्राप्त किया जा सकता है।

योग के अद्वितीय ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा– *"मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय। निवसिष्यसि मय्येव अत उर्ध्वं न संशय:।"* मुझमें ही मन और बुद्धि को लगा दे। इसके उपरान्त तू मुझमें ही निवास करेगा, इसमें कुछ भी संशय नहीं है। इस प्रकार भगवान् ने कहा है कि अपने मानसिक व्यक्तित्व को ईश्वरीय व्यक्तित्व में मिला दो।

परमात्मा की प्राप्ति हेतु मन की मौज को रोकना होगा। मन पूर्णरूपेण शान्त एवं नीरव होना चाहिए। तभी ध्यान और चिन्तन की गहन अवस्था में आत्मा का प्रकाश अवतरित होता है। सरल शब्दों में, आत्मा या परम चेतना बोध के लिए एक ही मार्ग है–ध्यान और चिन्तन।

ध्यान का अभ्यास, अर्थात् मन का नियमन, एक कठिन कार्य है। फिर भी दृढ़ संकल्प और अनवरत अभ्यास ही सफलता का राजमार्ग है। आप एक या दो दिन में तो ध्यान को सिद्ध नहीं कर सकते हैं। साधक को अपनी विफलताओं से कभी निराश नहीं होना चाहिए। जब तक लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो, साधक को अपनी साधना में अनवरत लगे रहना चाहिए।

पारंगत हो या अपारंगत, सभी को ध्यान की आवश्यकता है। क्यों? मन एक झील के समान है, विचार की हल्की-सी हवा भी उसकी सतह को आन्दोलित कर देती है। अविरल विचार तरंगें तनाव उत्पन्न करती हैं, जो वृद्धावस्था को आमंत्रित करता है जिसके फलस्वरूप कम समय में ही शक्ति क्षीण होने लगती है। आदमी केवल रक्त से भरी बोतल, हड्डियों का गट्ठर और मांस का ढेर नहीं है; उसमें रुचियाँ और अरुचियाँ हैं, विश्वास हैं, भावनाएँ हैं। पालने से लेकर चिता तक वह रुचिकर अनुभवों से अपने जीवन की झोली भरता जाता है। इस प्रकार उसका मन संवेदनाओं, बोधों और धारणाओं का कबाड़खाना बन जाता है। ये सब उसकी दिव्य प्रकृति को पराजित कर देते हैं।

अगर ये अनुभव एक जन्म के होते तो मन के इन संस्कारों को धो डालना आसान होता, उसे पुन: कोरा कागज बनाया जा सकता था। परन्तु मनुष्य तो विगत अनेक जन्मों के कर्मों को भोगने हेतु पुनर्जन्म लेता रहता है, उसके पास तो अनादि वासनाओं का संचित विशाल भंडार रहता है, जिन्हें पूर्व जन्मों के संस्कार और अनुभव कह सकते हैं। ये सब उसकी परम चेतना को आच्छादित कर देते हैं और उन्हें झाड़-पोछ कर साफ करना, उसके नये जन्म के लिए उसका कार्य हो जाता है।

साधक को अपने वर्तमान और पूर्व जन्मों के संस्कारों से निबटना पड़ता है। साधक तो वही है जो जीवन के आसक्ति-पूर्ण मार्गों का यात्री रहा है, जहाँ उसका ध्यान इन्द्रिय भोग करने में ही लगा रहा है, पर अब उसने समझ लिया है कि वासनाओं का कोई अन्त नहीं है। इसलिए अब वह उन्हें छोड़कर लौटने की डगर पर चल पड़ा है।

राजयोग योग की ही एक शाखा है जिसने शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक प्रस्फुटन के लिए ध्यान की विधियों को खोजा है। ध्यान अचेतन मन में छुपी अव्यक्त और दमित भावनाओं को रिक्त करने की प्रक्रिया है। यदि इन दमित वासनाओं का उन्मूलन नहीं किया गया तो ये व्यक्तित्व-दोषों, शारीरिक और मानसिक व्याधियों, यथा मनोस्नायु विकृति, मनोविकृति, स्नायविक दोष और उच्च रक्तचाप आदि के रूप में प्रकट होंगी। वह व्यक्ति जिसने अपनी भावनाओं और संवेदनाओं पर अधिकार प्राप्त कर लिया है तथा अपने को क्षुद्र वासनाओं से ऊपर उठा लिया है, मृत्युपर्यन्त कभी अस्वस्थ नहीं हो सकता है।

अल्पकाल का भी ध्यान मनुष्य को स्फूर्ति प्रदान करता है। एकाग्रता के अभ्यास के समय मन विश्रान्ति का अनुभव करता है। ध्यान करते समय मन की ऊर्जा को नष्ट होने से बचाने के लिए मन को बार-बार एक ही विषय पर लगाये रखने का सतत् प्रयास करना होता है। एक विचार से दूसरे विचार पर जाने और भिन्न-भिन्न आवृत्तियों की तरंगें उत्पन्न करने की बजाय यह मन एक ही विषय पर चक्कर लगाता रहता है और फलस्वरूप समान आवृत्ति की तरंगें उत्पन्न करता है। ध्यान की यह साधना मानसिक ऊर्जा में मितव्ययिता लाती है। यह शरीर को शान्त एवं नियन्त्रित करता है, इससे लयबद्ध स्पन्दन उत्पन्न होते हैं, जो शरीर और मन दोनों को शान्त करते हैं। ध्यान मन की तेजस्विता को वापस लाता तथा दिनभर की निरर्थक और लक्ष्यहीन चिन्ता और दु:खद विचारों के कारण हुई क्षति की पूर्ति करता है।

इस प्रकार ध्यान अतीत के संस्कारों को साफ करने के साथ ही नये संस्कारों का संचय नहीं होने देता है। संसार में मिलने वाले दु:खद आघातों के विरुद्ध यह एक उपयोगी एवं समर्थ रणनीति का काम करता है। जीवन तो एक संघर्ष है, जिसमें मन के साथ-साथ शारीरिक सामर्थ्य की वृद्धि से ही विजय प्राप्त की जा सकती है। योग एक जलती भट्ठी है जो मन और शरीर को एक नया स्वरूप देती है, जिससे संसार के उपद्रवों और आँधियों का सामना करने

की पर्याप्त क्षमता विकसित होती है। प्रत्येक व्यक्ति को साहस और धैर्य के साथ जीवन के समुद्र को पार करना है। योग निश्चित रूप से मन को नियन्त्रित रखने की निश्चित विधियाँ प्रस्तुत करता है एवं व्यक्ति स्वयं को साहस और दृढ़ निश्चय से सज्जित करता है, जिससे वह जीवन का दृढ़ता से सामना करते हुए अपनी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करे।

यह सर्वमान्य तथ्य है कि मन एवं शरीर परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं। मानसिक व्याधियों से शारीरिक रोग उत्पन्न होते हैं तथा इसके विपरीत भी होता है। हम अपनी इन्द्रियों को भौतिक तुष्टि हेतु इधर-उधर भटकने देते हैं। हम अपने शरीर से अत्यधिक तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं, जिससे मनोस्नायु रोग और निराशा उत्पन्न होती है। योग हमारे व्यक्तित्व के पुनर्निर्माण के उपाय प्रदान करता है। यह इन्द्रियों को उनके विषयों से हटाता है, और उसे मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित मध्य-कक्षा (अवचेतन) में ले जाता है। जब हम ध्यान के द्वारा अपने अवचेतन से सम्पर्क स्थापित करते हैं तब गहराई में स्थित हमारे संस्कार एक-एक कर ऊपर सतह पर आते हैं तथा धीरे-धीरे, पर निश्चित रूप से विदा होते जाते हैं। यह विधि पूर्णतया आधुनिक मनोचिकित्सीय अभ्यासों के अनुरूप है। अन्तर इतना ही है कि यहाँ अपने मनोचिकित्सक हम स्वयं होते हैं।

आधुनिक सभ्यता ने आदमी को असामान्य बना डाला है। वह शारीरिक और मानसिक रूप से रुग्ण है। वह पीड़ा को गले लगाता है और विषादमय विचारों में उलझा रहता है। दवा थोड़ी देर के लिये राहत भले दे दे, नीरोग तो नहीं कर पाती है। गहरे ध्यान के द्वारा ही हम मानसिक, शारीरिक और भावनात्मक तनावों से मुक्ति तथा विश्व को आक्रान्त करने वाले रोगों से छुटकारा पा सकते हैं।

ध्यान के उद्देश्य

ध्यान आत्म-साक्षात्कार का मार्ग है। पर यदि आप ध्यान करने बैठें तो यह बड़ा कठिन प्रतीत होगा। अनेक समस्याएँ सामने आयेंगी। ध्यान किया कैसे जाए, यह आपकी प्रथम समस्या हो सकती है। इसमें रुचि रखने वाले लोग भी सामान्यतया इसकी विधियों से प्राय: अनभिज्ञ रहते हैं। शारीरिक चेतना को भूल कर लम्बे समय तक एक वांछित विषय पर मन को लगाये रखना आसान कार्य नहीं है। मन पर अधिकार एक दिन में नहीं हो सकता। कोई भी शिक्षण-संस्था नामांकन के दिन ही योग्यता का प्रमाण-पत्र तो नहीं दे सकती है। ध्यान के क्षेत्र में थोड़ी भी उपलब्धि प्राप्त करने में लम्बा समय लगता है। ध्यान एक बड़ा अस्पष्ट शब्द है, जो नये-नये साधक को अपने कार्यक्रम का कोई अनुमान नहीं होने देता है।

ध्यान मानसिक अनुशासन का एक अभ्यास है। यह मन को वांछित लक्ष्य की दिशा में अनुशासित एवं निर्देशित करता है। मन को अनुशासित करने का यह एक आत्म तरीका है। मन की सनक और तरंगों को नियंत्रित करने का यह एक उपाय है। जो लोग विभिन्न भावनाओं, जैसे, परेशानी, चिन्ता, अनिर्णय आदि अन्तर्द्वन्द्वों के शिकार हैं, वे ध्यान के अभ्यास से काफी लाभान्वित होते हैं। यह आत्मावलोकन का अवसर प्रदान कर अन्तर्तम् की व्याधियों को दूर करता है।

आज का आदमी दिनभर बहिर्मुखी ही रहता है। उसे अपने अन्दर झाँकने का समय ही नहीं मिल पाता है, जो अत्यन्त आवश्यक है। व्यस्ततम व्यक्ति को भी अपने शरीर की शुश्रूषा के लिए समय खोजना पड़ता है। इसी प्रकार आपकी अन्तरात्मा प्रतिदिन थोड़ा समय चाहती है। यदि आपके भौतिक शरीर को शौच, स्नान, भोजन और वस्त्रों की आवश्यकता हो सकती है तो

क्या आपके मनोशरीर की कुछ नित्य आवश्यकताएँ नहीं हो सकतीं? आपका मस्तिष्क एक क्षण का भी विश्राम लिए बिना जीवन के तनावों और दबावों का सामना करता रहता है। अत: उसकी भी सावधानीपूर्वक देख-भाल की आवश्यकता है। यंत्रों को भी काम के उपरान्त कुछ समय विश्राम दिया जाता है। क्या आप योग की विश्रान्ति एवं पुनर्जीवनप्रदायी विधियों के अतिरिक्त किसी एक भी विधि का नाम ले सकते हैं, जो तन्त्रिकाओं के तनाव दूर कर उन्हें आराम दे सकती है? मन में एकत्र विचारों के कचरे को साफ करने के लिए ध्यान के अतिरिक्त कोई अन्य विधि नहीं है।

तन्त्रिका-तन्त्र के रोगों या उनके कार्यों में गड़बड़ी, जैसे, स्नायुमनोविकार, मन:श्रान्ति (न्यूरेस्थेनिया) आदि का ध्यान द्वारा सफलतापूर्वक उपचार किया जा सकता है। व्यावहारिक ध्यान चिकित्सा क्षेत्र में भी योगदान दे सकता है। साइकोन्यूरोसिस का, जिसके विभिन्न मनोरोग उन लोगों को होते हैं जो वास्तव में पागल नहीं हैं, सफल उपचार करने में ध्यान सक्षम है। ध्यान अनेक रोगों की रोकथाम के साथ-साथ उनका उपचार भी करता है। मनोरोगों का भी सफलतापूर्वक उपचार ध्यान के द्वारा हो सकता है।

ध्यान अन्तरात्मा को जाग्रत करता है, ध्यान द्वारा मन की अन्तर्निहित, अप्रयुक्त मानसिक क्षमताओं या मस्तिष्क-केन्द्रों को जाग्रत किया जाता है। यदि मन को विगत अनुभवों की स्मृतियों से थोड़े क्षण के लिए भी मुक्त कर दिया जाए, यदि वह पूर्णतया तनावरहित और एकाग्र हो जाय, तब उसकी ऊर्जा को अज्ञात, अदृश्य, और अश्रुत क्षेत्रों की खोज की ओर निर्देशित किया जा सकता है। एकाग्र मन की धार से सूक्ष्म रूप से तराशी गई चेतना में कुछ अतीन्द्रिय ज्ञान का उदय भी होता है। यदि मन एक समस्या को लेकर, उस पर घण्टों, दिनों, महीनों अथवा वर्षों तक चिन्तन करता रहे, तो मन को एक नयी रोशनी मिलती है, नयी राह मिलती है, और समस्याओं का समाधान भी प्राप्त होता है। यही महान् वैज्ञानिकों ने समझा और प्राप्त किया है। गहन, एकाग्र और केन्द्रित ध्यान ज्ञान अथवा जीवन के नये परिदृश्यों को उद्घाटित करता है।

मनुष्य अभी भी मन के सभी उतार-चढ़ावों से अवगत नहीं है। महान् वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है कि अन्तिम सत्य का अभी तक पता नहीं चला है। ध्यान अनेक रोगों, जैसे—उच्च रक्तचाप, दर्द आदि को दूर करने में सहायक हो सकता है। इसके उपचारात्मक पक्ष पर ऊपर भी चर्चा की गयी है।

महान् मनोवैज्ञानिक फ्रायड ने भी कहा है कि शारीरिक स्तर पर व्यक्त होने वाली घटनाएँ भी अवचेतन इच्छाओं की ही अभिव्यक्तियाँ हैं। यदि यह सत्य है तो फिर सारे दु:ख, रोग और व्याधियों के मूल में फ्रायड द्वारा प्रतिपादित 'ईड' ही है। प्राचीनकाल के भारतीय मनोवैज्ञानिक भी इस विचार से सहमत हैं, उनकी शब्दावली भले ही भिन्न हो। फ्रायड के 'ईड' में 'चित्त' की ही झलक मिलती है, जो समस्त वासनाओं और आद्य मूल-वृत्तियों का भंडार है। सारी व्याधियाँ मन से ही प्रारम्भ होती हैं। मात्र यह भाव कि "मुझे सर्दी हो सकती है, मुझे अमुक बीमारी हो सकती है", शरीर को रोगाणुओं के स्वागत के लिए तैयार कर देता है।

ध्यान इच्छा-शक्ति को विकसित करता है और मन को गलत विचारों, भय और सनक के चंगुल से मुक्त कर देता है। उदाहरणस्वरूप, यह तर्क दिया जा सकता है कि एक बच्चा जिसके विचार परिपक्व नहीं हैं, रोगाक्रान्त क्यों हो जाता है। प्रयोगों ने प्रमाणित किया है कि बच्चे का केवल एक मनोवैज्ञानिक अस्तित्व होता है। कम अवस्था के बच्चे में भी अपने आस-पास के वातावरण एवं पर्यावरण के प्रति रुचि एवं ग्रहणशीलता विकसित रहती है। यह अलग बात है कि बच्चे ने अभिव्यक्ति की कला सीखी है या नहीं। बच्चा अनुभव तो करता है, पर अनुभव की अभिव्यक्ति नहीं कर पाता। बच्चों के व्यवहारों के गहन अध्ययन ने प्रमाणित कर दिया है कि वे सयाने लोगों की अपेक्षा अधिक संवेदनशील होते हैं। बच्चे सहज ज्ञान से प्रेम, क्रोध और घृणा आदि को समझ जाते हैं। वे रोग से प्रभावित हो जाते हैं, क्योंकि उनके शरीर और मन, दोनों ही शैशवावस्था में हैं। शारीरिक एवं मानसिक प्रौढ़ता आने के पश्चात् वे मानसिक रूप से रोगाणुओं का प्रतिरोध करना सीख जायेंगे।

ध्यान की परिणति समाधि है, जो मानव मन के विकास की चरमावस्था है। एकाग्रता, चिन्तन एवं ध्यान के द्वारा व्यक्ति मन की सीमाओं का अतिक्रमण कर जाता है। मन और शरीर दो काँटे हैं जो मनुष्य की आत्मा में चुभते हैं और दु:ख एवं पीड़ा देते हैं। यदि मन और शरीर, दोनों लुप्त हो जाएँ तो न दु:ख रहेगा, न पीड़ा; न शोक, न अज्ञान; तब आत्मा की शक्ति को कोई बंधन में डालकर सीमित नहीं कर पायेगा। पिंजड़े से निकली चिड़िया अनन्त आकाश में उड़ान भर सकती है। उसी प्रकार जब चेतना या आत्मा मन और शरीर की सीमाओं का अतिक्रमण कर जाती है, उसे परमानन्द, परमशक्ति और परम ज्योति का अनुभव होता है। वस्तुत: यह कहना अनुचित होगा कि

उसे अनुभव होता है। सही अर्थों में कहा जाय तो कोई द्वैत नहीं रह जायेगा, द्विविध चेतना–ज्ञाता और ज्ञेय का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। चेतना एक हो जायेगी, वह परम चेतना या ब्रह्माण्डीय चेतना में विलीन हो जायेगी।

यदि आप बाह्य विषयों एवं इच्छाओं के प्रति अनासक्ति का अवलंबन लेकर निष्ठापूर्वक साधना करते हैं और मन को लोकोत्तर विषयों की ओर मोड़ने में सफल रहते हैं तो मन जीवन की क्षुद्र घटनाओं के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करने की पुरानी आदत को छोड़ देगा।

समाधि–योग साधना की परिणति

आत्म विस्मृति, हर्षोन्माद या चेतना-स्थगन समाधि नहीं है। समाधि परम समचित्तता है। समाधि के विषय में अनेक गलत धारणायें हैं। कुछ लोगों के अनुसार समाधि की अवस्था में व्यक्ति का शरीर पत्थर की तरह कठोर हो जाता है, नाड़ी-गति मन्द हो जाती है, चयापचय क्रिया रुक जाती है। स्थगित प्राण-संचरण उच्च विज्ञान है जो कुछ योगियों को सिद्ध होता है, पर वह भी समाधि नहीं है। स्थगित प्राण-संचरण की अवस्था में चेतना या ज्ञान नहीं रहता। अवचेतन तत्त्वों का भंडार प्रसुप्त रह जाता है पर वह नि:शेष नहीं होता है।

यदि समाधि का अर्थ मात्र शरीर की स्थिर स्थिति और पूर्ण अचेतनता है तो बहुत ही कम साधक इसे प्राप्त करने में सफल होंगे। जो व्यक्ति चेतन और अवचेतन शक्तियों को प्रसुप्त रखने में समर्थ है वह प्रशंसनीय है, परन्तु इसका योग से या सामान्य मनुष्य से कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि समाधि की प्राप्ति हमारे पेशीय, भावनात्मक और अन्य तनावों को समाप्त नहीं कर सके; यदि यह शान्ति, शक्ति और ज्ञान प्रदान नहीं कर सके; यदि यह हमारी मानसिक कुण्ठाओं, द्वन्द्वों, खण्डित-मनस्कता और अन्य मनोवैज्ञानिक गड़बड़ियों को दूर नहीं कर सके तो यह निश्चित रूप से समाधि नहीं है।

फिर समाधि क्या है? क्या हर किसी को समाधि की उपलब्धि हो सकती है? क्या समाधि पूर्ण-सजगता या पूर्ण-विस्मृति है? क्या समाधि पूर्ण-स्थगन, विस्मृति, अचेतनता, जड़ता या परम चेतना है?

मन चेतना के मानसिक स्वरूपों का गट्ठर है। जब चेतना के सभी प्रतिरूप अस्वीकृत और विनष्ट हो गये हों, तब चेतना का जो अन्तिम स्वरूप बच जाता है वही समाधि है और यहीं पर मनुष्य आन्तरिक शान्ति का अनुभव करता है।

आधुनिक मानव अपने जीवन में प्रतिदिन तनाव का अनुभव करता है। शहरों का व्यस्त यान्त्रिक-जीवन, औद्योगिक विकासजनित भीड़-भाड़ और पारिवारिक समस्याएँ, ये सभी तनाव बढ़ाने के आधारभूत कारण हैं। तनाव वह अवस्था है जिसमें दो शक्तियाँ विपरीत दिशाओं में खींचती हैं। जब आप किसी कार्य को एक विशेष प्रकार से करना चाहते हैं तब कोई आन्तरिक शक्ति आपको वैसा करने से रोकती है। यही तनाव है, मनोविश्लेषक इसे अहम् और परा-अहम् में द्वन्द्व के रूप में वर्णित करते हैं।

हमारे अन्दर दिव्य और अशुभ, दोनों ही तत्त्व हैं। इन्हीं दिव्य और अशुभ शक्तियों का संघर्ष वास्तविक तनाव है। मनोवैज्ञानिक आपको कतिपय विधियों से विश्रान्त कर सकते हैं। परन्तु सुषुप्त, अवचेतन और अचेतन प्रवृत्तियों का अपरिमित भंडार हमारे भीतर है, जिन्हें अनादि वासना कहते हैं। मनोवैज्ञानिक इस भंडार को रिक्त करने में कोई सहायता नहीं कर सकते। यहीं पर योग हमारा सहायक होता है। इसका उपचारात्मक, मानसिक, आध्यात्मिक, रहस्यमय और अतीन्द्रिय महत्त्व है।

यदि आप अपना तनाव दूर करना चाहते हैं, तो प्रथम चरण में आपको अपने को विश्रान्त एवं शिथिल करना होगा। तनाव के प्रथम, अन्तिम और मूल कारण का पता लगायें। हमारे अन्तर की दिव्य एवं आसुरी शक्तियों का सतत् संघर्ष ही तनाव है। यह शैतान और भगवान् के बीच का संघर्ष है। यह देवासुर संग्राम है। योग के अभ्यास से मानसिक, पेशीय और भावनात्मक तनाव दूर होते हैं तथा एक स्थिति आती है जहाँ हमारे अन्दर यह शाश्वत संघर्ष समाप्त हो जाता है। यह उदात्त समत्व की सर्वोच्च अवस्था है। निलम्बित सजीवता को इससे कुछ लेना-देना नहीं है। जीवन को शक्तिशाली बनाने, प्रसुप्त आन्तरिक प्रतिभा को जाग्रत करने, अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने एवं 'तृतीय नेत्र' (अन्तर्बोध-केन्द्र) को सक्रिय करने में योग सहायक है। यह ऊर्ध्व चेतना की अवस्था है।

जब आप आँखें बन्द करते हैं, तब अंधकार और शून्यता की अनुभूति होती है, पर समाधि की यौगिक अवस्था में आप आन्तरिक एवं बाह्य, दोनों रूपों में सजग और चैतन्य रहते हैं। फिर भी यह उच्चतम समाधि नहीं है। उच्चतम समाधि मात्र चेतना का सन्तुलन नहीं है, यह मन का सन्तुलन भी है। यह बौद्धिक साम्यावस्था नहीं है। कभी-कभी आपको प्रतीत होता है कि कोई तनाव नहीं है, पर उस समय तनाव चेतन स्तर से अवचेतन या अचेतन में उतर गया रहता है।

जब व्यक्ति ध्यान के उन्नत धरातल पर पहुँचता है, तब जिस अधिकतम तनाव का अनुभव करता है वह उसके सबसे आन्तरिक शरीर में होता है। जीवात्मा भटकाव या निर्वासन की स्थिति में रहती है। बहिर्मुखी दस इन्द्रियों ने जीवात्मा की शान्ति छीन ली है। जीवात्मा बुद्धि से, गतिशीलता से तथा जड़ता से अस्तित्व में आती है। जड़ता के कारण जीवात्मा सांसारिकता में भ्रमण करती है। जीवात्मा माया, मोह आदि के पीछे भागती है और शान्ति के चार आवश्यक तत्त्वों को भूल जाती है। सत्संग, आत्मावलोकन, आध्यात्मिक साधना और आन्तरिक मौन, ये चारों शान्ति की खोज की दिशा में बढ़ने की राहें हैं।

इसी बिन्दु पर वास्तविक तनाव प्रारम्भ होता है। आपने अभी तक संसार में सुख पाया है, तृष्णा, लालसा और वासनाओं को बढ़ाया है। अब आपका संघर्ष है आलस्य, प्रमाद, अकर्मण्यता से। आपको मन की अज्ञात शक्तियों और अपनी चेतना में हो रहे द्वन्द्वों से जूझना है। भक्ति, आध्यात्मिक ओजस्विता, निरन्तर सजगता एवं अहर्निश सतर्कता प्रगति के लिए आवश्यक हैं। आपकी आध्यात्मिक साधना अविरल और उसकी गति सदा एक समान बनी रहनी चाहिए।

कभी-कभी तो सतर्कता और सावधानी भी विफल हो जाती हैं। आलस्य के प्रभाव से तथा इन्द्रियों के प्रबल होने से सतर्कता ढीली पड़ जाती है। यद्यपि मछली, हाथी, साँप और हिरण की मात्र एक इन्द्रिय सक्रिय रहती है, फिर भी वही उनकी मौत का कारण बन जाती है, पर आदमी की तो पाँच इन्द्रियाँ शक्तिशाली हैं। अब उस आदमी की दशा सोचिए जो अपने को इन पाँच इन्द्रियों के हवाले कर देता है।

व्यक्ति को आध्यात्मिक साधना गंभीरतापूर्वक एवं बिना टाल-मटोल के करनी चाहिए। यदि आप अपने आध्यात्मिक अभ्यास के कार्यक्रम को स्थगित करते हैं तो वह आपके जीवन का अंग कभी नहीं बनेगा। सतत् सतर्कता और आध्यात्मिक सजगता के अभाव के कारण आध्यात्मिक व्यक्तित्व की उपेक्षा हो जाती है। अत: सदा सजग रहिए। कामुकता, क्रोध और लालसा हमारे अन्दर छुपे भयानक डाकू हैं जो हमारे दिव्य ख़ज़ाने को लूट लेते हैं। अत: सदा सजग रहिए।

आन्तरिक तनाव से मुक्ति कैसे पायी जाए? जब तक आप योगाभ्यास नहीं करते, तब तक अपने मन को अन्तर्मुखी और अपनी इन्द्रियों को

नियन्त्रित मत कीजिए, अन्यथा आप तनावों से मुक्त नहीं हो पायेंगे। इन्द्रियाँ और मन अविनाशी हैं। बिना कामना के मानसिक सक्रियता नहीं आती है। लालसा और वासना ही शुभ और अशुभ के मध्य युद्ध के मूल कारण हैं। अत: इन्द्रियों के दमन एवं मन तथा इन्द्रिय वासनाओं को दबाने का कोई अर्थ नहीं है। यदि आप आध्यात्मिक शान्ति और परम समचित्तता या परम शाश्वत शान्ति चाहते हैं तो आपको आसक्ति का विनाश एवं अनासक्ति को सिद्ध करना होगा। तब किसी प्रिय वस्तु की ललक और अप्रिय वस्तु को तिरस्कृत करने की स्थिति नहीं होनी चाहिए। शारीरिक, मानसिक या बौद्धिक अनासक्ति आपकी बहुत ज्यादा सहायक नहीं होगी, आध्यात्मिक अनासक्ति ही वास्तविक अनासक्ति है।

जब अनादि वासना का भंडार रिक्त हो जाता है, तब पूर्ण सन्तुलन एवं शान्ति की अवस्था आती है। तब आप जो हैं वह हो सकेंगे। अभी आप जैसे चैतन्य हैं, वैसे ही सभी वस्तुओं के प्रति चेतनता रखेंगे। समाधि परम चेतना, प्रतिभा, ज्ञान और सजगता है। जिस प्रकार आप जाग्रत अवस्था में लोगों को जानते हैं वैसे ही समाधि में सबको जानेंगे एवं पहचानेंगे। आपमें सामान्य विवेक-शक्ति रहेगी, परन्तु आपका मानसिक, बौद्धिक, राजनैतिक, सामाजिक और यौन-पीलिया तथा आपके शारीरिक, मानसिक और अन्तत: बौद्धिक संकट भी समाप्त हो जायेंगे।

समाधि के पश्चात् व्यक्ति निष्क्रिय नहीं हो जाता, वरन् अत्यन्त शक्ति सम्पन्न एवं सक्रिय हो जाता है। कई दिनों तक अनवरत परिश्रम करने पर भी व्यक्ति थकान नहीं अनुभव करता। व्यक्ति को प्रशान्तक और नींद की गोलियों की जरूरत नहीं पड़ती है। सुख या दु:ख की किसी घटना का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। सुख-दु:ख, जन्म-मृत्यु, लाभ-हानि, मान-अपमान, प्रशंसा-निन्दा, ख्याति-कुख्याति में समचित्तता बनी रहती है। व्यक्ति वर्णनातीत शान्ति से पूर्ण रहता है। आपने गहरी निद्रा की शान्ति का अनुभव अवश्य किया है, जिस अवधि में आप सुखद अनुभूति की गोद में निश्चिन्त पड़े रहते हैं, तथा आपको कुछ भी अशान्त नहीं करता है। समाधि और गहरी निद्रा में यह अन्तर है कि निद्रा में आप अचैतन्य रहते हैं, जबकि समाधि में आप सभी चीजों के प्रति चैतन्य रहते हैं और इस स्थिति में भी आप शान्त, सम और प्रसन्न रहते हैं। इस उच्चतम आनन्द, शान्ति और आनन्द की अवस्था की कल्पना करके तो देखें।

दैनिक जीवन की आँधियों का सन्तुलित मन से सामना करने हेतु प्रत्येक व्यक्ति को इसकी उपलब्धि की आवश्यकता है। आपको ऐसी शक्ति चाहिए जिससे आप काफी देर तक काम करने पर भी थकान अनुभव नहीं करें। अगर आप आराम करते हैं तो आपको अवश्य थकान का अनुभव होगा, यदि आप भोजन करते हैं तो आपको भूख भी अवश्य लगेगी, आप दवा लेते हैं तो अवश्य ही अस्वस्थ होंगे। अपने शरीर, उसके नियमों को और उन नियमों को बनाने वाले को समझिये। बिना भोजन किये और सोये रहा जा सकता है, परन्तु यह समाधि प्राप्त करने के पश्चात् ही संभव है, उसके पूर्व नहीं।

समाधि के विषय में ठीक ही कहा गया है "यह पूर्णता का उत्कर्ष है, जिसकी श्रद्धापूर्वक इच्छा करनी चाहिए।" हम समाधि को मात्र एक अभ्यास नहीं मानते। हमें तो चिरस्थायी समाधि के लिए प्रयत्न कर उसे अपने जीवन में साकार करना चाहिए, जिसे 'निष्प्रयास और उपयुक्त समाधि कहते हैं', हमें उसकी उपलब्धि होनी चाहिए।

आधुनिक मनुष्य ने अनेक वैज्ञानिक अन्धविश्वास विकसित कर लिए हैं। उनसे हमें पीछा छुड़ाना है। कोई भी विचार बिना समझे-बूझे भी प्रचलित हो जाता है। योग को अपने जीवन में स्वीकार कीजिए। योग जीवन की एक पद्धति है और आने वाले कल की संस्कृति है। यह आवश्यक नहीं कि किसी मूर्ति पर ध्यान करने के लिए मन्दिर में जाएँ। जहाँ भी आप दृष्टि डालें, उत्कृष्ट समत्व के भाव से देखें।

सांसारिक उपलब्धियों के लिए भी आपको योग को अपनाना होगा। यह आपकी सांसारिक महत्त्वाकांक्षाओं को पूरा करेगा, और आपकी आध्यात्मिक प्यास भी मिटायेगा। चाहे आपको सुखद वैवाहिक जीवन, सुन्दर स्वास्थ्य, समृद्धि या आध्यात्मिक ज्ञान की कामना हो, योग आपकी सहायता करेगा। योग का प्रथम चरण है सन्तों का सत्संग और सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय। इसकी चरम परिणति है समाधि। यदि आप योग का अभ्यास नहीं करेंगे तो आप सदा अशान्त रहेंगे। आपके आन्तरिक व्यक्तित्व में कुछ गड़बड़ी हो सकती है। भावनात्मक, पेशीय और मानसिक तनावों से मुक्ति का पहला और अन्तिम उपाय योगाभ्यास ही है। उसके बाद ही आपको सभी तनावों से मुक्ति मिलेगी और आप ऐसी स्थिति में पहुँच जायेंगे जहाँ आनन्द एवं हर्षातिरेक में कह उठेंगे– 'मैं सुखी हूँ, मैं सुखी हूँ, मैं सुखी हूँ।'

योग दर्शन

भूमिका

हम एक जाग्रत युग में, मानव क्षेत्र की सतत् क्रान्ति के युग में रह रहे हैं। विज्ञान प्रौद्योगिकी युग में प्रवेश कर चुका है और सभ्यता मानव-चिन्तन में महान् क्रान्ति के साथ भौतिक उत्कर्ष के शीर्ष पर पहुँच गई है। फ्रायड के मनोविज्ञान ने अपने नव-फ्रायडियन समूह के साथ मानव व्यक्तित्व के नये आयामों का निरूपण किया है। जीवविज्ञान, भौतिकी, रसायनशास्त्र, ज्योतिष, खगोल-विज्ञान, नीतिशास्त्र, दर्शन और मनोविज्ञान में ज्ञान के नये परिदृश्य खुल गये हैं।

इतिहास पर एक विहंगम दृष्टि इस तथ्य को प्रकट करती है कि प्रत्येक युग में मनुष्य यही सोचता है कि वह एक विलक्षण युग में रह रहा है। तथापि यह तो निर्विवाद है कि इस शताब्दी ने प्रगति को उस बिन्दु तक पहुँचा दिया है जहाँ से लौटा नहीं जा सकता। इसलिए यह और भी आवश्यक हो गया है कि प्रगति के साधनों एवं परिणामों को समेकित और संरक्षित किया जाए, न कि अधिक उपलब्धियों की ऐसी अंधी दौड़ में लगा जाय जिनका मनुष्य अपने हित में उपयोग न कर सके। सही परिप्रेक्ष्य और नेकनियति से मानसिक क्रान्ति और औद्योगिक क्रान्ति में तालमेल होना चाहिए। यहीं पर प्राचीन मूल्यों के पुनरुत्थान की प्रबल आवश्यकता का अनुभव होता है। तथ्य बदलते रहते हैं, पर मूल्यों में परिवर्तन नहीं होता है। अत: अच्छे जीवन एवं सुव्यवस्थित प्रगति की अवधारणा के जो मौलिक तत्त्व पूर्वकाल में महत्त्वपूर्ण थे, वे आज भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं, और सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में आये परिवर्तनों से वे दूषित नहीं हुए हैं। सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् अभीष्ट है,

पर इसकी भिन्न-भिन्न प्रकार से व्याख्या होती रही है, फिर भी यह मानव मात्र के परम लक्ष्य के रूप में आज भी अस्तित्व में है।

योग, अपने दर्शन और अभ्यास-विधि, दोनों ही रूपों में इस लक्ष्य की प्राप्ति का साधन है। अत: योग को विस्मृति के गर्भ से निकाल कर आज मानवीय ज्ञान की योजना में अपने पूर्व के गौरवमय पद पर प्रतिष्ठित करना परम आवश्यक है।

योग शब्द का उपयोग, दुरुपयोग और दुष्प्रयोग हुआ है। कुछ लोगों के लिए यह पुरावशेष है। दूसरों के लिए यह विक्षिप्त करने वाला उलझाव है। योग एक प्रचलित शब्द है, और प्राचीन भी है। पतञ्जलि ने जिस योग-दर्शन को सूत्र-बद्ध किया है वह वास्तव में सांख्य तत्त्व-मीमांसा का सुव्यवस्थित रूप है, परन्तु इससे भी पूर्व अनेक हिन्दू-शास्त्रों एवं बौद्ध साहित्य में योग शब्द का उपयोग हुआ है। यौगिक सिद्धान्त की पल्लवग्राही चर्चाओं से योग के बारे में भ्रान्तियाँ व्याप्त हैं। योग-दर्शन एवं तत्त्व-मीमांसाओं को छोड़ योगासनों को ही (जो योग के ही अंग हैं) अधिक महत्त्व देने के कारण योग कालक्रम में शरीर-सौष्ठव प्रदान करने वाला साधन मात्र रह गया है। विरक्त, एकाकी एवं समाज से कटे जीवन के रूप में योग की अरुचिकर व्याख्या के कारण लोग योग शब्द का उपयोग करने में भी संकोच का अनुभव करने लगे हैं। योग के सम्बन्ध में मिथ्या धारणायें अभी भी प्रचलित हैं और उनमें कुछ तो इतनी बचकानी हैं कि उन्हें गंभीरता से लिया भी नहीं जा सकता है। फिर भी, इन भ्रामक व्याख्याओं के कुहरे को हटाना होगा और यौगिक मूल्यों को पुनर्प्रतिष्ठित करना होगा।

मनुष्य एक तत्त्वदर्शी प्राणी है। वस्तुत: प्राणियों में मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जिसमें पूर्णता की भूख और प्यास है। मानव इतिहास इस बात का साक्षी है कि हम प्रत्येक स्तर पर सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक संस्थाओं को उन्नत एवं श्रेष्ठ बनाने का प्रयास करते हैं, जिससे हम दुर्गुणों से मुक्त हों और स्वाध्याय करते हुए परम चेतना की प्राप्ति हेतु समर्पित जीवन जी सकें। योग दर्शन का यही उद्‌देश्य है, परन्तु उसकी प्रक्रिया मानव-व्यक्तित्व के सभी स्तरों पर निश्चित की गई है। योग दर्शन की मान्यता है कि शरीर आत्मा का निवासस्थल है और मन के समान ही महत्त्वपूर्ण है; अतएव योग दर्शन की मान्यता है कि शरीर-क्रिया-विज्ञान भी मनोविज्ञान के समान ही महत्त्वपूर्ण है। शारीरिक अनुशासन से प्रारम्भ कर योग मानसिक व्यवस्था के रूपान्तरण

तक जाता है, जिसके लिए मन के अनेक प्रकार के अभ्यास विहित हैं। स्वस्थ शरीर एवं तेजस्वी मन के पूर्ण समन्वय के बाद ही जीवात्मा और परमात्मा का उत्कृष्ट संयोग हो सकता है।

यह प्रमाणित करने के लिए कि अच्छे अनुशासन से अच्छा स्वास्थ्य उपलब्ध होता है, शरीर के स्तर पर अतिरिक्त चिन्तन या मानसिक ऊर्जा खर्च करने की जरूरत नहीं है। जो भोजन आपका पेट खराब कर दे, उससे बचना कोई आत्म-त्याग नहीं है। जो सुस्वादु भोजन आपको बीमार कर दे, उसको छोड़ देना कोई त्याग नहीं है। अपनी पेशियों को लचीला, नेत्र ज्योति को तेज और रक्त-संचार-प्रणाली को शुद्ध रखने हेतु यदि किसी व्यक्ति को योगाभ्यास करने कहा जाए तो यह कोई असहनीय दबाव नहीं होगा। अंधा स्वार्थ भी व्यक्ति को कम-से-कम इस प्रकार के शारीरिक संस्कार की प्रेरणा तो देगा ही। मनुष्य का यही दुर्भाग्य है कि वह इस प्रकार की विलक्षण और स्वावलम्बी शरीर-संरचना को प्राप्त कर इतना निश्चित मान लेता है कि जब तक यह ठीक से काम करता है तब तक इस मशीन की देखभाल करना उसकी जवाबदेही नहीं है।

गहन-मनोविज्ञान ने कहा है कि अतीन्द्रिय नियतिवाद का एक स्वरूप होता है जो हमारे सभी विचारों, कर्मों और वाणी को नियन्त्रित करता है। वस्तुत: आधुनिक मनोवैज्ञानिक चिन्तन में घटित क्रान्ति निर्विवाद रूप से इस निष्कर्ष पर आ गयी है कि हमारा चेतन मन अचेतन महाकाय के समक्ष अत्यन्त बौना है। भारत के सन्तों और महात्माओं ने इसी सत्य को एक वैज्ञानिक सूत्र के रूप में तो नहीं, पर अन्तर्दृष्टि से प्राप्त सत्य के रूप में घोषित किया है। जीवन की प्रक्रिया में मानव व्यक्तित्व में त्रुटियाँ बढ़ती चली जाती हैं। यदि व्यक्ति अपनी मानसिक संरचना को समझने का प्रयास करे तो इन त्रुटियों में सुधार हो सकता है।

यहीं पर अपनी बदलती व्याख्याओं के बावजूद पतंजलि द्वारा वर्णित योग-विद्या सहायक होती है। पतंजलि के सिद्धान्त और गहन मनोविज्ञान के सिद्धान्त में पूर्ण सामंजस्य है। फ्रायड कहता है कि अचेतन कीचड़ है, पर यह भी समझना चाहिए कि कीचड़ से ही कमल विकसित होता है। मानव मन की विस्तृत संरचना निश्चित रूप से जटिल है। पर अपने साथ सतत् निष्ठावान होकर व्यक्ति स्वयं को इतने स्पष्ट रूप से या इससे भी अधिक स्पष्ट देख सकता है जितने स्पष्ट रूप से आइने में अपनी छवि देखता है। मन

के लिए विहित योगानुशासन इस प्रकार के अनुभव के लिए अवश्य निर्देशित करते हैं। मिल्टन के शब्दों में यह 'वासना रहित एक निर्मल मन' का निर्माण करता है। इन्हीं साधनों, मन एवं शरीर के साथ हम परमात्मा की ओर अपनी आध्यात्मिक यात्रा प्रारम्भ कर सकते हैं।

परमात्मा तक जाने का कोई छोटा मार्ग योग दर्शन प्रस्तुत नहीं करता, वरन् एक लम्बा और कष्ट-साध्य मार्ग ही बताता है। हमारे जीवन की क्षणभंगुरता ही हमें अपने लक्ष्य की अनिवार्यता को समझने की प्रेरणा देती है। अपने आपको समझने से भिन्न कोई ज्ञान नहीं है, और अपने आपकी उपेक्षा करने से बड़ा कोई अज्ञान भी नहीं है। मन और शरीर के तप से जब आन्तरिक शान्ति प्राप्त हो जाती है तभी आध्यात्मिक मुक्ति का अवतरण जीवन में होता है। ईश्वरीय अनुभूति सामूहिक नहीं होती है। यहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने वाला अकेला यात्री होता है। वही अपना मार्गदर्शक होता है और वही अपना परीक्षक भी होता है। वह जो निर्णय लेता है, उसके अनुसार वह उठता या गिरता है।

योग के मार्ग में सभी कुछ दूषणरहित है। इच्छा शक्ति की कमजोरी, निर्णय करने में अशक्तता और मन के विचलन को पश्चिमी शुद्धतावादी दर्शन में पाप ही कहा जा सकता है। इन कमजोरियों का अस्तित्व यौगिक अनुशासन आत्मसात् करने पर स्वत: समाप्त हो जाता है। कमजोर आदमी मजबूत आदमी की भ्रूणावस्था है। अनाध्यात्मिक अज्ञान में ही अध्यात्म का कोष है। योग दर्शन मनुष्य को अज्ञता से सर्वज्ञता और दुर्बलता से सर्वशक्तिमत्ता की ओर ले जाता है। परिमित से अनन्त बना देता है।

आध्यात्मिक आन्दोलनों की भीड़ ने अध्यात्म मार्ग के चुनाव के विकल्प को कठिन बना दिया है। जब दार्शनिक विचार भ्रम-जाल में घिरा हो तब योग, जो हमारी पैतृक धरोहर है, हमारी सहायता के लिए उपस्थित होता है। यह ऐसी धरोहर है जिसे सावधानीपूर्वक संरक्षित किया जाना चाहिए और इसका सभी रूपों में सजगतापूर्वक अध्ययन करना चाहिए।

दैनिक जीवन में योग

योगासन

अधिकतर चिन्तनशील मनुष्यों ने योग को जीवन-विज्ञान के सैद्धान्तिक रूप में स्वीकार कर लिया है। विश्व के विभिन्न भागों में इस योग आन्दोलन के विकास पर यदि हम दृष्टिपात करें तो पता चलेगा कि इसकी उपयोगिता अधिकाधिक शारीरिक पक्ष तक ही सीमित है, यथा–विभिन्न आसनों एवं प्राणायामों का प्रशिक्षण मात्र। अवश्य ही यह शारीरिक स्वास्थ्य के लिए अभीष्ट है तथा जो आगे भी अपना आध्यात्मिक विकास चाहते हैं उनके लिए भी अनिवार्य है।

मानव सुख की पहली शर्त है स्वस्थ शरीर। मनुष्य के दैनिक जीवन में सुचारु रूप से कार्य करने हेतु स्वस्थ शरीर एक वरदान है। यह सभी जानते हैं कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन का निवास होता है और मानसिक अवस्था भी स्वस्थ रहती है। अत: व्यावहारिक योग का आधार योगासन है।

मुख्य आसनों की संख्या योग में चौरासी बताई गई है। विभिन्न आसनों के प्रारम्भिक, यहाँ तक कि सैद्धान्तिक अध्ययन से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि आसन शरीर के विभिन्न अंगों को प्रभावित करते हैं। प्रचलित शारीरिक व्यायाम से मांसपेशियाँ विकसित होती हैं और व्यक्ति हट्‌टा-कट्‌टा हो जाता है। फिर भी यह प्रतिदिन का अनुभव है कि हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति भी अधिक देर तक जीवन के तनावों को सहन नहीं कर सकता है। इससे पता चलता है कि शरीर पर अनवरत एवं अपरिहार्य रूप से मन का प्रभाव पड़ता है, जिसे शारीरिक व्यायाम सम्हाल नहीं पाता। यहीं आसनों एवं शारीरिक व्यायामों में मुख्य अन्तर स्पष्ट होता है।

आसन शरीर-तन्त्र को केवल स्वस्थ एवं मजबूत ही नहीं रखते, वरन् अपने सहयोगी प्राणायामों के साथ रोगों के प्रति मानसिक प्रतिरोध भी तैयार

करने में सूक्ष्म रूप से सहायता देते हैं। वे शरीर के विभिन्न अंगों एवं जोड़ों की देखभाल करते हैं तथा उनमें पूर्ण स्वस्थ तन्त्रिका-तंत्र का भी निर्माण करते हैं। समस्त शारीरिक संरचना तन्त्रिका-तन्त्र पर निर्भर है और जब तक तन्त्रिकायें चुस्त-दुरुस्त एवं स्वस्थ नहीं रहती हैं, केवल मांसपेशियों के विकास से ही कुछ होने वाला नही है। साथ-ही दैनिक जीवन में आसनों का नियमित अभ्यास शारीरिक ऊर्जा एवं समय की अधिक माँग नहीं करता। कमजोर शरीर वाले भी समुचित मार्गदर्शन में आसनों की शिक्षा ले सकते हैं।

यह अत्यन्त रोचक प्रसंग है कि अनेक आसनों के नाम पशुओं और पक्षियों के नाम पर रखे गये हैं, यथा–मयूरासन, शशांकासन, भुजंगासन आदि। यदि आप आसनों की उपयोगिता को समझेंगे तो उनसे अनेक रोचक संकेत प्राप्त होंगे। दिनभर के काम के बाद शरीर थक जाता है और हमारा सामान्य विश्वास है कि पीठ के बल लेट जाने पर, जैसे हम क्षैतिज स्थिति में सोते हैं, आराम मिलता है। पक्षी और पशु कैसे विश्राम करते हैं? प्रकृति ने उन्हें हमारी तरह क्षैतिज स्थिति में लेटने की सुविधा से तो वंचित कर रखा है, फिर भी वे विश्राम करते हैं। अत: जिन भंगिमाओं में वे खड़े होते या विश्राम करते हैं उनसे आसनों के कुछ संकेत प्राप्त होते हैं। जैसा पहले कहा गया है आसन श्रम-साध्य व्यायाम नहीं हैं, वरन् ऐसी विश्रामदायक भंगिमायें हैं जो थके शरीर को पुन: तरोताजा कर देती हैं और पुन: दिनभर आराम से काम करने के लिए आवश्यक ऊर्जा प्रदान करती हैं।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि आसन अन्य शारीरिक व्यायामों की तरह शरीर को थकाते नहीं और उसे स्वस्थ रखने के लिए बहुत पौष्टिक भोजन की भी आवश्यकता नहीं होती। वस्तुत: आसनों के पीछे यही अवधारणा है कि मानव शरीर जब तक रहे तब तक स्वस्थ एवं चुस्त-दुरुस्त रहे।

चौरासी आसनों में केवल 20 आसन महत्त्वपूर्ण हैं। इन्हें निम्नांकित पाँच श्रेणियों में रखा गया है।

ध्यान के आसन

पद्मासन
सिद्धासन

सुखासन
स्वस्तिकासन

सिर के बल किए जाने वाले आसन

सर्वांगासन
हलासन
शीर्षासन

शिथिलीकरण के आसन

शवासन

अधोमुखी आसन

भुजंगासन
शलभासन
धनुरासन
मयूरासन

अन्य आसन

पश्चिमोत्तान आसन
वज्रासन
सुप्तवज्रासन
शशांकासन
योग मुद्रा
बद्धपद्मासन
अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन
मत्स्यासन

इन आसनों की विधियाँ सम्बन्धित शीर्षक के अन्तर्गत अलग से दी गई हैं, साथ-ही-साथ प्रत्येक आसन के लाभों की भी चर्चा की गयी है।

ध्यान के आसन

पद्मासन



कम्बल पर पैरों को सामने फैलाकर बैठ जायें।

दाहिने पैर को मोड़ कर पंजा बायीं जाँघ पर और बायें पैर को मोड़कर पंजा दाहिनी जाँघ पर रखें।

एड़ियों को इस प्रकार जमायें कि वे जघनास्थि के सामने मिलें।

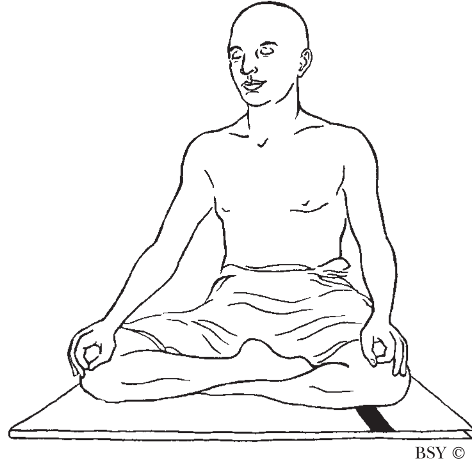
प्रत्येक पैर पास के उदर के भाग को दबायेगा।

हाथों को घुटनों पर या दाहिनी हथेली को बायीं हथेली पर सामने गोद में रख सकते हैं। हाथों को वैसे ही रखें, जैसा रखने में आपको सुविधा हो।

इस आसन के समय सिर और रीढ़ की हड्डी सीधी होनी चाहिए।

लाभ–'ध्यान' के लिए यह आदर्श आसन है। इस आसन में घण्टों बैठा जा सकता है। मेरुदण्ड की सीधी स्थिति रहने से मेरुदण्ड तथा कशेरुकाओं के मध्य से होकर तन्त्रिकाओं के निर्बाध प्रवाह में सहायता मिलती है। मेरुदण्ड की सीधी स्थिति से पेट पर भी दबाव नहीं पड़ता एवं यह मन को शरीर के दबाव से अलग रखता है। पद्मासन अनुत्रिक एवं त्रिक नाड़ियों को स्वस्थ रखता है। जब व्यक्ति इस आसन में अधिक देर तक बैठता है तब उसके शरीर के निचले भाग पर दबाव पड़ता है। इससे रक्त के निर्बाध संचालन में रुकावट आने पर भी अनुत्रिक एवं त्रिक नाड़ियों को उदर प्रदेश की धमनी से अतिरिक्त रक्त प्राप्त होता रहता है।

सिद्धासन



एक एड़ी को गुदा द्वार पर एवं दूसरी एड़ी को जननेन्द्रिय के ऊपर रखें।
पंजों को जाँघ एवं पिण्डलियों के मध्य फँसा दें।
ज्ञानेन्द्रियों को नियन्त्रित रखें।
आँखों को एक बिन्दु पर टिकाकर दोनों भौंहों के बीच केन्द्रित करें।

लाभ– सिद्धासन अत्यधिक आराम एवं उत्तम फल प्रदान करता है। मन के नियन्त्रण द्वारा ज्ञानेन्द्रियों को वश में रखा जा सकता है। यह आसन बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह हमें बाह्य जगत् से अंतर्जगत् में ले जाता है। यदि लम्बी अवधि तक इसका नियमित अभ्यास किया जाए तो मन को नियन्त्रित कर समाधि की प्राप्ति की जा सकती है।

इस आसन का चिकित्सकीय पक्ष भी ध्यान देने योग्य है। प्राणशक्ति उत्पन्न कर इसके द्वारा सभी रोगों का उपचार किया जा सकता है। जब शरीर और मन आराम की स्थिति में रहते हैं तब उचित मात्रा में प्राणशक्ति शरीर के समस्त अंगों में प्रवाहित होती है।

सुखासन



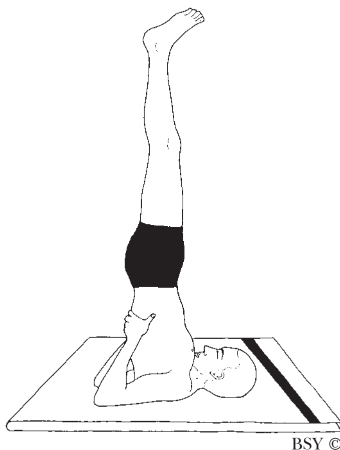
यह आसन उनके लिए उपयोगी है जिनके अंगों में कड़ापन अधिक होने से वे ध्यान के अन्य आसन नहीं कर सकते हैं।
पैरों को मोड़ कर घुटनों को जमीन से 8–9 इंच ऊपर उठायें।
दायें पंजे को बायीं जाँघ के नीचे रखें और बायें पंजे को दायीं जाँघ के नीचे टिकायें। एक बड़ा तह किया हुआ कपड़ा कमर एवं पैरों के चारों ओर घुटनों के नीचे बाँध दें।
गाँठ आगे की ओर लगायें ताकि जाँघों का भार कपड़े पर रहे। दोनों हाथों को प्रार्थना की मुद्रा में जोड़ कर घुटनों के बीच आराम से कपड़े पर रख लें।

स्वस्तिकासन

स्वस्तिकासन का अर्थ है गुणा का चिह्न। *स्वस्तिक* हिन्दुओं का मंगल चिह्न है। विश्व के प्राय: सभी धर्मों में *स्वस्तिक* धार्मिकता एवं पवित्रता का सूचक है। स्वस्तिकासन उन चार महत्त्वपूर्ण आसनों में से एक है जिनकी रचना ध्यान लगाने के उद्देश्य से की गयी है।
बायें पंजे को दाहिने पैर की पिण्डली और जाँघ के बीच में रखें। एड़ी ऊरू सन्धि से सटी होनी चाहिए। दाहिने पंजे को बायें पंजे की पिण्डली एवं जाँघ के मध्य में रखें। किसी एक तरफ मत झुकें।
यह ध्यान देने योग्य है कि स्वस्तिकासन एवं सिद्धासन समान आसन हैं। दोनों में केवल पैरों की स्थिति में भिन्नता है। उस भिन्नता के प्रति सजग रहते हुए अभ्यास करें।

सिर के बल किये जाने वाले आसन

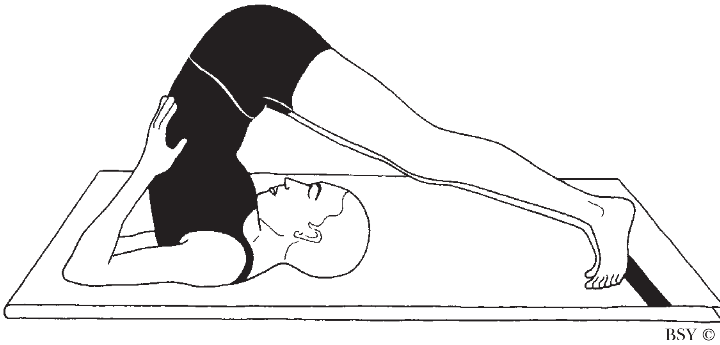
सर्वांगासन



पीठ के बल लेट जायें।
भुजाओं के सहारे दोनों पैरों को सीधा ऊपर उठायें।
कमर को दोनों हथेलियों से सहारा देते हुए, धड़, नितम्ब और दोनों पैरों को एक सीध में ऊपर उठाते जायें। दोनों कोहनियाँ जमीन पर रहेंगी।
अपनी ठुड्ढी को छाती से लगा लें।
पीठ के ऊपर का कंधे वाला भाग और गर्दन जमीन पर रहेंगे। शरीर को बिना हिलाये, पैरों को सीधा रखें।
इस स्थिति में सुविधानुसार समय तक ही रहें।
फिर बिना झटका दिये पैरों को धीरे-धीरे नीचे लायें।

लाभ– यह आसन थॉयराइड ग्रंथि का पोषण करता है। शरीर को अनेक प्रकार से स्वस्थ रखता है। मेरुदण्ड को पर्याप्त रक्त प्रदान करता है तथा उसे लचीला बनाये रखता है, जिसका अर्थ होता है चिर यौवन। ब्रह्मचर्य-पालन में सहायक है, स्वप्नदोष को रोकता है, रक्त के लिये शक्तिवर्द्धक है और रक्त का शुद्धिकरण करता है। यह आसन नाड़ियों को शक्ति प्रदान करता है। पेट की गड़बड़ियों को भी दूर करता है। यह आसन स्त्रियों के प्रजनन अंगों के स्वास्थ्य के लिए भी बहुत उपयोगी है।

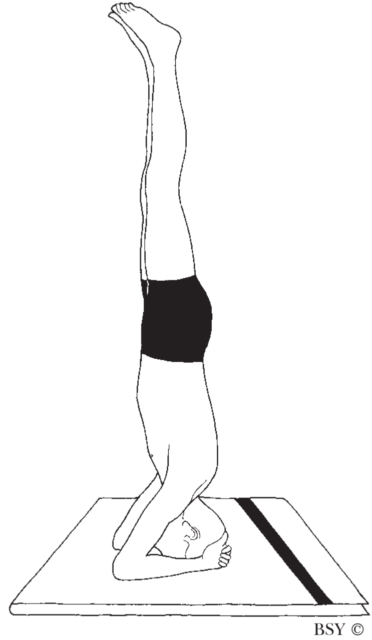
हलासन



सर्वांगासन की तरह ही पहले पीठ के बल चित्त लेट जायें।
दोनों हाथ बगल में रखें और हथेलियाँ जमीन पर रखें।
हाथों का सहारा लिये बिना पैरों को धीरे-धीरे उठायें, पर घुटने और धड़ नहीं मुड़ने चाहिए।
अब पैरों को धीरे-धीरे नीचे झुकायें, तब तक कि पंजे सिर के पीछे जमीन को न छूने लगें।
घुटनों को सीधा और मिलाकर रखें।
टांगें और जाँघ एक सीधी रेखा में हों और ठुड्ढी छाती से लगी रहे। नाक द्वारा सहजता से श्वास लें।
आप दोनों हाथों से पैरों के अंगूठों को भी पकड़ सकते हैं।
इस आसन का अभ्यास करते समय किसी प्रकार का झटका न लगे या तनाव उत्पन्न न हो।
आसन की समाप्ति पर टांगों को धीरे-धीरे ऊपर उठायें और जमीन पर फैलाते हुए प्रारम्भिक स्थिति में आ जायें।

लाभ – यह आसन मेरुदण्ड तथा पीठ की मांसपेशियों को स्वस्थ रखता है। पीठ की हड्डियों को असमय कड़ा होने से बचाता है। विभिन्न प्रकार के पेशीय-वात रोग, मोच, कटिवात आदि रोग इससे ठीक होते हैं। हमेशा रहने वाली कब्ज, मोटापा, शक्कर की बीमारी (मधुमेह) का इससे उपचार होता है। प्लीहा और यकृत में रक्त संकुलता और उनकी वृद्धि को भी यह ठीक करता है।

शीर्षासन

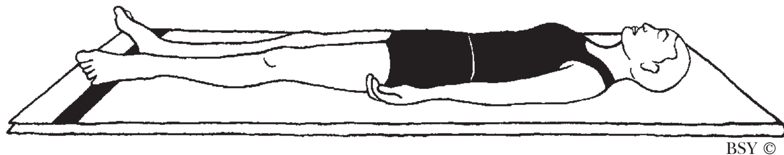


यह सभी आसनों का राजा है।
इस आसन को सही तरीके से कर पाने हेतु, कम्बल को चार तहकर बिछा लें और घुटनों के बल बैठ जायें।
दोनों हाथों की अंगुलियों को आपस में फँसा लें और जमीन पर हाथों से एक त्रिकोणात्मक सहारा बनायें।
सिर के ऊपरी भाग को जमीन पर रखें, जिससे कि वह अंगुलियों से बनाये गये गड्ढे में आराम से टिक सके।
धीरे-धीरे पैरों को ऊपर उठायें, जब तक कि वे सीधी अवस्था में न आ जायें।
सिर के बल प्रारम्भ में पाँच सैकण्ड के लिए खड़े रहें और धीरे-धीरे समयावधि बढ़ायें।
धीमी गति से पैरों को नीचे लायें।
इस आसन को धीरे-धीरे एवं सावधानीपूर्वक करना चाहिए।
सिर के बल खड़े होते समय धक्के या झटके से बचें।
नाक से सहजता से श्वास लें। ध्यान रखे कि इसे योग्य शिक्षक के निर्देशन में ही सीखें।

लाभ–इस आसन के द्वारा आप यौन ऊर्जा का परिष्कार कर सकेंगे तथा ब्रह्मचर्य पालन कर सकेंगे। इससे वीर्य शक्ति का रूपान्तरण आध्यात्मिक शक्ति के रूप में हो जाता है, जिसका उपयोग ध्यान के लिए होता है। इससे स्मरण-शक्ति में वृद्धि होती है। आपको सच्चे सुख एवं आत्मिक आनन्द की प्राप्ति होगी। इससे बौद्धिक और आध्यात्मिक शक्ति प्रखर होती है। नाक, आँख, गले, पेट, प्लीहा, गुर्दे, यकृत, फेफड़े, बहरापन, बवासीर, दमा, मधुमेह, उपदंश (क्षयरोग) एवं सूजाक की बीमारियों में लाभ होता है। यह जठराग्नि को बढ़ाता है, गर्भाशय के दोष सहित बन्ध्यापन में भी लाभ मिलता है।

शिथिलीकरण के आसन

शवासन



नाड़ियों और पेशियों को विश्रान्त करने के लिए यह एक सर्वोत्तम आसन है। सब आसनों के बाद अन्तिम अभ्यास के रूप में इसका अभ्यास अवश्य करना चाहिए।

पीठ के बल लेटकर दोनों हाथ बगल में जमीन पर रख लें और दोनों पैरों को सीधा कर लें।

एड़ियों एवं पंजों को अलग रखें।

आँखें बन्द रखें और अपनी स्वाभाविक श्वास का ख्याल करें।

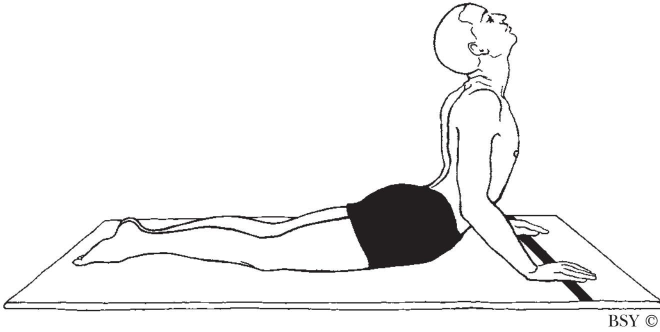
अब सभी मांसपेशियों, नाड़ियों एवं अंगों को शिथिल कर दें।

इस क्रिया में चेतना को पंजों से प्रारम्भ कर ऊपर के सभी अंगों, हृदय, वक्ष और मस्तिष्क तक ले जायें। टखने, घुटने, जाँघ, कमर, पेट, छाती एवं सिर के विभिन्न अंगों पर ले जायें और उस भाग को पूर्ण आराम की स्थिति में लायें।

लाभ–इससे शरीर, मन एवं आत्मा को विश्राम मिलता है। योगाभ्यास में विश्रान्ति महत्त्वपूर्ण अंग है। आसन के समय जिन अंगों पर दबाव पड़ता है उन्हें विश्रान्ति की आवश्यकता होती है। शवासन में तुरन्त प्रभावकारी विश्रान्ति की प्राप्ति होती है।

अधोमुखी आसन

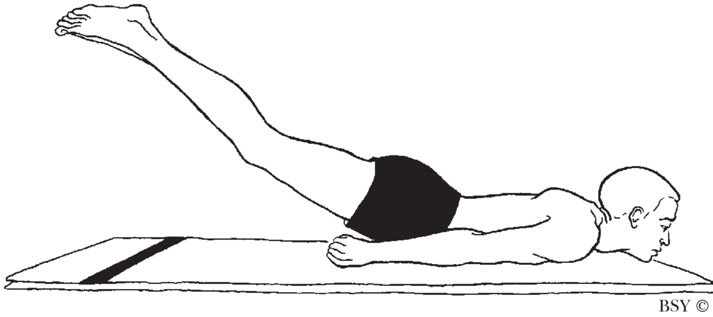
भुजंगासन



मुख नीचे कर पेट के बल लेट जायें और विश्रान्त हो जायें।
हथेलियों को बगल में कंधों के नीचे रखें।
दोनों पैरों को आपस में मिलाकर रखें। माथे को जमीन से छूने दें। शरीर को ढीला छोड़ दें।
सिर एवं कंधों को धीरे-धीरे ऊपर उठायें।
सिर और कंधों को जितना पीछे ले जा सकें, ले जायें।
कंधे उठाते समय केवल पीठ की पेशियों का उपयोग करना है, भुजाओं का नहीं। यह भी ख्याल रखें कि शरीर के किसी भाग पर अनावश्यक जोर न पड़े। अब भुजाओं को क्रियाशील करते हुए सिर को बिना जोर लगाए जितना पीछे झुका सकते हैं, झुकायें और भुजाओं को सीधा करने का प्रयास करें। नाभि को जमीन के जितना करीब रख सकते हैं, रखें। जब तक इस स्थिति में रुक सकते हैं, रुकें। फिर धीरे-धीरे सिर को नीचे लायें।
शरीर को ऊपर उठाते समय श्वास लें।
अन्तिम स्थिति में सामान्य श्वसन करें।
शरीर को नीचे लाते समय श्वास छोड़ें।

लाभ – यह स्त्रियों के गर्भाशय तथा अण्डाशय को स्वस्थ बनाने के लिए उपयोगी आसन है। मेरुदण्ड को लचीला बनाता है। प्रसव सहज एवं सामान्य होता है।

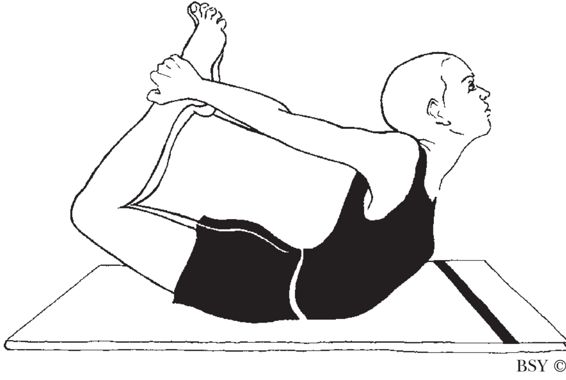
शलभासन



मुख नीचे कर पेट के बल लेट जायें।
हाथों को जाँघों के नीचे रखें। हथेलियाँ जमीन की ओर हों।
जाँघों को तान लें और भुजाओं को सीधा करें।
धीरे-धीरे पैरों, जांघ एवं उदर के निचले भाग को उठायें।
जितने समय तक इस स्थिति में आसानी से रुक सकते हैं, रुकें। फिर धीरे-धीरे जाँघ और पैरों को जमीन पर वापस लायें।
पैरों को ऊपर उठाते समय श्वास लें।
आसन की पूर्णावस्था में श्वास रोकें और जमीन पर वापस आते समय श्वास छोड़ें।
पाँच या छ: बार इस क्रिया की पुनरावृत्ति की जा सकती है।

लाभ– यह आसन रीढ़ को पीछे की ओर मोड़ता है। यह सर्वांगासन एवं हलासन का विलोम है तथा उदर प्रदेश का अच्छा व्यायाम कराता है। कब्ज दूर करता है। यकृत, गुर्दे आदि उदर प्रदेश के अंगों को शक्ति प्रदान करता है। इससे जठराग्नि बढ़ती तथा अपच दूर होती है।

धनुरासन



यह भुजंगासन एवं शलभासन का मिश्रण है। केवल अतिरिक्त रूप से इसमें टखनों को हाथों से पकड़ा जाता है। इन तीनों के मेल से आसन का एक रूप बनता है। इसे धनुरासन कहते हैं, क्योंकि इसमें धनुष की आकृति निर्मित होती है।

भुजंगासन और शलभासन की भाँति अधोमुख हो पेट के बल जमीन पर लेट जायें और मांसपेशियों को ढीला छोड़ दें। हाथों से टखनों को पकड़ लें।

छाती एवं सिर को ऊपर उठायें एवं छाती को ताने।

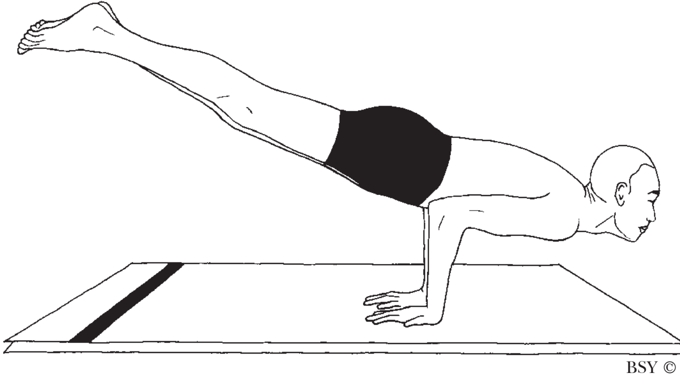
भुजाओं और पैरों को सीधा तथा कड़ा रखें।

जब तक सुविधा हो तब तक इस स्थिति में रहें। फिर जमीन पर वापस आयें और विश्राम करें।

इसमें सम्पूर्ण शरीर उदर पर आधारित रहता है और यह उसकी अच्छी मालिश करता है।

लाभ–हमेशा रहने वाली कब्ज, मंदाग्नि एवं शिथिल यकृत के लिए लाभकारी है। यह आसन पैरों, घुटने के जोड़ों तथा हाथों के वात को दूर करता है। यह चर्बी हटाता है, पाचन-संस्थान को शक्ति प्रदान करता है तथा भूख बढ़ाता है। वायु रोग से पीड़ित व्यक्तियों के लिए यह वरदान तुल्य है। हलासन, मयूरासन एवं धनुरासन का अभ्यास करने वाले व्यक्ति शक्ति से परिपूर्ण रहते हैं।

मयूरासन

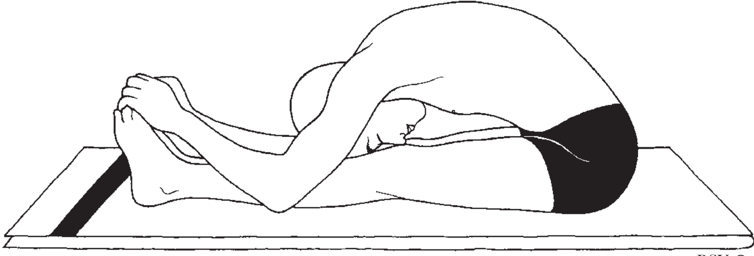


फर्श पर घुटनों के बल बैठ जायें।
पैरों को मिलाकर रखें और घुटनों को अलग कर दें।
आगे झुकें और दोनों हथेलियों को फर्श पर घुटनों के बीच रखें।
अंगुलियाँ पैरों की ओर सीधी रहेंगीं।
कोहनियों और अग्र बाहुओं को मिलायें।
थोड़ा और आगे झुकें और उदर को कोहनियों पर तथा छाती को ऊर्ध्व बाहुओं पर टिकायें।
टाँगों को पीछे तान कर एक साथ एक सीध में लायें।
पेशियों में तनाव लायें और धीरे-धीरे धड़ और टाँगों को उठाकर फर्श की समानान्तर स्थिति में ले आयें।
इस अवस्था में सम्पूर्ण शरीर का भार दोनों हथेलियों पर संतुलित रहेगा।
बिना दबाव के अंतिम भंगिमा को कुछ समय तक बनाये रखें और फिर धीरे-धीरे प्रारम्भिक अवस्था में लौट आयें।
शरीर ऊपर उठाते समय श्वास छोड़ें, अंतिम स्थिति में श्वास रोक कर रखें।
शरीर को नीचे लाते समय श्वास लें।

लाभ– इस आसन में कम अवधि में पूर्ण व्यायाम मिलता है। यह पाचन शक्ति में आश्चर्यजनक रूप से सुधार लाता है। मंदाग्नि दूर करता है। भूख बढ़ाता है। हाथ की पेशियों को मजबूत बनाता है। पेट के अल्सर वाले रोगियों को यह आसन नहीं करना चाहिए।

अन्य आसन

पश्चिमोत्तानासन

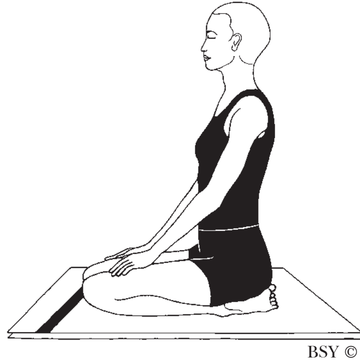


टाँगों को सामने फैलाकर जमीन पर बैठें।
धड़ को सामने झुकायें।
दोनों हाथों की तर्जनियों से पैरों के अंगूठों को पकड़ें।
झुकते समय किसी प्रकार के झटके एवं शक्ति का प्रयोग मत करें।
कुछ दिनों के अभ्यास के बाद घुटने तक सिर झुकाना सम्भव हो जाता है।
सिर के मूल अवस्था में लौटने तक श्वास रोके रखें।
सामने झुकते समय श्वास छोड़ें।
पूर्व अवस्था में लौटने के पश्चात् श्वास लें।
जो व्यक्ति इस आसन को पूर्ण रूप से नहीं कर सकते हैं उन्हें एक पैर और एक हाथ से प्रारम्भिक अवस्था का अभ्यास करना चाहिए। फिर दूसरे पैर एवं दूसरे हाथ से यह अभ्यास करना चाहिए।
कुछ अभ्यास के बाद मेरुदण्ड लचीला होने पर आसन सरलतापूर्वक हो जायेगा।

लाभ– यह आसन अति उत्तम है, क्योंकि यह जठराग्नि को बढ़ाता है। यह पेट की चर्बी को कम करता है। मोटापा दूर करने के लिए यह विशेष आसन है। यकृत एवं प्लीहा को पुष्ट बनाता है। इससे गुर्दे, जिगर एवं अग्न्याशय को उद्दीपन प्राप्त होता है और आंत्रिक क्रमानुकुंचन होता है। यकृत की शिथिलता दूर करता है। वायुनाशक है।

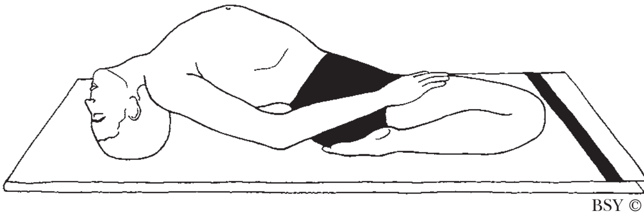
वज्रासन

दोनों तलवों को कूल्हों की बगल में रखें।
पिण्डलियाँ जाँघों को छूती रहें।
शरीर का पूरा वजन एड़ियों और घुटनों पर रहे।
दोनों पैरों के अंगूठे आपस में मिले रहें।
घुटने एक-दूसरे के समीप रहें।
कमर, गर्दन और सिर एक सीध में रहें।
हाथ सीधे घुटनों पर टिके रहें।



लाभ–यह भोजन पचाने में सहायक है। पेट की क्रियाशीलता बढ़ाता है। अत: भोजन के बाद इसका अभ्यास बड़ा लाभकारी होता है। यह आमाशय और गर्भाशय को भी शक्ति प्रदान करता है। यही एक आसन है जिसे भोजन के बाद भी किया जा सकता है।

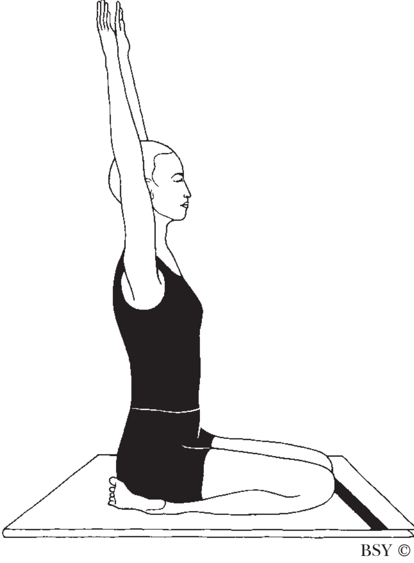
सुप्त वज्रासन

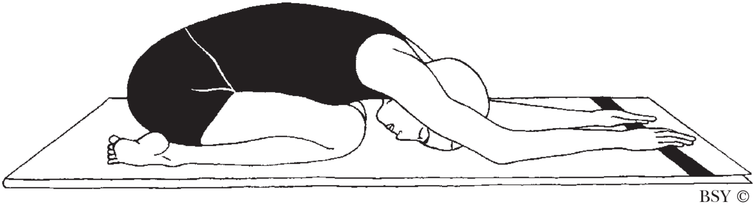


वज्रासन में बैठकर कोहनियों एवं अग्र भुजाओं का सहारा लेकर पीछे झुकें।
पीठ धनुषाकार हो जाए और सिर भूमि को स्पर्श करता रहे।
हाथों को जाँघों पर रखें और घुटनों को भूमि पर जमाये रखें।
नेत्र बंद कर लें और शरीर को विश्रान्त करें।
श्वसन मंद एवं गहरा हो।

लाभ–वज्रासन के सभी लाभ इससे प्राप्त किये जा सकते हैं। इस आसन में घुटनों पर अधिक जोर पड़ता है।

शशांकासन

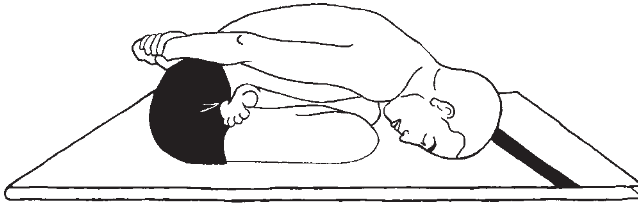




वज्रासन में बैठें।
दोनों हाथों को धीरे-धीरे ऊपर की ओर एक सीध में लायें।
श्वास लें और धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए सामने झुकें।
मस्तक और हाथ जमीन का एक साथ स्पर्श करें।
श्वास लेते हुए धीरे-धीरे पहली स्थिति में आयें।

लाभ– यह आसन पीठ की पेशियों में खिंचाव पैदा कर पीठ दर्द की समस्याओं को दूर करने में सहायक होता है। यह पुरुषों और महिलाओं के प्रजनन अंगों की गड़बड़ियों को दूर करता है।

योगमुद्रा



पद्मासन में बैठें और हथेलियाँ एड़ियों पर रखें। श्वास छोड़ते हुए धीरे-धीरे सामने की ओर झुकें और ठुड्ढी या मस्तक से जमीन का स्पर्श करें। सरलतापूर्वक इस स्थिति में जब तक रह सकें तब तक रहें। इस स्थिति में श्वास की क्रिया स्वाभाविक रहेगी।

अब श्वास छोड़ें और श्वास लेते हुए धीरे-धीरे पहली अवस्था में आयें। आप हाथों को पीछे ले जाकर बायीं कलाई को दाहिने हाथ से भी पकड़ सकते हैं।

लाभ–यह आसन उदर प्रदेश की गड़बड़ियों को दूर करता है तथा 'ध्यान' को केन्द्रित करने में सहायक है।

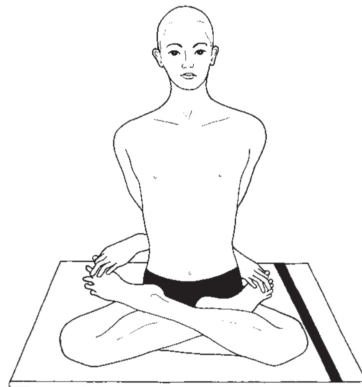
बद्धपद्मासन

पद्मासन में बैठें।

हाथों को पीछे ले जाकर दाहिने हाथ से दाहिने पैर के अँगूठे तथा बायें हाथ से बायें पैर के अँगूठे को पकड़ें।

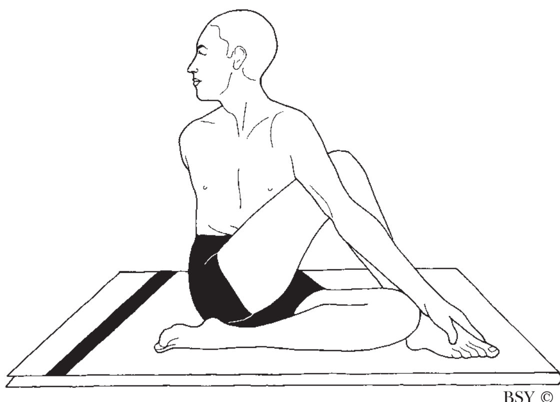
श्वास बाहर छोड़ते हुए और थोड़ा सामने की ओर झुकते हुए अँगूठों को पकड़ना सरल होता है।

लाभ–बद्धपद्मासन से पेट की बीमारियाँ दूर होती हैं। यह हाथों, कन्धों, भुजाओं एवं पीठ को मजबूत बनाता है तथा छाती की चौड़ाई को बढ़ाता है।



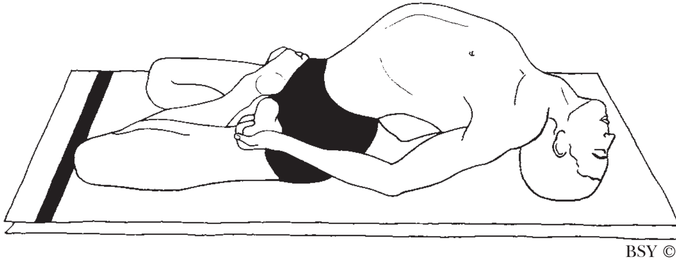
अर्ध मत्स्येन्द्रासन

ऊपर वर्णित सभी आसन मेरुदण्ड को आगे या पीछे झुकाने वाली प्रतिलोम भंगिमायें हैं। इतना ही यथेष्ठ नहीं है। मेरुदण्ड को दोनों दिशाओं में मोड़ने की भी आवश्यकता है, तभी पूर्ण लचीलापन प्राप्त किया जा सकता है। अर्ध मत्स्येन्द्रासन इस उद्देश्य की पूर्ति करता है।



इस आसन को करने के लिए शरीर के सामने टाँगें सीधी फैलाकर बैठ जायें।
दायें पैर को सीधा बायें घुटने के बाहर की ओर फर्श पर रखें।
बायीं टाँग को दायीं ओर मोड़ें और बायीं एड़ी को दायें नितम्ब के अधिक से अधिक समीप रखें।
बायीं भुजा को दायीं टाँग की बाहरी ओर रखें और बायें हाथ से दायें पैर या टखने को पकड़ें।
दायाँ घुटना बायीं काँख के अधिक से अधिक समीप रहे।
शरीर को दायें मोड़ें और दायीं भुजा को पीठ के पीछे रखें।
पीठ को और फिर गर्दन को बिना अधिक जोर लगाये अधिक से अधिक मोड़ें।
अन्तिम अवस्था में कुछ समय तक रहें और फिर धीरे-धीरे प्रारम्भिक अवस्था में लौट आयें।
टाँगें बदलें और दूसरी दिशा में अभ्यास की पुनरावृत्ति करें।

मत्स्यासन



पद्मासन में बैठकर शरीर को अग्र बाहुओं एवं कोहनियों का सहारा देकर धीरे-धीरे पीछे की ओर झुकें और सिर के ऊपरी भाग को फर्श से सटा दें। कोहनियों को फर्श पर टिकायें और अँगूठों को पकड़ लें। पीठ को यथासम्भव धनुषाकार बनायें। अन्तिम स्थिति में धीमी और गहरी श्वास लें।

यह एक प्रकारान्तर है।

दूसरी विधि में पीठ के बल लेटने के बाद सिर को आर-पार स्थिति में रखी अग्र भुजाओं पर रखा जा सकता है।

आसन पूरा होने पर हाथों के सहारे धीरे-धीरे सिर को मुक्त करें और उठकर बैठ जायें।

लाभ–यह आसन सर्वांगासन का पूरक है। कब्ज दूर करता है तथा अनेक बीमारियों को भगाता है। दमा तथा जीर्ण ब्रोंकाइटिस में आराम पहुँचाता है।

सारांश

1. आसन एकान्त में और हवादार कमरे में किये जाएँ।
2. आसन व्यावहारिक योग की गत्यात्मक विधि का महत्त्वपूर्ण अंग हैं। युवा एवं वृद्ध सभी इनके अभ्यास द्वारा लाभ उठा सकते हैं।
3. इनमें कम समय लगता है, पर लाभ अधिकाधिक हैं।
4. ये मोटापे को निश्चित रूप से दूर करते हैं तथा चर्बी घटाते हैं। पाचन को स्वस्थ बनाते एवं आधुनिक युग की देन, कब्ज को समाप्त करते हैं।
5. उच्च रक्तचाप को निश्चित रूप से कम करते हैं।
6. इनमें मनोशारीरिक एवं कायिक-मानसिक क्षमताएँ अपार हैं।

प्राणायाम

'प्राण' का अर्थ वह 'जीवनी-शक्ति' है जो शरीर के विभिन्न केन्द्रों द्वारा अपने को अभिव्यक्त करती है। सामान्य रूप से इसका अर्थ होता है ऊर्जा। प्राणायाम का अर्थ है 'प्राण पर नियन्त्रण'। इस अभ्यास में तीन क्रियायें निहित हैं– श्वास लेना, श्वास रोकना, श्वास छोड़ना।

शरीर को स्वस्थ एवं सक्रिय रखने के लिए आसन-प्राणायाम आवश्यक हैं। हम सब स्वस्थ रहना चाहते हैं। कोई व्यक्ति इसका अपवाद नहीं है। सांसारिक जीवन में प्रतिदिन के क्रियाकलाप या आत्मज्ञान की प्राप्ति स्वस्थ शरीर के बिना नहीं हो सकती। बीमार व्यक्ति ठीक तरह से प्रार्थना भी नहीं कर सकता। प्रत्येक व्यक्ति स्वस्थ रहना चाहता है। परन्तु अज्ञानवश व्यक्ति को कष्ट झेलना पड़ता है। स्वास्थ्य में कैसे सुधार लाया जाये तथा स्वास्थ्य कैसे अच्छा रखा जाये, इसकी शिक्षा योग विज्ञान देता है।

श्वास ही जीवन है। कोई व्यक्ति कुछ समय बिना भोजन के जीवित रह सकता है, परन्तु श्वास के बिना नहीं रह सकता। जब हम श्वास लेते हैं तब वायु शरीर में प्रवेश करती है। वायु में ऑक्सीजन रहती है, जो प्राणदायक होने के कारण आवश्यक है। समस्त प्राणी-जगत् का जीवन वायु में पायी जाने वाली ऑक्सीजन पर निर्भर रहता है। यदि वायु में ऑक्सीजन न हो तो प्राणी-वर्ग जीवन रहित हो जायेगा। ऑक्सीजन ज्वलन क्रिया का सहायक तत्त्व है। धीरे-धीरे स्वयं को जलाने अथवा क्रमशः आत्मदहन की क्रिया ही जीवन है। शरीर के सारे तन्तु निरन्तर ऑक्सीजन से सम्पर्क कर धीरे-धीरे जलते हैं। परिणामतः अनवरत रूप से हमारे शरीर में ज्वलन क्रिया होती रहती है तथा बहुत संख्या में कोशिकाएँ जलती और नष्ट होती रहती हैं, जिससे शरीर में ताप उत्पन्न होता है और हमारे जीवन के लिए आवश्यक तापमान शरीर में बना रहता है।

हमारे पूरे शरीर में रक्त-संस्थान द्वारा निरन्तर रक्त प्रवाहित होता रहता है। हमारे सम्पूर्ण शरीर में रक्तवाहिकाओं का जाल-सा बिछा है। ये रक्त नलियाँ बाल से भी सूक्ष्म होती हैं। इनकी दीवारें अत्यधिक पतली तथा सूक्ष्मातिसूक्ष्म छिद्रमय रहती हैं। इन दीवारों को पार कर प्रवाहित रक्त कोशिकाओं तक पहुँचता है। कोशिकायें आवश्यक जीवनदायी तत्त्व को रक्त से ग्रहण कर लेती हैं तथा अपने अपशिष्ट को रक्त प्रणालियों में वापस भेज देती हैं। इस प्रकार ऑक्सीजन कोशिकाओं में पहुँचती है और ऑक्सीकरण प्रक्रिया में बनी कार्बन डाइऑक्साइड इसके स्थान में चली जाती है। इस प्रकार रक्त विभिन्न संस्थानों की अशुद्धियों के साथ हृदय में पहुँचता है। हृदय पुन: इसे छोटी नलियों द्वारा फेफड़ों में भेजता है जहाँ ताजी हवा फेफड़ों की कोशिकाओं के सम्पर्क में आती है। ताजी हवा से ऑक्सीजन का अवशोषण कर लिया जाता है तथा कार्बन डाइऑक्साइड प्रश्वास द्वारा बाहर निकाल दी जाती है।

हमारे शरीर में हो रहा प्रत्येक परिवर्तन, शरीर में असंख्य कोशिकाओं में हो रहे रासायनिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप होता है। जब कभी पेशी संकुचित होती है अथवा ग्रंथियों से स्राव होता है, यहाँ तक कि जब हम कुछ विचार करते हैं तब भी सम्बन्धित अंगों में रासायनिक परिवर्तन होता है। रासायनिक परिवर्तन से हमारा तात्पर्य ऑक्सीकरण से है। ऑक्सीजन, जो रक्त के माध्यम से शरीर में व्याप्त रहती है, अपने सम्पर्क में आने वाले यौगिकों से मिलती है और उन्हें विभाजित करती है। इस प्रक्रिया द्वारा ऐसे अनुपयोगी पदार्थों का भी निर्माण होता है जिनको शरीर से बाहर निकालना आवश्यक है। ये अनुपयोगी पदार्थ अशुद्ध रक्त के साथ हृदय से फेफड़ों में भेजे जाते हैं। यहाँ से हमारी श्वास के द्वारा अशुद्धियाँ श्वास नलिकाओं से बाहर आती हैं। संक्षेप में यही ऑक्सीकरण की क्रिया है।

शरीर का स्वास्थ्य पूर्णत: आन्तरिक संस्थानों, ग्रंथियों एवं अन्य अंगों के कार्यों पर निर्भर है। शरीर की महत्त्वपूर्ण क्रियाओं के अन्तर्गत श्वास लेने एवं छोड़ने की क्रिया भी आती है। यह सबसे महत्त्वपूर्ण क्रिया है। इस क्रिया के बन्द होने पर कुछ ही क्षणों में मृत्यु निश्चित है।

अत: यह आवश्यक है कि उपर्युक्त कार्यों का सम्पादन करने वाले महत्त्वपूर्ण अंग पूर्ण रूप से स्वस्थ एवं मजबूत रहें। अधिकतर श्वसन अंगों की कमजोरी के कारण संतोषप्रद श्वसन-क्रिया नहीं होती, जिससे मनुष्य

इन अंगों से सम्बन्धित अनेक रोगों, जैसे–निमोनिया, प्लुरिसी, यक्षमा, इन्फ्लुएँजा, सर्दी-खाँसी एवं नासिका-विकार का शिकार बन जाते हैं।

शरीर में रहने वाले अनेक विषैले पदार्थों एवं उनसे होने वाली बीमारियों से शरीर को मुक्त करने के लिये और सम्बद्ध अंगों को स्वस्थ रखने के लिए प्राणायाम अत्यावश्यक है। प्राणायाम का अभ्यासी इन रोगों से मुक्त हो जाता है।

अब हम 'प्राणायाम क्या है' यह समझने की चेष्टा करेंगे। प्राण का अभिप्राय ऊर्जा है तथा श्वास लेना, श्वास छोड़ना और श्वास रोकना–इन तीनों क्रियाओं का सम्मिलित रूप प्राणायाम है। साधारणतः मनुष्य प्राणायाम के नाम से डरते हैं। इसके विषय में कुछ गलत धारणायें प्रचलित हैं, उदाहरणार्थ–प्राणायाम के अभ्यास में ताकत के साथ श्वास जिन अंगों में खींची जाती है वे अंग किसी भी क्षण फट सकते हैं और व्यक्ति की मृत्यु सम्भव है। यह बात वास्तविकता से बहुत दूर है। हम यहाँ पर जीवन के लिए खतरा उत्पन्न करने वाली किसी भी बात का पक्ष नहीं ले रहे हैं। योग का यह उद्देश्य नहीं है और न इसमें ऐसी बातों का स्थान है।

अतः पाठकों को इन गलतफहमियों में नहीं रहना चाहिए। कुछ ऐसे उच्च अभ्यास अवश्य हैं जिन्हें केवल अधिकारी शिष्यों को प्रत्यक्ष निर्देशन में सिखलाया जाता है। यहाँ जिस प्राणायाम चर्या का वर्णन किया जा रहा है, वह सर्वसाधारण के लिए है। इससे कोई खतरा नहीं है। सभी इसका अभ्यास कर सकते हैं।

साधारण श्वास-प्रश्वास क्रिया के भी तीन चरण होते हैं, जो सदैव क्रियाशील रहते हैं, चाहे हम प्राणायाम का अभ्यास करें या न करें। ये तीन चरण हैं–श्वास लेना, छोड़ना एवं सुगमतापूर्वक कुछ क्षणों के लिये श्वास को रोकना। सभी प्राणायाम कुछ विशेषता लिये हुए इन्हीं तीन क्रियाओं के योग से बने हैं।

लाभ

प्राणायाम के अभ्यास से फेफड़े लचीले और मजबूत बनते हैं। शरीर में गर्मी उत्पन्न होती है, जो सामान्य स्वास्थ्य के लिए लाभकारी प्रभावों को उत्पन्न करती है। शरीर को प्रचुर मात्रा में आक्सीजन की प्राप्ति होती है। जितनी अधिक ऑक्सीजन शरीर में पहुँचेगी उतनी ही कार्बन डाइऑक्साइड शरीर से बाहर निकलेगी।

शारीरिक व्यायाम से शरीर में रासायनिक परिवर्तन और तत्त्वों का विखण्डन होता है। परिणामत: शक्ति का ह्रास होता है। इसकी पूर्ति प्राणायाम के द्वारा शरीर में अधिक ऑक्सीजन पहुँचाकर की जाती है। मस्तिष्क एवं तंत्रिकाओं पर भी प्राणायाम का अच्छा एवं पुष्टिदायक प्रभाव पड़ता है। यह मस्तिष्क के कार्यों को सुव्यवस्थित करता है। मस्तिष्क के छोटे एवं बड़े प्रसुप्त केन्द्रों को जाग्रत करता है और उन्हें शक्ति प्रदान करता है, छुपी हुई प्रतिभाओं का जागरण होता है। प्राणायाम के नियमित अभ्यास से पिट्यूटरी तथा पीनियल ग्रन्थियों का बहुमुखी विकास होता है।

प्राणायाम श्वसन संस्थान को ही लाभ नहीं पहुँचाता, वरन् कान, आँख एवं गले की बीमारियों में भी लाभ पहुँचाता है। आसन की तरह प्राणायाम का भी आरोग्यकर एवं रोग निवारक प्रभाव होता है। सर्वप्रथम यह शरीर के विभिन्न अंगों को क्रमश: ऊर्जा प्रदान कर उन्हें शक्तिमान् बनाता है और तब उन्हें रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करता है। यदि कोई बीमारी हो जाती है तो विभिन्न प्राणायामों द्वारा उसका भी उपचार किया जा सकता है। रोग उपचार के लिए प्राणायाम उन्हीं से सीखना चाहिए जो इसके विशेषज्ञ हों तथा जिन्होंने इसका अभ्यास सफलतापूर्वक किया हो।

प्राणायाम का प्रभाव श्वसन यंत्रों पर ही नहीं, बल्कि शरीर के अन्य अंगों पर भी पड़ता है। यकृत एवं गुर्दे आदि सुव्यवस्थित हो जाते हैं और उनके सुचारु कार्य के परिणामस्वरूप रक्त संचार की गति तेज हो जाती है तथा ऑक्सीकरण की क्रिया तेजी से होने लगती है। प्राणायाम शरीर से अशुद्धियों को दूर करने में सहायक होता है। प्राणायाम आँतों को व्यवस्थित कर भूख को बढ़ाता है एवं इससे कब्ज दूर होती है। प्राणायाम केवल श्वसन-तंत्र के लिए उपयोगी नहीं, बल्कि सामान्य स्वास्थ्य को बनाए रखने और शारीरिक संस्थानों के पुष्टिकरण के लिए भी आवश्यक है।

प्राणायाम के उच्च अभ्यास के समय मन कुछ समय के लिए विश्रान्त एवं विचार रहित हो जाता है, जिससे विश्राम मिलता है। श्वास रोकने के अभ्यास के समय भी मन को विश्राम मिलता है। मन को विश्राम देने की और कोई विधि नहीं है, क्योंकि हर क्षण इसमें विचार उत्पन्न होते रहते हैं। प्राणायाम के अभ्यास के समय मन स्थिर हो जाता है और विचार-प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है। इसलिए प्राणायाम मन को ध्यान के लिए तैयार करने का एक उत्तम अभ्यास माना जाता है।

प्राणायाम के द्वारा हम तंत्रिकाओं पर नियंत्रण प्राप्त करते हैं। जैसे ही इसका अभ्यास प्रारम्भ किया जाता है, तंत्रिकाओं का तनाव कम हो जाता है और असाधारण शक्ति तथा ऊर्जा प्राप्त होती है। प्राणायाम एक ऐसी विधि है जो निश्चित रूप से तंत्रिका-तंत्र को सुव्यवस्थित करती है। मानव संस्थान से अशुद्धियों को निकालने के लिए प्राणायाम एक उत्तम अभ्यास है। यह प्राण वाहिकाओं के शुद्धिकरण की प्रक्रिया है।

प्राण का मन के साथ प्रगाढ़ सम्बन्ध है। प्राणमय कोश का प्राण अन्य कोशों, जैसे, अन्नमय कोश, मनोमय कोश आदि से आन्तरिक रूप से जुड़ा हुआ है। अत: प्राण विचारों, भावनाओं, संवेगों आदि से प्रभावित होता है और वे भी प्राण से प्रभावित होते हैं।

प्राणायाम की विधियाँ

अब हम प्राणायाम के विविध प्रकारों की चर्चा के साथ उनकी विभिन्न विधियों तथा बीमारियों में उनके उपचारात्मक प्रयोगों का विवरण देंगे।

प्राणायाम की तीन आवश्यकतायें हैं–आसन, मुद्रा एवं प्रक्रिया। इसके लिए एक तह किये कम्बल की आवश्यकता है। हमें ऐसे स्थान का चुनाव करना चाहिए जहाँ शान्त एवं शुद्ध वातावरण हो। प्राणायाम का अभ्यास दुर्गंधमय, गन्दे तथा धुएँ वाले स्थान में नहीं करना चाहिए। यहाँ तक कि शीतकाल में भी एक खुला तथा हवादार कमरा प्राणायाम के अभ्यास के लिए अति उत्तम है। प्राणायाम का अभ्यास फर्श पर तह किये कम्बल पर बैठ कर करना चाहिए। प्राणायाम के लिए प्रात:काल का समय अति उत्तम है।

आसन का अभ्यास करने वालों को प्रात: नित्य क्रिया, स्नान आदि से निपट कर आसन का अभ्यास करना चाहिए। प्राणायाम का अभ्यास आसन के पश्चात् करना चाहिए। ध्यान में रखने योग्य महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्राणायाम का अभ्यास खाली पेट या खाने के कम-से-कम चार घण्टे के बाद ही करना चाहिए। ग्रीष्म ऋतु में प्राणायाम का अभ्यास कम कर देना चाहिए तथा शीत ऋतु में धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए।

प्राणायाम के लिए कौन-सा आसन उपयुक्त है? प्राणायाम के लिए अति उत्तम आसन पद्मासन एवं सिद्धासन हैं। जो पद्मासन में बैठ सकते हैं, उन्हें शान्तिपूर्वक पद्मासन में बैठना चाहिए। एक बात की सावधानी रखी जाये कि

रीढ़ की हड्डी, सिर और गर्दन एक सीध में रहें। जिस आसन में चाहें, उसमें बैठ सकते हैं, परन्तु आसन आरामदायक होना चाहिए, ताकि अभ्यास के समय बदलना न पड़े।

प्राणायाम के समय आँखें बन्द रखें। नासिका को पकड़ने के लिए दाहिना हाथ स्वतंत्र रहे। बायाँ हाथ आराम से घुटने के पास या उसके ऊपर रखा जाये या हथेली को ऊपर की ओर गोद में भी रख सकते हैं।

प्राणायाम के अभ्यास के समय नासिकाओं को बन्द करना पड़ता है। नासिका को किसी भी तरह से पकड़ा जा सकता है, परन्तु सही विधि इस प्रकार है–जब बायाँ नासिका छिद्र बन्द करना होता है तब दाहिने हाथ की अनामिका से करते हैं। जब दाहिना नासिका छिद्र बन्द करना हो तो दाहिने हाथ के अँगूठे से करते हैं।

बिना अपवाद के प्रत्येक व्यक्ति प्राणायाम का अभ्यास कर सकता है। सच तो यह है कि हर जीव श्वास लेता एवं छोड़ता है एवं दूसरे शब्दों में प्राणायाम करता है। इसीलिये बीमार व्यक्ति भी कुछ सुगम एवं सरल प्राणायाम का अभ्यास कर सकते हैं। जो अत्यधिक कमजोर हैं, वे लेटे-लेटे ही हल्के प्राणायाम कर सकते हैं। ऐसे व्यक्तियों को फेफड़ों में धीरे-धीरे वायु भरनी तथा निकालनी चाहिए। ऐसा हम सब चेतन या अचेतन रूप में कर भी रहे हैं। प्राणायाम की विधियाँ केवल यही सिखाती हैं कि इसे ठीक ढंग से कैसे किया जाए।

अब हम विभिन्न प्रकार के प्राणायाम एवं उनकी विधियों के विषय में चर्चा करेंगे। प्राणायाम के तीन सोपान हैं– *पूरक, रेचक और कुम्भक।*

जब हम श्वास लेते हैं तब उसे 'पूरक' कहते हैं। नि:श्वास या श्वास बाहर छोड़ने की क्रिया 'रेचक' कहलाती है। जब श्वास रोकी जाती है तब उसे कुम्भक कहते हैं।

कुम्भक के दो प्रकार हैं। श्वास को भीतर रोकना अन्तर्कुम्भक कहलाता है और श्वास बाहर छोड़ने के बाद श्वास रोकने को बहिर्कुम्भक कहते हैं। आगे इन्हीं शब्दों का प्रयोग किया जायेगा। अत: इन्हें ध्यान में रखिये। श्वास लेने को पूरक, छोड़ने को रेचक, श्वास भीतर रोकने को अन्तर्कुम्भक एवं बाहर रोकने को बहिर्कुम्भक कहा जाता है।

महत्त्वपूर्ण प्राणायाम हैं–सुखपूर्वक, समवेत, सहित, नाड़ी शोधन, भ्रामरी, उज्जायी, शीतली, शीतकारी, भस्त्रिका, सूर्यभेद, केवली, प्लाविनी और चतुर्थ।

सरल या सुखपूर्वक प्राणायाम

यहाँ स्मरण रखना है कि पूरक उसी नासिका से करना है जिससे रेचक करते हैं। रेचक और फिर पूरक एक ही नासिका से किया जा सकता है, किन्तु पूरक और रेचक एक ही बार में एक ही नासिका से नहीं करना चाहिए। यदि एक नासिका पूरक कर रही है तो दूसरी नासिका को रेचक करना चाहिए। इसका अर्थ होगा कि स्वत: पूरक उसी नासिका से किया जाएगा जिससे रेचक होता है। इस प्रकार अभ्यास करने से दोनों नासिकाओं द्वारा वायु-प्रवाह की सघनता समान हो जाती है। इस अभ्यास से प्राणायाम के समस्त लाभ प्राप्त हो जाते हैं। सोते समय जिनकी नासिकाएँ संकुचित हो जाती हैं, वे इस अभ्यास से स्वत: खुल जाती है। जिन्हें खांसी और श्लेष्म की सम्भावना रहती है, उन्हें प्रतिदिन 5 से 7 मिनट तक इस अभ्यास को करना चाहिए।

प्रसन्न चित्त से प्राणायाम का अभ्यास करें। आपको असाधारण लाभ प्राप्त होंगे। अन्यमनस्क होकर असावधानीपूर्वक अथवा उतावलेपन से प्राणायाम करना अहितकर हो सकता है।

अभ्यास

पद्मासन या सिद्धासन की स्थिति में बैठ जायें। मन को शांत कर लें।
एक मिनट तक शांति से बैठें और स्वयं को प्राणायाम के लिए तैयार करें।
अब दाहिने हाथ को ऊपर उठाकर नासाग्र मुद्रा (नासिका छिद्रों को अँगूठे एवं अनामिका अंगुली से बन्द करना और खोलना) लगायें।
पहले दाहिने नासिका-छिद्र को बन्द कर केवल बायें नासिका-छिद्र से श्वास लें। सामान्य रूप से जितना सम्भव हो, धीरे-धीरे श्वास लें। जब फेफड़े वायु से भर जायें तब बायें नासिका छिद्र को बन्द कर लें।
दाहिने नासिका छिद्र को खोलें और धीरे-धीरे श्वास छोड़ें। जब पूरी श्वास बाहर निकल जाये, तब उसी नासिका छिद्र (दाहिनी) से पूरी श्वास अन्दर लें। अब उसे बन्द करें और बायें नासिका छिद्र को खोलें और धीरे से श्वास छोड़ें। यह एक आवृत्ति हुई।
प्रक्रिया इस प्रकार है–बायें नासिका छिद्र से पूरक और दाहिने से रेचक, फिर दाहिने से पूरक और बायें से रेचक। यह एक पूर्ण आवृत्ति है। फिर से बायें से पूरक और इसी प्रकार इसकी पुनरावृत्ति 15–20 बार करें।

समवेत प्राणायाम

सुखपूर्वक प्राणायाम के अभ्यास के पश्चात् इसका अभ्यास करना चाहिए। इसके सब नियम सुखपूर्वक प्राणायाम की तरह ही हैं।

अभ्यास

दोनों नासिका छिद्रों से एक साथ पूरक करें। फेफड़ों में अधिक-से-अधिक वायु भरें। 1 से 3 सैकण्ड तक श्वास रोकें और पुन: दोनों नासिका छिद्रों से रेचक करें।
उसके बाद पुन: दोनों नासिका छिद्रों से धीरे-धीरे पूरक करें।
फिर उसी प्रकार रेचक करें।

सहित प्राणायाम

इस प्राणायाम में पूरक और रेचक की क्रियाओं के साथ कुम्भक जोड़ा गया है। इसमें अत्यधिक बल प्रयोग की आवश्यकता नही है। बिना कठिनाई के जब तक सुविधापूर्वक हो सके श्वास को रोकें। हर व्यक्ति कुछ समय तक श्वास रोक सकता है। अभ्यास में प्रगति करने पर फेफड़ों के लचीलेपन के साथ श्वास रोकने की शक्ति भी बढ़ेगी।

अभ्यास

समवेत प्राणायाम की तरह ही पूरक करें।
दोनों नासिका छिद्रों को बन्द कर कुम्भक करें।
सुविधापूर्वक जितनी देर श्वास रोक सकें, रोकें।
अब दोनों नासिका छिद्रों से धीरे-धीरे श्वास छोड़ें। यह एक आवृत्ति है।

नाड़ी शोधन प्राणायाम

यह पूर्व वर्णित सहित प्राणायाम की तरह ही है, अन्तर मात्र इतना है कि इसमें पूरक, कुम्भक एवं रेचक की अवधि का अनुपात 1:4:2 निर्धारित रखना होता है और श्वास एकान्तर विधि से लेनी होती है। यानी बायीं नासिका से श्वास

लेकर दाहिनी नासिका से छोड़ना और फिर दाहिनी नासिका से श्वास लेकर बायीं नासिका से छोड़ना।



नाड़ी शोधन प्राणायाम तीन प्रकार के होते हैं–उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ। सभी सावधानी से धीरे-धीरे सीखने चाहिए।

पूरक 12, कुम्भक 48, रेचक 24; योगी इसे कनिष्ठ प्राणायाम कहते हैं।

पूरक 16, कुम्भक 64, रेचक 32; इसे मध्यम कहते हैं।

पूरक 20, कुम्भक 80, रेचक 40, इसे उत्तम प्राणायाम कहते हैं।

यह प्राणायाम नाड़ी का शोधन करता है तथा अशुद्धियों को दूर करता है। इसके अभ्यास से शरीर हल्का हो जाता है। साधक अपनी नाड़ियों एवं शरीर पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लेता है।

अभ्यास

किसी आरामदायक आसन में बैठें।

मानसिक रूप से 1 से 4 तक गिनती गिनते हुए बायीं नासिका से पूरक करें।

दोनों नासिका छिद्र बन्द कर 1 से 16 की गिनती तक कुम्भक करें।

श्वास रोकने की अवधि को इस प्रकार निश्चित करें कि पूरक की अवधि से यह चार गुणा अधिक हो। फिर 1 से 8 तक गिनती गिनते हुए दाहिने नासिका छिद्र से रेचक करें।

अब इस अभ्यास को पूर्व अनुपात, अर्थात् दाहिनी नासिका से पूरक, फिर कुम्भक और बायीं नासिका से रेचक के पूर्व अनुपात 4:16:8 में ही दुहरायें।

भ्रामरी प्राणायाम



यह बहुत सरल प्राणायाम है। प्रथम दिन से ही कोई भी अच्छी तरह इसका अभ्यास कर सकता है। इस प्राणायाम के अभ्यास से गले की सभी बीमारियाँ धीरे-धीरे दूर हो जाती हैं। कंठ नलिका मजबूत बनती है तथा आवाज सुरीली होती है। भ्रामरी का अभ्यास एकान्त में, रात्रि में अधिक विलम्ब से या प्रात:काल के प्रथम प्रहर में किया जाना चाहिए।

अभ्यास

शान्त मन से किसी सुविधाजनक आसन में बैठें।
तर्जनी अँगुलियों से दोनों कानों को बन्द करें।
अब धीरे-धीरे पूर्णरूपेण श्वास लें और एक क्षण के लिए श्वास रोकें।
अब मधुमक्खी के समान गुँजन की आवाज के साथ धीरे-धीरे श्वास छोड़ें।
गुँजन की आवाज पूर्ण श्वास के बाहर आने तक करें।
मुँह बन्द रहना चाहिए, परन्तु ऊपर-नीचे की दन्त पंक्तियाँ एक-दूसरे से थोड़ी विलग रहनी चाहिए। जिह्वा भी न हिले। ध्यान पूर्णत: गुँजन की आवाज पर केन्द्रित हो। गुँजन की आवाज की निरन्तरता तथा एकरूपता अन्त तक नहीं टूटनी चाहिए।

उज्जायी प्राणायाम

यह प्राणायाम उन व्यक्तियों के लिए अत्यधिक लाभप्रद है, जिनके टाँसिल बढ़े हुए हैं या जिन्हें खाँसी व जुकाम जल्दी हो जाता है और जिन्हें जल्दी इन्फ्लुएँजा अथवा ब्रोंकाइटिस की शिकायत हो जाती है। संगीत सीखने वालों के लिए भी यह लाभदायक है। अधिकतर देखा जाता है कि अधिक अभ्यास से उनकी आवाज भारी हो जाती है। कभी-कभी अचानक उन्हें गले में तकलीफ हो जाती है। यदि वे इस प्राणायाम का नियमित अभ्यास करें तो उनका गला सदा स्वस्थ रहेगा एवं आवाज सुरीली एवं मीठी हो जायेगी।

टाँसिलाइटिस वाले यदि यह अभ्यास करें तो उनकी तकलीफ दूर हो जायेगी। कान, नाक और गले के रोगों पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है और उच्च रक्तचाप भी घट जाता है।

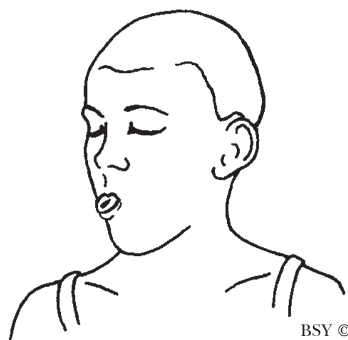
अभ्यास

किसी आरामदायक आसन में बैठें और आँखें बन्द कर लें।
मुँह बन्द रहेगा तथा श्वसन क्रिया नासिका से होगी।
श्वास लेते समय शिशु के खर्राटे की सी आवाज गले से उत्पन्न करें।
आवाज निकालने के लिए जिह्वा के नीचे के मूल भाग को तालू से छुआते हुए (खेचरी मुद्रा) श्वास लें।
भाप के इंजन जैसी आवाज करते हुए पूरक करें। कुछ क्षण श्वास रोक कर पहले की भाँति ध्वनि करते हुए रेचक करें।
इसमें सी-सी जैसी आवाज होनी चाहिए। इसकी 10 से 12 आवृत्तियाँ प्रतिदिन की जानी चाहिए।

शीतली प्राणायाम

इसका अभ्यास गले एवं जीभ की बीमारियाँ को दूर करने के लिए किया जाना चाहिए। गले के दर्द एवं टाँसिल पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है। शीतली, शीतकारी तथा उज्जायी का अभ्यास हकला कर या तुतलाकर बोलने वाले के उपचार के लिये किया जाता है। मुँह में फोड़े हों या जीभ सूखती हो तब इस प्राणायाम का अभ्यास उपचार के रूप में प्रतिदिन करना चाहिए।

शीतली प्राणायाम में पूर्णता प्राप्ति के पश्चात् व्यक्ति भूख-प्यास रोक सकता है। यह जुकाम, कब्ज, सबको ठीक करता है। यह प्राणायाम योगियों के लिए वरदान है।


BSY ©

अभ्यास

किसी भी सुविधाजनक आसन में बैठ जायें।
जीभ को बाहर निकालें एवं उसे एक नलिका या गोल ट्यूब के रूप में मोड़ें।
धीरे-धीरे श्वास लें ताकि फेफड़ों में पूर्ण रूप से वायु भरी जा सके।
अब नासिका से रेचक करें।
रेचक करते समय जीभ भीतर कर लें।
पुनः जीभ बाहर निकाल कर ट्यूब की आकृति बनायें एवं पूरक करें।
अब जीभ भीतर कर नासिका से रेचक करें।
प्रतिदिन इसकी 8 से 10 आवृत्तियों का अभ्यास करें।

शीतकारी प्राणायाम

इस प्राणायाम में पूरक मुँह से एवं रेचक क्रिया नाक से होती है। कुम्भक क्रिया नहीं होती। यह प्राणायाम सुखद प्राणवर्द्धक प्रभाव पैदा करता है तथा मुँह, गले एवं नाक की बीमारी में लाभदायक प्रभाव डालता है।

अभ्यास

इस प्राणायाम में जिह्वा के अग्र भाग को तालू से छूता हुआ रखें।
ऊपर के दाँत नीचे के दाँतों पर जमाये रखें।
ओंठ खुले रखें और फुफकारने की-सी आवाज करते हुए श्वास मुँह से लें।
दाँत एवं जीभ अपनी स्थिति से न हिलें।


BSY ©

जीभ के दोनों ओर से खुले स्थान से हवा भीतर जाने के लिए पर्याप्त स्थान रहता है। पूरक के बाद नासिका से रेचक करें।
प्रतिदिन इसकी 8 से 10 आवृत्तियाँ करें।

भस्त्रिका प्राणायाम

भस्त्रिका सबसे महत्त्वपूर्ण प्राणायाम है। यद्यपि जिनके हृदय या फेफड़े कमजोर हैं या जो बीमार हैं उन्हें इसका अभ्यास नहीं करना चाहिए। जो व्यक्ति सामान्य रूप से स्वस्थ है, उन्हें इसका नियमित अभ्यास करना चाहिए। भस्त्रिका प्राणायाम में यह महत्त्वपूर्ण है कि श्वास लेने और छोड़ने में एक समान बल का प्रयोग हो। दूसरा, नासिका की दीवारों पर अनावश्यक दबाव न डालें। धौंकनी की भाँति सामान्य क्रिया होनी चाहिए।

20 बार तेज गति से पूरक-रेचक, फिर कुम्भक और अन्त में रेचक से भस्त्रिका प्राणायाम का एक चक्र पूरा होता है। इसका एक बार में 5 चक्र तक अभ्यास किया जा सकता है। प्रत्येक चक्र के पश्चात् कुछ क्षण विश्राम करें। इस प्राणायाम को प्रात:काल और सन्ध्या में किया जा सकता है।

इस प्राणायाम के अभ्यास से शरीर को अधिक मात्रा में ऑक्सीजन की प्राप्ति होती है तथा अधिक कार्बन डाइऑक्साइड बाहर निकलती है। रक्त शुद्ध होता है और तेजी से तथा अधिक मात्रा में सम्पूर्ण शरीर में संचालित होता है।

इससे कमजोर फेफड़ों को स्वास्थ्य एवं बल प्राप्त होता है। आइए, अब इस अभ्यास को सीखें।

अभ्यास

दोनों नासिका छिद्रों से धीरे-धीरे पूर्ण पूरक करें, इसके पश्चात् रेचक। इसमें उदर का लयबद्ध तरीके से विस्तार और संकुचन होना चाहिए। मुँह बन्द रखें।
4–5 बार ऐसा करने के पश्चात्, पूरक तथा रेचक की गति धीरे-धीरे बढ़ाते जायें, जिससे 10–12 बार ऐसा करने के पश्चात् लुहार की धौंकनी की भाँति श्वसन क्रिया होने लगे।
बिना रुके पूरक-रेचक की इस संयुक्त क्रिया को 20 बार करने के पश्चात् एक लम्बा पूरक करें और अन्तर्कुम्भक लगाएँ।

अन्तर्कुम्भक की इस स्थिति में सुविधाजनक अवधि तक रुकें।
इसके पश्चात् श्वास बाहर छोड़ें और फेफड़ों को धीरे-धीरे खाली करें।
सामान्य श्वसन करते हुए कुछ क्षण विश्राम करें।
फिर इस प्राणायाम को दुहरायें।
कुम्भक के दौरान आप गिनती कर सकते हैं।

केवली प्राणायाम

इस प्राणायाम से मानसिक एकाग्रता की प्राप्ति होती है।

अभ्यास

केवली प्राणायाम में श्वास-प्रश्वास की क्रिया निम्नलिखित प्रकार से होती है–
श्वास लेते हुए मानसिक रूप से 'सो' का उच्चारण करें। श्वास छोड़ते समय 'हं' शब्द का उच्चारण करें।
इस प्रकार मानसिक रूप से 'सोऽहं' का उच्चारण जारी रखें।

प्लाविनी प्राणायाम

इससे पाचन-शक्ति बढ़ती है। आँतों से सम्बन्धित बीमारियों में लाभ होता है।

अभ्यास

किसी भी सुविधाजनक आसन में बैठ जायें।
पानी पीने की तरह मुँह से तब तक वायु को पीते जायें, जब तक कि पेट वायु से न भर जाए।
फिर मुँह से इस प्रकार वायु को बाहर निकालें कि अन्दर ली गई पूरी वायु तुरन्त बाहर निकल जाए।

चतुर्थ प्राणायाम

इस प्राणायाम में पूरक एवं रेचक को करने में लिया जाने वाला समय और इनकी आवृत्ति को समान रखा जाता है। पूरक एवं रेचक की समयावधि एवं आवृत्ति को समान बनाये रखने के लिए मंत्र जप की संख्या को गिना जाता है।

अभ्यास

1 से 4 अथवा किसी भी संख्या तक गिनती गिनने तक पूरक करें। उतनी ही गिनती तक तथा उसी गति से रेचक करें।

कुछ समय पश्चात् संख्या के स्थान पर मानसिक रूप से मंत्र का उच्चारण करें।

यदि मानसिक रूप से आप ॐ का उच्चारण श्वास लेते समय चार बार करते हैं तो उसी प्रकार श्वास छोड़ते हुए ॐ का चार बार उच्चारण करें। इसका अभ्यास प्रतिदिन 10 से 15 मिनट तक करें।

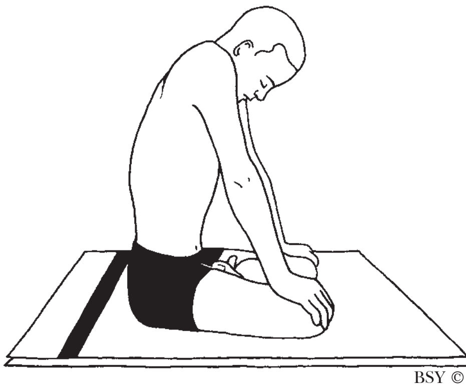
उपसंहार

विभिन्न प्रकार के प्राणायामों का वर्णन किया गया है। प्रतिदिन सभी प्राणायामों का अभ्यास करना आवश्यक नहीं है। इनका अभ्यास धीरे-धीरे दिन-प्रतिदिन बढ़ाना चाहिये। अच्छा स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये प्रतिदिन 10 मिनट का अभ्यास पर्याप्त है। साधक को अपने योग्यतानुसार निश्चित करना चाहिये कि कौन-कौन से प्राणायामों का अभ्यास उसके लिये आवश्यक है।

प्राणायाम के समय निकले हुए पसीने की शरीर पर मालिश करनी चाहिये। गलत धारणाओं को मन से निकाल दीजिये और प्रतिदिन 3-4 प्राणायाम नियमित रूप से कीजिए। आप स्वयं ही उनके लाभों का अनुभव करेंगे।

बन्ध

'बन्ध' आन्तरिक अंगों के आकुंचन का अभ्यास है। यह शरीर की नसों से जुड़े हुए स्वचालित (अनैच्छिक रूप से क्रियाशील) अंगों के व्यायाम एवं उन पर नियंत्रण पाने के लिए एक यौगिक क्रिया है। इनका तंत्रिका-जाल पर हितकर प्रभाव पड़ता है। अनेक अंगों को सक्रिय एवं सुचारु रूप से कार्यरत बनाने में इनसे मदद मिलती है। इनकी मनोवैज्ञानिक एवं शारीरिक उपयोगिता अपूर्व है।

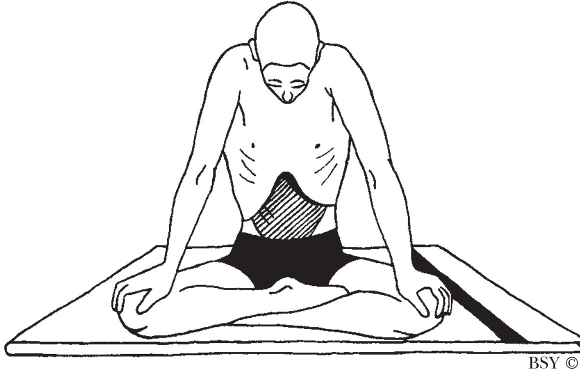


योग में युग-युगान्तर से लोग चार प्रकार के बन्धों को जानते और उनका अभ्यास करते आये हैं। वे इस प्रकार हैं–मूल, जालन्धर, उड्डियान एवं महाबन्ध। बन्धों के अभ्यास की विधियों का वर्णन नीचे किया जा रहा है–

जालन्धर बन्ध

पूरक के बाद अन्तरंग कुम्भक करें और सिर को सामने झुकायें तथा ठुड्ढी को छाती पर दबायें और कण्ठ की पेशियों को संकुचित करें। रेचक से पहले सिर को ऊपर उठायें। श्वास को बाहर रोक कर भी यह अभ्यास किया जा सकता है।

लाभ – जालन्धर बन्ध थायरॉइड ग्रन्थि के कार्यों को नियन्त्रित करता है। इसी ग्रन्थि के कार्यों पर पूर्ण शारीरिक विकास निर्भर रहता है। यह 'बन्ध' गले की किसी भी प्रकार की खराबी दूर करने में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है।



उड्डियान बन्ध

ध्यान के किसी आसन में बैठ जायें। घुटने भूमि पर सटाये रखें। हथेलियों को घुटनों पर रखें।

आँखें बन्द करें और सम्पूर्ण शरीर को विश्रान्त करें।

दीर्घ रेचक के बाद बहिर्कुम्भक तथा जालन्धर बन्ध लगायें।

उदर की मांसपेशियों को अधिक-से-अधिक ऊपर तथा भीतर की ओर संकुचित करें। यह अन्तिम स्थिति है।

जब तक श्वास को बाहर रोक सकें, तब तक इस बन्ध को लगाये रखें।

अब क्रमश: उदर की पेशियों तथा जालन्धर बन्ध को शिथिल करें। उसके बाद पूरक करें।

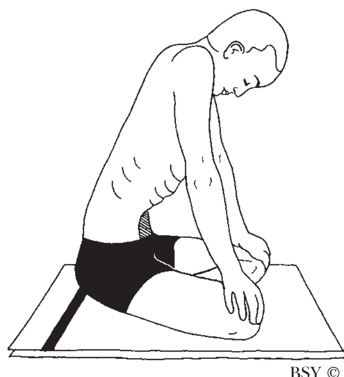
यह उड्डियान बन्ध कहलाता है। उड्डियान का शाब्दिक अर्थ है उड़ान भरना। अत: उदरीय पेशियों को उड़ान भर कर वक्ष-कोटर में प्रवेश करने दें।

लाभ– इसके अभ्यास से कब्ज दूर होती है और जठराग्नि उद्दीप्त होती है, आँत की खराबी एवं कृमि दूर होते हैं। यकृत एवं गुर्दे क्रियाशील होते हैं। एड्रिनल ग्रन्थियाँ तथा हाइपोगेस्ट्रिक पलेक्सस सुचारु ढंग से कार्य करने लगते हैं।

मूलबन्ध

सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में बैठ जायें।
पूरक करें, अन्तर्कुम्भक लगायें और मूलाधार की पेशियों को संकुचित करें।
इस अवस्था में जब तक आराम से सम्भव हो, रुकें। अब रेचक करें।

लाभ– मल अवरोधिनी पेशियों को मजबूत बनाता है। मूत्र-संस्थान और यौन-अंगों की गड़बड़ियों को दूर करता है और नाड़ियों एवं पेशियों को सबल बनाता है।



महाबन्ध

सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में बैठें और श्वास को बाहर रोककर क्रमश: जालन्धर, उड्डियान एवं मूलबन्ध लगायें।

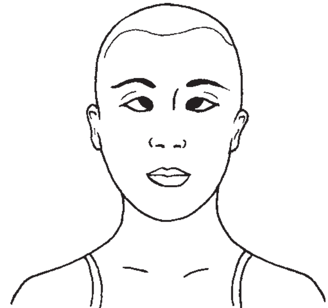
लाभ– महाबन्ध से अन्त:स्रावी ग्रंथियों के स्रावों पर नियंत्रण प्राप्त होता है। यह स्वास्थ्य एवं स्फूर्ति प्रदान करता है।

मुद्राएँ

मुद्राएँ विभिन्न शारीरिक ग्रंथियों के कार्यों एवं प्रसुप्त पड़े अतीन्द्रिय शक्ति केन्द्रों की क्रियाशीलता बढ़ाने की तकनीकें हैं। इनकी उपयोगिता के दो क्षेत्र हैं। प्रथम शारीरिक है तथा द्वितीय मानसिक। ये तंत्रिकाओं से जुड़े स्वचालित अंगों को नियंत्रित करने की विधियाँ है। मुद्राएँ व्यक्ति को स्वयं की आन्तरिक चेतन शक्ति के निकट पहुँचाने में सहायक होती हैं।

योगी अथवा योग के अभ्यासी तब तक उन्नति नहीं कर सकते हैं जब तक उन्होंने मुद्राओं के अभ्यास में पूर्णता न प्राप्त कर ली हो। अनुभव से यह ज्ञात हुआ है कि मुद्राएँ बहुत प्रभावशाली एवं लाभदायक होती हैं। नीचे महत्त्वपूर्ण मुद्राओं का वर्णन किया गया है।

शाम्भवी मुद्रा



ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जायें। अपनी आँखों को भ्रूमध्य की ओर निर्दिष्ट करें और स्वयं पर ध्यान लगायें। इसे शाम्भवी मुद्रा के नाम से जाना जाता है।

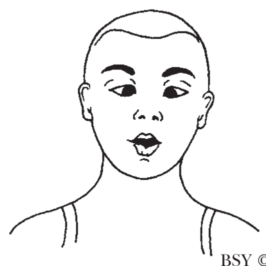
लाभ–इसके अभ्यास से श्वास एवं विचारों पर नियन्त्रण प्राप्त होता है। कुछ समय के लिए मन विचार रहित हो जाता है एवं आत्मिक जगत् में प्रवेश सरल हो जाता है। सूक्ष्म क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए यह बहुत महत्त्वपूर्ण विधि है। इस मुद्रा के अभ्यास से अनिद्रा-रोग छूट जाता है।

नभो मुद्रा

नभ का अर्थ होता है आकाश। नभो मुद्रा में भ्रूमध्य में दृष्टि एकाग्र करते हुए जिह्वा को तालू की ओर मोड़ा जाता है। नभो मुद्रा में तब निपुणता आती है, जब आप शाम्भवी मुद्रा लगाकर जिह्वा को पीछे की ओर मोड़कर तालू का स्पर्श करें।

लाभ– मुद्राएँ शारीरिक स्वास्थ्य के लिए लाभकारी हैं। ये आध्यात्मिक शक्तियों को विकसित करने के लिए प्रारम्भिक अभ्यास भी हैं। नभो मुद्रा एक बहुत ही आश्चर्यजनक अभ्यास है। जब जीभ को ऊपर की ओर मोड़ा जाता है एवं इस स्थिति में कुछ देर रखा जाता है तब जंभिका ग्रन्थियों से रस स्रावित होने लगता है। इस रस को निगल लेना चाहिए। यह लारमय रस भूख के लिए एवं युवावस्था कायम रखने के लिए बहुत लाभकारी है। तालू प्रदेश में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण यौगिक केन्द्र है, अत: जीभ को तालू से स्पर्श करना बहुत महत्त्वपूर्ण है।

काकी मुद्रा



होठों से कौए की चोंच की तरह एक संकीर्ण नली बनायें।
मुँह से धीरे-धीरे पूरक करें।
नासिका से धीरे-धीरे रेचक करें।

लाभ– यह मुद्रा पाचक रसों के स्राव को उद्‍दीप्त करती है।

खेचरी मुद्रा

मुँह बन्द कर लें। जिह्वा को पीछे की ओर मोड़ें, ताकि इसका नीचे का तल ऊपर के तालू का स्पर्श करे। जिह्वा को तालू प्रदेश में पीछे की ओर जितना सम्भव हो धीरे-धीरे ले जायें।
जितनी देर तक सम्भव हो रुकें और उज्जायी प्राणायाम करें। असुविधा का अनुभव होने पर कुछ क्षणों के लिए जिह्वा को शिथिल कर दें।

लाभ–अभ्यास से जिह्वा स्वत: नासा-कोटरों में प्रवेश कर मस्तिष्क के कई अति महत्त्वपूर्ण केन्द्रों को जाग्रत करेगी। इससे शरीर को व्यापक स्वास्थ्य लाभ होता है। इसके लिए धैर्यपूर्वक लम्बे अभ्यास की आवश्यकता है। खेचरी को सिद्ध करने के पश्चात् भूख, प्यास, थकान आदि की तकलीफ नहीं होती। इसका उपयोग कुण्डलिनी जागरण के लिए किया जाता है।

भुजंगिनी मुद्रा

मुँह के द्वारा वायुपान करें और उसे आमाशय में ले जायें।
कुछ देर वायु को अन्दर रोककर डकार द्वारा उसे निष्कासित कर दें।

लाभ–भुजंगिनी मुद्रा के अभ्यास द्वारा पेट की हर प्रकार की गड़बड़ियाँ दूर की जा सकती हैं।

सारांश

नियमित अभ्यास करने वालों को इन सभी मुद्राओं से शक्ति एवं स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। ये सभी मुद्रायें महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावशाली हैं। यदि आप अभ्यास करेंगे तो स्वयं इनके लाभों से परिचित हो जायेंगे। अपने स्वयं के अनुभव से बढ़कर कोई दूसरा प्रमाण विश्वसनीय नहीं हो सकता। मुद्राओं से होने वाले लाभ शंका रहित एवं वैज्ञानिक हैं। मुद्रायें प्राणिक, मानसिक, अतीन्द्रिय एवं आध्यात्मिक अवस्थाओं के प्रति सजगता को बढ़ाती हैं।

हठयोग

'हठ' योग का तात्पर्य योगासनों से नहीं है। 'ह' प्रतीक है सूर्य या पिंगला नाड़ी अथवा प्राणिक ऊर्जा का और 'ठ' प्रतीक है चन्द्र या इड़ा नाड़ी अथवा मानसिक ऊर्जा का। हठयोग अनुकम्पी एवं परानुकम्पी तन्त्रिका-तन्त्र के परस्पर प्रतिकूल स्वभाव में समस्वरता स्थापित करने का साधन है। सुषुम्ना केन्द्रीय तन्त्रिका-तन्त्र है। यदि तन्त्रिका-तन्त्र में शुद्धता, शान्ति, समस्वरूपता और शक्ति रहती है तो अतीन्द्रिय केन्द्र जाग्रत होते हैं।

हठयोग में शुद्धिकरण की छः प्रक्रियायें आती हैं–नेति, धौति, बस्ति, कपालभाति, त्राटक और नौलि। इन्हें षट्कर्म भी कहते हैं। हठयोग के ये अभ्यास शरीर में एकत्र विषाक्त पदार्थों का निष्कासन करने में सहायक होते हैं। ये सभी अभ्यास किसी विशेषज्ञ से ही सीखने चाहिए।

नेति

हठयोग का प्रथम अभ्यास है नेति। नेति करते समय नासिका की झिल्लियों पर ऐसा प्रभाव पड़ता है कि सम्पूर्ण मस्तिष्क में सम्वेदना स्पन्दित हो जाती है तथा समस्त अवरोधों और विषादों को हटाकर यह सम्पूर्ण तन्त्र को जाग्रत कर देती है। भारत में महिलाएँ सर्दी के उपचार के लिए नासिका छिद्रों में गुनगुने गर्म तेल की कुछ बून्दें डालती हैं। ऐसा करने से छींक आती है जो नासिका मार्गों के अवरोधों को हटाकर, श्लेष्मा झिल्ली को चिकनाई प्रदान करती है। चेहरे के पक्षाघात में घी को नासिका छिद्रों से सू-सू कर खींचना अत्यन्त सहायक होता है।

अभ्यास

जल से नेति एक विशेष प्रकार के नेति लोटे से की जाती है। इस लोटे में हल्का गर्म जल भर लें और उसमें आधा चम्मच नमक मिला लें।

मुँह से श्वास लें। नेति लोटे की टोंटी को बायें नासिका छिद्र में लगायें और सिर को थोड़ा दायीं ओर झुका दें, जिससे कि जल आसानी से दायें नासिका छिद्र से गिरने लगे।

फिर इस क्रिया को दाहिने नासिका छिद्र से करें।

नासिका को अच्छी तरह सुखाने के लिए भस्त्रिका प्राणायाम करें, परन्तु विशेष जोर न लगायें।

लाभ–इसके अभ्यास से सर्दी, नासिका झिल्लियों की सूजन तथा संक्रमण समाप्त हो जाते हैं। जल नेति के बाद इसी प्रकार दूध का प्रयोग किया जा सकता है। ऐसा देखा गया है कि इससे आँख आना, मस्तिष्क विषाद और नासिका के संक्रमण ठीक हो जाते हैं।

सूत्र नेति

डॉक्टर तो सामान्यतया नासिका मार्ग के कॉटराइजेशन (प्रदाहन) का सुझाव देते हैं, पर नेति नाक के रोगों को दूर करने की सरल विधि है।

अभ्यास

आप रबर का कैथेटर ले लें। उसका एक छोर नासिका छिद्र में घुसा कर मुँह में निकाल लें और तत्पश्चात् दोनों छोरों को अंगुलियों से पकड़कर थोड़ा आगे-पीछे करें जिससे कि नासिका में हल्का घर्षण हो। दूसरे नासिका छिद्र में भी इस अभ्यास को दुहरायें। यह सूत्र नेति है।

धौति

जल से धौति एक ऐसी विधि है जिसमें गर्म नमकीन पानी के द्वारा पेट की सम्पूर्ण धुलाई की जाती है। समपूर्ण क्रिया में लगभग दो लीटर नमकीन पानी को पीकर, अंगुलियों से जिह्वा के अंतिम छोर को रगड़कर पानी का वमन (उल्टी) कर दिया जाता है। इस अभ्यास को करने के पश्चात् भोजन में सावधानी रखनी चाहिए अन्यथा गलत भोजन इस क्रिया के अच्छे प्रभावों को

मिटा देता है। जब खाली पेट इस अभ्यास को किया जाता है तब इसे कुंजल कहते हैं।

वारिसार धौति या शंख प्रक्षालन– यह आन्तरिक अंगों की सफाई की पूर्ण क्रिया है। यह क्रिया करीब 5 लीटर या अधिक कुनकुने नमकीन पानी को पीकर की जाती है। सम्पूर्ण क्रिया में पानी पीकर विशेष आसन किये जाते हैं और मल को बाहर निकाला जाता है। इस क्रिया को प्रशिक्षित व्यक्ति से सीखना चाहिए।

वस्त्र धौति– वस्त्र धौति पेट की सफाई एवं उसे सक्रिय करने की क्रिया है, जिसमें वस्त्र की एक लम्बी पट्टी को निगला जाता है। एक छोर से पकड़कर नौलि क्रिया की जाती है और फिर उसे बाहर निकाल दिया जाता है। यद्यपि यह दमा के रोगियों के लिए सर्वरोगहर औषधि है, पर इसका प्रतिदिन अभ्यास नहीं करना चाहिए।

वातसार धौति– वातसार धौति एक विशेष प्रक्रिया है। इस क्रिया में 'प्लाविनी' प्राणायाम के द्वारा वायु पेट में भर ली जाती है। आमाशय में इसे कुछ देर रोका जाता है। तब सम्पूर्ण वायु को मलद्वार या मुँह से बाहर निकाला जाता है। इस क्रिया में भीतर की अशुद्ध वायु बाहर निकल जाती है।

नौलि

अग्निसार के नियमित अभ्यास से उड्डियान बन्ध सरल हो जाता है। उड्डियान के अभ्यास में पूर्णता आ जाने पर नौलि आसानी से की जा सकती है। इस पुस्तक के सहारे नौलि सीखना सम्भव नहीं है। इसके अभ्यास से उदर की सभी पेशियाँ पुष्ट होती हैं।

बस्ति

बस्ति को यौगिक एनिमा कहा जा सकता है। इस क्रिया में अभ्यासी नौलि क्रिया से मलद्वार से पानी अन्दर खींचता है और पुन: उसे मलद्वार से बाहर निकालता है। इससे आँतों की सफाई होती है।

कपालभाति

जिस प्रकार हवा को बाहर निकालने वाले पंखे के द्वारा कमरे की गन्दी हवा बाहर निकाली जाती है, उसी प्रकार कपालभाति क्रिया द्वारा मस्तिष्क को हिलाया जाता है।

अभ्यास

बलपूर्वक प्रश्वास करते हुए तीव्रता से कई श्वास-प्रश्वास करें।
श्वास सहज रूप से बिना प्रयास के लें, सिर्फ श्वास छोड़ने में हल्का जोर लगाना है।
गहराई से प्रश्वास करें, श्वास को बाहर ही रोकें और अपनी चेतना को चिदाकाश में ले जायें।

लाभ – यह मस्तिष्क के कुछ तनावों को मिटाता है।

त्राटक

त्राटक करने की विभिन्न विधियाँ हैं। त्राटक जल, अग्नि, पृथ्वी, आकाश, वायु, एक बिन्दु, प्रकाश इत्यादि पर किया जा सकता है। प्रत्येक अभ्यास के अपने विशेष गुण हैं। कुछ अभ्यास आँखों की रोशनी और स्मृति को बढ़ाते हैं।

अभ्यास

आँखों की सीध में एक मोमबत्ती की लौ को एक भुजा की दूरी पर रखकर बैठ जायें।
आँखें बंद कर लें और शरीर को पूरी तरह निश्चल कर लें।
आँखें खोलकर मोमबत्ती की लौ के ऊपरी छोर पर अपनी दृष्टि को केन्द्रित करें।
यदि आँखों पर जोर पड़े तो उन्हें पूर्ण रूप से बन्द कर लें।
एक मिनट तक आँखों को शिथिल रखें और भीतर में लौ के प्रतिबिम्ब को देखें। आँखों को झपकायें नहीं।
10–15 मिनट तक इस अभ्यास को करें।

ध्यान की प्रक्रिया

जप-योग

संस्कृत भाषा में जप का शाब्दिक अर्थ है–भगवन्नाम की पुनरावृत्ति। विश्व के समस्त धर्मों में भगवान के नाम की पुनरावृत्ति के अभ्यास को दैनिक धार्मिक अनुष्ठान हेतु निर्धारित किया गया है। जप एक अत्यन्त शक्तिशाली कार्यसाधक के रूप में माना गया है, जो साधक को परमानन्द और मोक्ष के उन अन्तिम क्षेत्रों तक पहुँचने में समर्थ बनाता है, जिन्हें समस्त मनुष्य कभी-न-कभी प्राप्त करने की अभीप्सा रखते हैं। इसलिए वर्तमान युग में जब मनुष्य जीवन-मूल्यों के प्रति अपनी सारी समझ खो चुका है और गलत मार्ग पर अग्रसर है, ऐसे समय में सांसारिक दु:खों से छुटकारा दिलाने के लिए 'जप' या भगवान का नाम ही शक्तिशाली एवं प्रभावशाली साधन है। इस प्रकार बन्धन से मुक्त होने के लिये जप को सुगम विधि माना जाता है।

योग के महान् ज्ञाता 'पतञ्जलि' ने ईश्वर-भक्ति के अन्तिम तत्त्व की व्याख्या करते हुए कहा है–पवित्र शब्द 'ॐ' सर्वशक्तिमान् ईश्वर का प्रतीक है तथा आत्म-प्रकाश की खोज करने वाले साधकों को इस मन्त्र का मात्र उच्चारण ही नहीं करना चाहिए, वरन् इसके अर्थ पर भी चिन्तन करना चाहिए। अत: स्पष्ट है कि जप को एक यौगिक अभ्यास माना गया है। इसलिये इसकी व्याख्या करते समय 'जप योग' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका यह अर्थ भी है कि इसकी अवश्य ही कुछ विशेष वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा इस अभ्यास से निश्चित परिणाम की प्राप्ति होती है।

यहाँ हम 'जप-योग' की तकनीक की मुख्य विशेषताओं तथा इसके अभ्यास की निर्धारित विधि का वर्णन करने का प्रयास करेंगे।

जप योग क्या है?

चूँकि 'जप' का अर्थ होता है किसी पवित्र सूत्र की पुनरावृत्ति, अत: इसके लिए एक निश्चित सूत्र होना चाहिए और उस सूत्र को 'मन्त्र' कहा जाता है। व्युत्पत्ति के अनुसार जब 'मन्त्र' की पुनरावृत्ति और उस पर मनन् किया जाता है, तब वह अभ्यासी को उसके लक्ष्य तक पहुँचने योग्य बनाता है। इसलिये 'मन्त्र' की मात्र यंत्रवत् पुनरावृत्ति वर्जित है। अभ्यासी को न केवल उसका अर्थ समझना है, बल्कि उस पर ध्यान भी करना होता है।

इसलिए 'योग' में जप के अभ्यास को विशेष महत्त्व दिया गया है। मन्त्र दुहराकर आध्यात्मिक सम्बन्ध स्थापित करने की यह एक विधि है। अविरल पुनरावृत्ति के द्वारा आप अपने शरीर में विशेष प्रकार के स्पंदन उत्पन्न करते हैं। मन्त्र के सस्वर पाठ से शरीर शुद्ध होता है तथा मन भी आध्यात्मिक शक्ति से भर जाता है। मन्त्र व्यक्ति को बहुत-सी मानसिक समस्याओं और सनकों से मुक्त करता है। सिद्ध सन्तों के मतानुसार मन्त्र ईश्वर का पूर्ण ज्ञान प्रदान करता है तथा ईश्वर से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए सर्वोत्तम साधन है।

प्रारंभिक चरण

आरम्भ में व्यक्ति को जप का अभ्यास कैसे करना चाहिए? सामान्य आवश्यकताएँ है कि व्यक्ति स्थिर मन से शान्त स्थान पर आरामदायक स्थिति में बैठ जाए। आलस्य की भावना, अनिच्छा, जम्हाई, मानसिक उत्तेजना, तन्द्रा की अवस्था तथा भूख-प्यास को त्यागना चाहिए। कोई शारीरिक हलचल न हो, आँखें बन्द हों और कटिप्रदेश के नीचे के भाग का स्पर्श न करें। चूँकि मन्त्र जप एक योगाभ्यास की तरह माना गया है, अत: बिना आन्तरिक पवित्रता के बिखरी हुई चेतना से या मात्र मंत्र की पुनरावृत्ति से; मन्त्र जप से कोई लाभ नहीं होगा।

जप की तकनीक से हमारी प्रसुप्त शक्ति का जागरण होता है। यही कारण है कि योग में जप को क्रिया योग के अन्तर्गत स्थान दिया गया है। ऐसा कहा जाता है कि विधिपूर्वक जप न करने पर, मात्र मौखिक या मानसिक जप से फल की प्राप्ति नहीं होती। इसका पूरा प्रभाव वैसे ही नष्ट हो जाता है, जैसे फूटे बर्त्तन से सारा पानी निकल कर बह जाता है। तात्पर्य यह है कि जप के लिए बैठने के पूर्व व्यक्ति को अपने में पूर्ण शुद्धता का

समावेश कर लेना चाहिए, तत्पश्चात् जप किया जाए। मन्त्र का जप न तो अति धीमी गति से, न अति तीव्र गति से किया जाना चाहिए। मन्द गति की परिणति शारीरिक रोग में होती है एवं तीव्र गति से मन्त्र के सभी लाभों का ह्रास होगा।

जप करते समय आप यह सोचकर आगे बढ़ें कि जिस मन्त्र का उच्चारण किया जा रहा है वह बहुत ही शक्तिशाली है तथा शक्ति प्रदान करता है। यह तथ्य अनेक बार प्रमाणित किया जा चुका है। यह साधारण अनुभव की बात है कि जप से अनेक बीमारियाँ दूर की जाती हैं। सर्प के काटे हुए व्यक्ति को मन्त्र द्वारा स्वस्थ किया जाना; भारत में देखी जाने वाली बहुत ही सामान्य बात है। अत्यधिक तनाव, रक्तचाप, हिस्टीरिया, बुखार आदि रोगों का उपचार भी जप द्वारा होता है। यह स्पष्टतया प्रमाणित करता है कि मन्त्र जप में प्रसुप्त दिव्य शक्ति रहती है जो विश्वास एवं संकल्प से निर्मुक्त होती है।

हमारी धारणा यह है कि वास्तविक शक्ति मन्त्र में ही निहित है। जिस प्रकार कारतूस में विस्फोटक शक्ति छुपी रहती है, उस पर रायफल पिन की चोट लगने पर ही वह शक्ति बाहर प्रकट होती है, ठीक उसी प्रकार किसी भी मन्त्र में दिव्य शक्ति तब तक छुपी रहती है जब तक पूर्ण श्रद्धा एवं इच्छाशक्ति के साथ जप न किया जाए। यह भी आवश्यक है कि एकाग्र चित्त से मन्त्र जप किया जाए। जब मन्त्र जाग्रत एवं शक्तिशाली होता है तब इसके अधिष्ठाता देवता या अदृश्य शक्ति क्रियाशील हो जाती है।

गुह्य विद्या के अनुसार प्रत्येक मन्त्र में अदृश्य शक्तियों एवं देवताओं का वास होता है जो हमारी साधारण ग्रहण शक्ति से परे है। यदि कोई तर्क करे कि मन्त्र शब्दों का संग्रह-मात्र है तो किसी को उस पर विश्वास नहीं करना चाहिए, क्योंकि उसका मत वैज्ञानिक तौर पर तर्कसंगत नहीं है। लीडबीटर, एनी बेसेन्ट और मैडम ब्लावाट्स्की आदि ब्रह्मविद्यावादियों (थियोसोफिस्ट) ने अपनी रचनाओं में स्पष्ट लिखा है कि 'मन्त्र' मात्र वर्णों के संग्रह से पूर्णत: भिन्न है। यदि आप सर जॉन वुडराफ द्वारा लिखित 'गारलैंड ऑफ लेटर्स' नामक पुस्तक पढ़ेंगे तो आपको समझ में आएगा कि मन्त्र या शब्दों की विशेष रचना में गुप्त अर्थ एवं शक्ति होती है। सभी मन्त्र, चाहे वे स्पष्ट हों या न हों, ऋषियों के द्वारा पूर्ण अनुभूति के पश्चात् उच्चारित किये गये थे। इस प्रकार अति मानसिक अभिव्यक्तियों को मन्त्र कहा गया। व्याकरणों द्वारा रचित शब्द मन्त्र नहीं हैं, वरन् वे वर्णों के समूह

हैं। जब तक आत्मानुभूति में मन्त्र प्रकट नहीं होता तब तक उसे सूत्रबद्ध नहीं किया जा सकता। इसलिए मन्त्र की उत्पत्ति आत्म-साक्षात्कार से हुई है, वह मात्र वर्णों का विन्यास नहीं है।

आपने बाइबिल में अवश्य ही 'ईश्वर की वाणी' के बारे में पढ़ा होगा। प्रत्येक व्यक्ति को, जो चेतना की उच्चतम स्थिति पर पहुँचना चाहता है, एक 'शब्द' दिया गया है। यही शब्द मन्त्र है। इन दिव्य ध्वनियों या मंत्रों को प्राप्त कर संत-महात्मा उन्हें पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपने शिष्यों को देते रहे हैं। यदि आप इसका लिखित प्रमाण चाहते हैं तो यह आपको विश्व के सभी पवित्र धार्मिक ग्रन्थों में लिखा मिलेगा कि मन्त्र सदा साक्षात्कार के क्रम में प्राप्त हुए थे।

सभी मन्त्र दो वर्गों के अन्तर्गत आते हैं, साधारणतः ये 'सकाम' एवं 'निष्काम' संज्ञा से जाने जाते हैं। यदि निःस्वार्थ भावना से जप किया जाए तो वह निष्काम कहलाता है। यह शुद्ध भक्ति का एक अंग है, जबकि सकाम जप विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है, जैसे–स्वयं को असाध्य रोग से मुक्त करने के लिए।

जो व्यक्ति बीमार व्यक्ति के उपचार के लिए सकाम मन्त्र जपते हैं, उन्हें शास्त्रों में बताये गये नियमानुसार करना चाहिए। माला के प्रकार, जप की विधि, शुद्धिकरण के आचार आदि के लिए अनेक नियम हैं।

यदि आप केवल आध्यात्मिक उन्नति के लिए 'निष्काम जप' करना चाहते हैं तो उसके लिए इस प्रकार का कोई नियम नहीं हैं। आप किसी भी स्थान या समय पर, स्नान के पूर्व या पश्चात् जप कर सकते हैं। प्रक्रिया में दिशा, स्थान तथा समय सम्बन्धी कोई बन्धन नहीं है।

प्रत्येक मन्त्र की द्वि-पक्षीय उपयोगिता होती है। यदि इष्ट मन्त्र है तो प्रतिदिन निश्चित संख्या में करना पड़ता है। जब हम प्रतिदिन या विशेष अवसर पर इष्ट मन्त्र का जप करते हैं तो वह हमारी प्रार्थना का एक अंग बन जाता है।

जप-अभ्यास की प्रक्रिया के चार चरण होते हैं। प्रथम चरण बैखरी जप है जिसमें सस्वर मंत्र-उच्चारण किया जाता है। द्वितीय चरण फुसफुसाहट द्वारा पाठ (उपांशु जप) का है। यह प्रथम से अधिक शक्तिशाली है। दूसरी पद्धति प्रारम्भिक अभ्यासियों के लिए नहीं है। यदि वे इसका अभ्यास प्रारम्भ करेंगे तो उनका मन इधर-उधर भटकने लगेगा। तृतीय है मानसिक जप, जिसमें मंत्र के मानसिक स्पन्दनों पर ध्यान करना होता है। आपको मन-ही-

मन मंत्र को अनुभव करना है। मुखर या अस्फुट ध्वनि नहीं करनी है। जप की तीसरी पद्धति प्रथम और द्वितीय पद्धतियों से निश्चित रूप से अधिक शक्तिशाली विधि है। यह विधि भी प्रारम्भिक अभ्यासियों के लिए नहीं है। यह विधि उनके लिए उपयुक्त है जो जप के अभ्यास में काफी प्रगति कर चुके हैं।

चौथी विधि अजपाजप की है। इसी पुस्तक में अजपाजप का आगे विस्तार से वर्णन किया गया है। यद्यपि एक जप दूसरे से श्रेष्ठ है, फिर भी साधकों को जप के चारों चरणों का अभ्यास करना चाहिए।

जप का अभ्यास पद्मासन, सिद्धासन या सुखासन में करना चाहिए। आसन में जप के लिए आरामपूर्वक कम-से-कम दस मिनट बैठने की योग्यता होनी चाहिए।

जप के लिए बैठने के पूर्व कुछ प्रार्थना करना हितकर है। यदि आप ऐसा नहीं करेंगे तो अन्तर्मुखता में प्रगति होने पर शारीरिक या मानसिक तनाव के कारण जप के समय अनेक दृश्य सामने आयेंगे। अभ्यास करते समय निद्रावस्था एवं स्वप्नावस्था को दूर करने के लिए आपको बैखरी जप करना चाहिए।

मनकों को घुमाते समय आपको मानसिक रूप से सतर्क एवं सचेत रहना चाहिए। एकाग्रता का अर्थ मानसिक निलम्बन नहीं है और न एकचित्तता या पूर्ण सावधानी है। अपितु इसका अर्थ है सजगता। जप के समय सम्मोहित चेतनता या यंत्रवत् पुनरावृत्ति को जाँचते रहना चाहिए। मन बड़ा धूर्त है, उसे कई तरीके ज्ञात हैं। यदि आप मन के विश्लेषण के लिए किसी विशेषज्ञ के पास जायेंगे तो आप चेतन मन को नरक के बारे में विचार करते पायेंगे, जबकि अवचेतन मन स्वर्ग के विषय में सोच रहा होगा। जिस समय चेतन मन शुद्धता पर विचार करता होगा, उस समय अवचेतन मन अशुद्धता पर सोच रहा होगा। चेतन मन के इन विभिन्न आयामों पर नियंत्रण प्राप्त करने हेतु जप माला का उपयोग बहुत ही सहायक सिद्ध होगा, यदि इसकी परम्परागत विधियों की अवहेलना न हो।

जप माला का उपयोग

जप के अभ्यास में माला का विशेष महत्त्व है। साधारणतया एक मुख्य मनके (सुमेरु) के अतिरिक्त 108 मनकों वाली माला जप के लिए प्रयोग में

लायी जाती है। इस यौगिक अभ्यास के लिए वास्तविक रूप में माला एक उपकरण है। साधारणत: साधक अपने पास माला रखते हैं, परन्तु माला न रहने पर अँगुलियों पर गिनना विहित किया गया है, क्योंकि जप की गिनती को यथेष्ट महत्त्व दिया गया है, इसलिए माला अथवा अँगुलियों पर जप की गिनती को निश्चित किया गया है। माला तुलसी, रुद्राक्ष या स्फटिक की होनी चाहिए।

जप के लिए माला आवश्यक है। सभी महान् सन्तों ने जप के लिए माला निर्धारित की है। क्रिश्चियन लोगों के पास भी जप माला होती है। माला रखना सदैव अच्छा होता है। हमारा ऐसे अत्यावश्यक विषय पर रूढ़िवादी अथवा संशयवादी दृष्टिकोण नहीं होना चाहिए।

जप करते समय माला पकड़ने की विशेष विधि है। हम केवल तीन अँगुलियों का प्रयोग करते हैं–अँगूठा, तृतीय एवं चतुर्थ अँगुली। द्वितीय एवं पंचम अँगुली का प्रयोग करने से बचना चाहिए। यह प्रथम नियम है। द्वितीय नियम यह है कि हम माला आगे की ओर न घुमायें, वरन् पीछे की ओर घुमायें। तृतीय नियम के अनुसार हमें 'सुमेरु'(प्रमुख मनके) को पार नहीं करना चाहिए। ये महत्त्वपूर्ण नियम हैं, जिससे चित्त का भटकना और केवल मशीन की तरह माला फेरना आदि बातें रोकी जाती हैं। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात है जप का सतत् अवलोकन करना एवं प्रत्येक मनके के साथ मंत्र तथा प्रतिक्षण जप के प्रति सजग रहना।

आप मन्त्र की रचना, उसकी ध्वनि-तरंग या मंत्र के संरक्षक देवता पर ध्यान कर सकते हैं; या इस बात के प्रति जागरूक रहिए कि आप ध्यान कर रहे हैं। आपकी सजगता मन्त्र या जप की विधि पर होनी चाहिए और साथ-ही इष्ट देवता के रूप का भी ध्यान होना चाहिए। रूप पर ध्यान खुली या बन्द आँखों से कर सकते हैं। आँखें बिना झपकाये आप जप के समय त्राटक भी कर सकते हैं।

संक्षेप में, जप का अर्थ माला पर मन्त्रों को दुहराना है। मुख्य मनके को सुमेरु कहते हैं। मनोवैज्ञानिक शब्दावलि में उसे पुन:प्रवर्तन बिन्दु कह सकते हैं। माला हृदय के समीप अथवा घुटने पर रखें। माला को तर्जनी और कनिष्ठा से स्पर्श न करें। एक माला पूर्ण होने पर मुख्य मनके पर पहुँचकर सावधानी रखें और उसको पार न करें। पुन: माला को उलटकर प्रस्थान बिन्दु से ही प्रारम्भ करें।

इस प्रकार जप में तीन बातों को याद रखें–

1. प्रत्येक मन्त्र का एक देवता होता है। इसमें न शंका करें और न तर्क करें। जब तक आप इसे तर्कपूर्वक गलत साबित न कर दें तब तक इसका खण्डन करने का अधिकार आपको नहीं है।
2. मन्त्र को जाग्रत किया जा सकता है।
3. जाग्रत मन्त्र द्वारा हम अपनी आध्यात्मिक अभिलाषाओं की पूर्ति कर सकते हैं।

मन्त्र के द्वारा उन्नति एवं शान्ति प्राप्ति के बाद क्या आप ईश्वर को भूल सकते हैं? नहीं। भक्ति धीरे-धीरे बढ़ती है। जप का अभ्यास करें और जागरूकता बनाये रखें।

त्राटक

ध्यान की प्रक्रिया के दौरान जब ध्यान करने वाला और ध्यान की वस्तु (ध्याता और ध्येय) मिलकर एक हो जाते हैं तब इसे ध्यान कहते हैं। पूर्ण एकाग्रता तभी प्राप्त होती है जब ध्यान की प्रक्रिया, ध्याता और ध्येय, तीनों एक-दूसरे में विलीन हो जाते हैं। एकाग्रता में पूर्णता ही ध्यान है।

पूर्ण एकाग्रता की स्थिति में सत्य का रूप प्रकाशित होता है। ज्ञान का समस्त भंडार व्यक्ति के अन्दर निहित है। परन्तु यह मस्तिष्क में नहीं आ पाता है, क्योंकि बाह्य विषय हमारे ऊपर बहुत ज्यादा प्रभाव डालकर हमारे अन्दर की वस्तुओं पर पर्दा डाल देते हैं, जिससे कि हम उन्हें ग्रहण नहीं कर पाते हैं। मनुष्य का मन दिन-रात, पूरे समय कारण या बिना कारण के सांसारिक विषयों में विचरण करता रहता है। व्यक्ति हर दिन इन भौतिक वस्तुओं को प्राप्त करने की योजनाएँ बनाता रहता है। अत: मन जब तक बहिर्मुखी रहता है, तब तक वह अन्तर्मुखी नहीं हो सकता। बाल्यावस्था से हमारे मन को बहिर्मुखी रहने की आदत हो चुकी है। अत: यह बुरी आदतों को सीख कर सांसारिक वस्तुओं के अतिरिक्त अन्य कुछ भी सोचने को इच्छुक नहीं होता है।

ऐसे बहिर्मुखी मन से ज्ञान प्राप्त करना संभव नहीं है। यही कारण है कि इसके लिए निश्चित अभ्यासों को निर्दिष्ट किया गया है। मन की इन शक्तियों को जाग्रत करने के लिए बाह्य विषयों को भी एक साधन के रूप में उपयोग में लाया जाता है। एकाग्रता की शक्ति प्राप्त करने हेतु व्यक्ति को भौतिक वस्तु की सहायता भी लेनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त भाषा, संगीत और अन्य क्रियाओं से भी आत्मा की शक्ति प्रकट होती है।

त्राटक एक ऐसा अभ्यास है जिसकी क्षमता बहुत पहले ही स्थापित हो चुकी है। इस अभ्यास द्वारा व्यक्ति भूतकाल और भविष्य की घटनाओं की

भविष्यवाणी भी कर सकता है। इस साधना में पूर्णता प्राप्त करना अवश्य ही कष्टसाध्य है। फिर भी, जो व्यक्ति निष्ठापूर्वक यह साधना करेगा, वह कुछ प्रगति कर सकता है।

स्फटिक पर त्राटक

स्फटिक पत्थर पुरानी चट्टानों में पाया जाता है। यह चट्टानों के अन्दर का ही अंश है। जिस प्रकार कोयला, कोयले की खदान में मिलता है, उसी प्रकार स्फटिक पहाड़ों एवं चट्टानों में मिलता है। यह पारदर्शी पत्थर है। यह पानी से भी अधिक पारदर्शी और साफ होता है। आईने में जिस प्रकार वस्तु का स्पष्ट रूप दिखाई देता है, उसी प्रकार इस पत्थर के आर-पार कोई वस्तु स्पष्ट देखी जा सकती है। इसे 'स्फटिक मणि' भी कहते हैं। अति प्राचीन पर्वतों में यह गोल आकार में प्राप्त होता है। वर्तमान समय में इसे आसानी से प्राप्त नहीं किया जा सकता, परन्तु यदि किसी खोजकर्त्ता को इसकी प्राप्ति हो जाती है तो इसका प्रयोग साधना के लिए किया जाना चाहिए।

स्फटिक पत्थर एक अलग कमरे में रखा जाना चाहिए। इसे आँखों के स्तर पर एक फुट की दूरी पर रखना चाहिए। स्फटिक को पानी से साफ करके साफ कपड़े से पोंछ लें। तत्पश्चात् पलकों को बिना झपकाये तथा स्थिर आँखों से उसे एकटक देखने का अभ्यास करना चाहिए। प्रारम्भ में यह अभ्यास पाँच मिनट तक करें, बाद में यह अवधि बढ़ाकर आधा घण्टा की जा सकती है। स्फटिक के किसी बिन्दु पर एकटक इस प्रकार देखें कि उसके अतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु दिखाई न दे। इस अभ्यास को एक माह या इससे अधिक समय तक कर सकते हैं।

इसके पश्चात् द्वितीय अवस्था का अभ्यास अधिक आसानी से कर सकेंगे। इस द्वितीय प्रयोग में आप स्फटिक की ओर बिना सजगता के एकटक देखें। सोते समय जिस प्रकार किसी वस्तु को देखने का ज्ञान हमें नहीं रहता, ठीक वैसी स्थिति त्राटक के इस चरण में साधक की होती है। फिर भी सुप्तावस्था एवं इस अभ्यास में बहुत भिन्नता है। इस अभ्यास के समय नेत्रबिन्दु अत्यन्त स्थिर होते हैं एवं पलकें झपकती या गिरतीं नहीं। ऐसी कल्पना करें कि आप सो रहे हैं, पर आपकी आँखें खुलीं हैं एवं स्फटिक को एकटक देख रहीं हैं। दृष्टि को इधर-उधर घुमाना नहीं है। मन स्थिर और शान्त होना चाहिए। इसका प्रतिदिन नियमित अभ्यास करने के लिए

आपको मेहनत करनी होगी। इसे सीखना सरल है, परन्तु इसका अभ्यास करना कठिन है।

त्राटक साधना के तृतीय चरण में, त्राटक करते हुए सोचें कि आप अपने भीतर प्रवेश कर रहे हैं। देखने की क्रिया से मन को हटा दें। आँखें खुली रहें या स्फटिक को एकटक देखती रहें, परन्तु मन अन्दर चला जाना चाहिए। जब मन अन्तर्मुखी हो जाए तब किसी प्रकार का विचार या इच्छा नहीं होनी चाहिए। बाह्य विषयों से मन का तादात्म्य अवश्य टूट जाना चाहिए। इस चरण में सम्भव है कि साधक स्वप्न देखे और सोना चाहे। कभी-कभी सोने की इच्छा इतनी तीव्र हो जाती है कि साधक आलस्य का अनुभव करता है और सोना चाहता है। इस नाजुक अवस्था में मन शीघ्रता से धोखा देता है। यह ऐसे विचारों को लाता है और आपको स्थूलता के निम्न स्तर पर जाने की सलाह देता है। इसके बावजूद आपको एकटक देखते रहना है। साधना की इस अवस्था में आप खुली आँखों से स्वप्न देख सकते हैं। साधक को स्फटिक में स्वरूप चलते, हिलते एवं बोलते हुए दिखाई पड़ेंगे। यह स्वप्न के अनुभव जैसा ही होता है, जिसका जाग्रत अवस्था से कोई सम्बन्ध नहीं होता।

स्फटिक में जब आप स्वरूप देखें तब स्फटिक की ओर देखते हुए भी उसमें इस तरह देखना चाहिए जैसे कि आप कुछ देखना या खोजना चाह रहे हों। यह ठीक वैसी ही अवस्था है जब हम किसी वस्तु का आलोचनात्मक अवलोकन करते हैं और हमारा मन इसमें रम जाता है। इसी प्रकार इस समय आपको अपने मन में ऐसा ही भाव उत्पन्न करना चाहिए, खोजी दृष्टि होनी चाहिए। यदि कुछ दिखाई दे तो इसका स्थिर और विवेचित मन से अवलोकन करना चाहिए। थोड़े ही मानसिक प्रयास से आप हर आकृति को स्पष्ट रूप से देखने में समर्थ हो जाएँगे। इसे मानसिक रूप से स्पष्ट करने का प्रयास करें। उदाहरणार्थ,किसी व्यक्ति को देखने पर उसकी आकृति कैसी है? वह कौन हो सकता है? उसके चेहरे से क्या झलकता है? वह क्या कहना या करना चाहता है? उसके हाथ में क्या है? वह किससे बात कर रहा है? वह क्या कहता है? इसका नियमित अभ्यास करें। त्राटक का प्रथम पाठ्यक्रम छ: महीनों के लिए निर्धारित है।

नादयोग

नादयोग ध्वनि विज्ञान है। नादयोग का आधारभूत सिद्धान्त यह है कि हमारा विश्व एक नाद पर आधारित है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ध्वनि-सिद्धान्तों की एक प्रणाली है।

जिनका दृष्टिकोण भौतिकवादी नहीं है, उनका विश्वास है कि शरीर अन्तिम नहीं है। यह मात्र एक स्थूल स्तर है। स्थूल शरीर से सूक्ष्म शरीर भी है, प्राणिक शरीर। आप जानते हैं कि प्राण जीवन-सिद्धान्त है। इसके पाँच विभाग हैं-प्राण, अपान, व्यान, समान और उदान। ये प्राण के कार्यसम्बन्धी विभाग हैं। इसके अतिरिक्त और भी सूक्ष्म पाँच उपविभाग हैं जो छींकने, पलक झपकने आदि क्रियाओं के लिए उत्तरदायी हैं। ये भी उसी प्राणिक ऊर्जा की क्रियाएँ हैं। हमारे भौतिक शरीर से परे मानसिक शरीर भी है, जिसके कारण हममें सोचने-समझने की शक्ति रहती है। यह हमारी चेतना का मानसिक स्तर है। इससे अपेक्षाकृत अधिक सूक्ष्म कारण शरीर का बौद्धिक स्तर होता है। इसका अनुभव अधिकतर स्वप्न या दिव्य-दर्शन में होता है। सूक्ष्मतम पाँचवाँ स्तर पूर्ण चेतना का होता है। योग शास्त्रों में इनका वर्णन अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय कोशों के नाम से किया गया है। इसलिए योग पर विश्वास करने वालों का कथन है कि भौतिक शरीर ही सब कुछ नहीं है, वह मात्र प्रारम्भिक बिन्दु है।

इसी प्रकार बाह्य ध्वनियाँ भी केवल ध्वनियाँ नहीं हैं। हमारे शरीर में भी चेतना के विभिन्न स्तरों पर अनन्त ध्वनि तरंगें हैं। उनके मिश्रण तथा क्रम परिवर्तन से यह शरीर निर्मित होता है। नाद योगियों का कहना है कि प्रारम्भ में केवल एक ही पवित्र ध्वनि, ॐ थी। उसके पश्चात् उसकी ध्वनि तरंगों द्वारा ब्रह्माण्ड की रचना हुई। जिन्होंने बाइबिल पढ़ी है, उन्होंने इस वाक्य

पर ध्यान दिया होगा कि 'प्रारम्भ में शब्द था'। इस प्रकार सर्वप्रथम ध्वनि के अलावा और कुछ नहीं था। ॐ की सर्वशक्तिमान् ध्वनि सब ओर और हर जगह तरंगित हुई। ॐ की इस तरंग से प्रथम ध्वनि-तत्त्व की उत्पत्ति हुई और इस तत्त्व से पदार्थ का निर्माण हुआ। इस तरह नादयोग के अनुसार समस्त शरीर और सम्पूर्ण सृष्टि ध्वनि-तरंगों का ठोस रूप है, अन्य कुछ नहीं। पारिभाषिक तौर पर यह 'नादब्रह्म' कहलाता है।

यदि आप संगीत-विज्ञान का अध्ययन करेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि प्रत्येक ध्वनि का आकार होता है, वह मात्र तरंग नहीं है। संगीत के स्वरों को ठोस रूप दिया जा सकता है। प्रत्येक ध्वनि को वैसी ही आकृति दी जा सकती है जैसे आप एक पत्थर, कुर्सी या पत्ते आदि को देखते हैं। ध्वनि को ऊर्जा के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। इस ऊर्जा को पुन: ध्वनि का रूप दिया जा सकता है। ध्वनि को किसी वस्तु में परिवर्तित किया जा सकता है तथा वस्तु को परमाणुओं में विखण्डित किया जा सकता है। जो व्यक्ति आइन्सटीन के सिद्धान्त से परिचित हैं वे इसे समझ सकते हैं।

इस प्रकार हम जानते हैं कि विश्व में जितने भी पदार्थ हैं, उनका अन्तिम सार और मूल एक ही है, केवल आकार में भिन्नताएँ हैं। सभी वस्तुओं में रूप भिन्नता है, परन्तु सबमें एक ही तत्त्व अन्तर्निहित है। नाद-योगी बताते हैं कि आपके समस्त घटक, जिन्होंने स्थूल आकार ग्रहण किया है, ध्वनि-सिद्धान्त की तरंगों पर ही आधारित हैं। यह उनका दर्शन-शास्त्र तथा अध्यात्म विद्या है।

योग विज्ञान में यह कहा गया है कि हममें कहीं न कहीं ध्वनि है। इसे आन्तरिक-ध्वनि, स्वर्ग की ध्वनि, अज्ञात की फुसफुसाहट, आकाशवाणी आदि नाम दिये गये हैं और बोल-चाल की भाषा में 'आत्मा की भाषा' कहा जाता है। यह आत्मा की आवाज है, शुद्ध तर्क की ध्वनि है और हमें भ्रम में पड़कर इसे कुछ अन्य समझने की भूल नहीं करनी चाहिए।

हमारे आध्यात्मिक शरीर में एक केन्द्र है, जहाँ से जो वहाँ बैठा है, वह बोलता है। वह कब और किससे बोलता है–इसकी परिभाषा, व्याख्या, वर्णन आदि नहीं किया जा सकता। नादयोग का अभ्यास हमारे मन को अधिक-से-अधिक सूक्ष्म बनाता जाता है, ताकि यह सभी वस्तुगत सूक्ष्म धारणाओं से पूर्णत: शुद्ध हो जाये। तभी हम उस अन्तिम आवाज को पहचान और सुन सकते हैं।

जब आप यह अभ्यास शुरू करेंगे तब प्रारम्भ में आपको कपड़े की मिल से आती हुई आवाज-सी ध्वनि सुनाई देगी। अपनी आँखें बन्द कर लें और इसे सुनने का प्रयास करें। यदि आप फिर से आन्तरिक आवाज को अधिक सूक्ष्मता से सुनने का प्रयास करेंगे तो चिड़ियों के कलरव की आवाज सुनाई देगी। बाद में आप गाती हुई कोयल की तेज आवाज सुनेंगे, परन्तु प्रश्न उठता है कि इन ध्वनियों की पहचान कैसे की जाए। इसका सबसे आसान तरीका यह है कि आने वाली प्रथम ध्वनि को ग्रहण करें, चाहे वह कैसी भी ध्वनि हो और उस पर ध्यान केन्द्रित करें। कुछ समय के बाद ध्वनि समीप आती मालूम पड़ेगी तथा तेज हो जायेगी। इस आवाज के पीछे से भी कुछ हल्की ध्वनि आती हुई सुनाई देगी। निश्चित रूप से वह धीमी रहेगी। जैसे ही आप इसे समझें, पहली ध्वनि को छोड़कर दूसरी ध्वनि पर ध्यान एकाग्र करें। कुछ समय पश्चात् यह ध्वनि अधिक समीप एवं तेज सुनाई देगी। कुछ समय की एकाग्रता के बाद आप एक और मन्द आवाज सुनेंगे। पहले की तरह आप इस पर ध्यान केन्द्रित करें, जब तक कि दूसरी ध्वनि सुनाई नहीं देती। धीरे-धीरे एक के बाद एक कई आवाजें आप सुनेंगे।

हमने केवल तीन ध्वनियों का वर्णन किया है, परन्तु अन्य ध्वनियाँ– घण्टा ध्वनि, शंख ध्वनि, मुरली की ध्वनि आदि हैं। शास्त्र में दस प्रकार की ध्वनियों का वर्णन मिलता है। इसमें प्रारम्भिक आवाज झींगुर की है। ये सामान्य ध्वनियाँ हैं जो अभ्यासी द्वारा सुनी जाती हैं।

प्रत्येक व्यक्ति का ध्वनियों का भिन्न अनुभव होता है। कौन-सी आवाज सुनाई देती है, इसका विशेष महत्त्व नहीं है, परन्तु उच्च साधना के अभ्यास के समय यह व्यक्ति की प्रगति का संकेत करती है।

नादयोग के अभ्यास की अनेक विधियाँ हैं। प्रथम, भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास करें। गहरी श्वास लें। श्वास छोड़ते समय धीरे-धीरे गुंजन की आवाज करें और गले में विशुद्धि चक्र के स्थान में उस आवाज पर ध्यान केन्द्रित करें। यह गुंजन की ध्वनि लगभग 30 सैकण्ड तक चलेगी।

यहाँ आपको ध्वनियों पर सजगता नहीं रखनी है। नादयोग में यांत्रिक रूप से आगे बढ़ना है, जब तक कि प्रथम आवाज की उत्पत्ति न हो। इसके बाद आप इस ध्वनि पर ध्यान केन्द्रित करें। यह प्रथम चरण है।

द्वितीय चरण में तर्जनी अंगुलियों से कानों को बन्द करें। श्वास लेकर पहले की तरह श्वास छोड़ते हुए गुंजन की आवाज करें। दाँतों की पंक्तियों

को थोड़ा अलग रखें। ध्वनि पर ध्यान लगायें मानो वे मस्तिष्क के मध्य से उत्पन्न हो रही हों। ध्वनि उत्पन्न करते रहें और तरंगों पर ध्यान एकाग्र करें। इसके साथ-ही द्वितीय आवाज का पता लगाने का प्रयास करें, जो इस आवाज के पार्श्व में है। प्रथम अवस्था में यदि आप ॐ का उच्चारण करेंगे तो थोड़ी सतर्कता रखने पर पक्षियों की धीमी आवाज सुन सकेंगे।

तृतीय चरण में आप कानों को बन्द रखें, परन्तु श्रव्य आवाज न करें। पहली आवाज को सुनने का प्रयत्न करें, चाहे वह किसी प्रकार की हो। अनुभव करें कि आवाज स्पष्ट रूप से समीप आती जा रही है और तेज हो रही है। यह प्रथम ध्वनि है। अब पार्श्व में आप दूसरी आवाज सुनेंगे। नादयोग के तृतीय चरण के अभ्यास में यह महत्त्वपूर्ण है कि कान बन्द रहें और कोई श्रव्य आवाज न करें।

चतुर्थ चरण में न कान बन्द करें और न आवाज करें। रात्रि को करीब 11 बजे या प्रातःकाल 4 बजे स्नान कर या हाथ-मुँह धोकर आरामदायक आसन में बैठ जायें। प्रथम ध्वनि को पकड़ने का प्रयत्न करें। पहली आवाज सुनें और उसे तेज होने दें, तब द्वितीय मन्द ध्वनि उत्पन्न होगी। उस पर ध्यान करें और प्रथम ध्वनि पर ध्यान करना बन्द कर दें। द्वितीय आवाज को तेज होने दें। तत्पश्चात् तृतीय अस्पष्ट ध्वनि निर्मित होगी। इसी तरह आपको ध्वनियों पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। आपको अधिक-से-अधिक सूक्ष्म ध्वनियों का ज्ञान प्राप्त होता जाएगा।

नादयोग के अभ्यास से मस्तिष्क का भ्रम दूर होता है, मन को शान्ति प्राप्त होती है और ध्यान में सफलता मिलती है।

अजपाजप

अजपा जप का अभ्यास उतना ही प्राचीन है जितने प्राचीन भारतीय शास्त्र हैं। कुछ प्राचीन योग शास्त्रों में ऐसे पद्यांश और श्लोक मिलते हैं जिनसे यह स्पष्ट होता है कि श्वास 'सो' की ध्वनि करती हुई भीतर जाती है और 'हं' की ध्वनि करती हुई बाहर आती है। यह अजपा गायत्री की ध्वनि है जिसे जीव निरन्तर दुहराता है, ऋषि वाल्मीकि को नारद मुनि द्वारा जिस उल्टे जप की प्रक्रिया की दीक्षा दी गई थी, वह यही अजपा है। वर्तमान में भी भारत में अनेक आध्यात्मिक सम्प्रदाय इसका अभ्यास करते हैं। प्राचीन ऋषियों ने भी इसका अभ्यास किया। महात्मा गाँधी ने लिखा है– 'नाम' सिर्फ मुँह से न लिया जाये, वरन् यह हृदय के अन्तर्तम से निकलना चाहिए। मुँह से निकलने पर नाम जप हो जाता है और जब नाम हृदय से उच्चारित होता है तब 'अजपा' कहलाता है।

अजपा एक महत्त्वपूर्ण साधना है तथा इसके अभ्यास से व्यक्ति सीधे समाधि की अवस्था प्राप्त कर सकता है। अन्य सभी योगाभ्यासों में समाधि प्राप्ति हेतु श्वास को स्थगित एवं नियंत्रित करना पड़ता है। जबकि अजपा के सतत् अभ्यास में श्वसन-क्रिया सामान्य रहती है और समाधि में भी कोई परिवर्तन नहीं आता। कबीरदास ने भी अपने एक दोहे में अजपा जप के विषय में कहा है–

ऐसा जाप जपो मन लाई, सोऽहं सोऽहं सुरता गाई।
छः सौ सहस्र इक्कीसौ जाप, अनहद उपजै आपै आप॥

'अजपा' क्रियायोग का एक अंग है। एक मुसलमान सन्त ने अजपा के सन्दर्भ में कहा है– 'मैं चेतना के चतुर्थ आयाम का अनुभव कर रहा हूँ।'

पुन: उसने कहा है–"यह 'हं' की सजगता नाभि केन्द्र से प्रारम्भ होती है। जब बाहर आती है तब विपरीत हो जाती है।" अत: आप 'हं' नाभि केन्द्र से उत्पन्न करते हैं और जब उसकी उत्पत्ति पूर्णरूपेण हो जाती है तब आप इसके विपरीत 'सो' उच्चारण करते हैं। अब वह हंसो बन जाता है।

योग में कुछ विशेष अभ्यास हैं जिनमें व्यक्ति अन्तर्मुखी बन जाता है और श्वास का सहज स्थगन हो जाता है। कठिनाई यह है कि कुछ समय के ध्यान के बाद साधक बहिर्मुखी हो जाता है। फेफड़ों का तदनुरूप समर्थन न होने के कारण ऐसा होता है। हममें से अधिसंख्य के साथ ऐसा होता है। अजपा में इस कठिनाई का हल हो जाता है। अजपा स्वयं एक पूर्ण साधना है। पतञ्जलि के 'योगसूत्र' का पठन करने वाले जानते हैं कि सर्वप्रथम एक निश्चित वस्तु पर खुली आँखों से ध्यान करना होता है, फिर बन्द आँखों से उस पर ध्यान करना होता है। यह एक सूक्ष्म रूप पर ध्यान है। सूक्ष्म वस्तु पर ध्यान की सिद्धि के पश्चात् साधारण जागरूकता के साथ उसकी उपस्थिति पर ध्यान करना चाहिए। जब बालक उच्च कक्षा में आता है तब निम्न कक्षा की पुस्तकों को अनावश्यक समझता है। इसी प्रकार योग में भी साधक को एक निश्चित अभ्यास में सफलता प्राप्त हो जाने पर उसको छोड़ देना होता है।

'भगवद्गीता के चौथे अध्याय में भी अजपाजप का स्पष्ट सन्दर्भ है–

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे ।
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणा: ॥
अपरे नियताहारा: प्राणान्प्राणेषु जुह्वति ।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषा: ॥

इसके अनुसार कुछ अभ्यासों में 'प्राण' को 'अपान' में हवन करते हैं और अन्य में 'अपान' को 'प्राण' में अथवा दूसरे 'प्राण' को 'प्राण' में ही विलय करते हैं। अन्दर जाने वाली श्वास 'प्राण' है तथा बाहर आने वाली 'अपान'। 'सो' प्राण का प्रतिनिधित्व करता है और 'हं' अपान का। कुछ साधक प्राण को अपान से मिलाते हैं। वे 'सो' को 'हं' से जोड़ते हैं, जिससे सोऽहं बनता है। अन्य साधक अपान को प्राण से जोड़ते हैं, अर्थात् वे हं का योग सो से करते हैं जिससे 'हंसो' का निर्माण होता है। कुछ ऐसे साधक भी हैं जो प्राण का मिलन प्राण से करते हैं। इस अभ्यास का वर्णन बाद में किया जाएगा।

गीता में अजपा के विषय में एक बात और कही गयी है। कहा गया है– 'नासिका में प्राण और अपान को समान करने के पश्चात् भीतर जाने वाली और बाहर आने वाली श्वास की लम्बाई और अवधि समान रहे।'

इस प्रकार अजपा के अभ्यास का बहुत महत्त्व है। इसका प्रसंग शास्त्रों में भी मिलता है। वह स्वयं में पूर्ण है। इसके द्वारा व्यक्ति बिना आध्यात्मिक गुरु की सहायता के भी आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रवेश कर सकता है। यदि आप अजपा के लिए 'सोऽहं' ही लेंगे तो इसी में आप छः चरणों को पूर्ण कर सकते हैं।

त्राटक के सफल अभ्यास के बाद व्यक्ति को ध्यान की वस्तु की अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है, परन्तु बाद में मार्ग बन्द हो जाता है। अन्य यौगिक अभ्यास के द्वारा आप स्वयं समाधि तक नहीं पहुँच सकते। आपको आगे निर्देशन के लिए आध्यात्मिक गुरु की आवश्यकता पड़ेगी। जबकि अजपा में अपको निर्देशक की जरूरत नहीं है।

कहा गया है कि व्यक्ति को ऐसा जप करना चाहिए जिसका कभी अन्त न हो। उसमें अनन्तता के साथ व्यापकता होनी चाहिए। इस प्रकार के किसी मन्त्र का ज्ञान हममें नहीं है। इसलिए मन्त्र की पुनरावृत्ति की ऐसी विधि हो ताकि मन्त्र की समाप्ति न हो। अजपा जप के द्वारा इसकी प्राप्ति की जा सकती है। जब श्वास के साथ मन्त्र जोड़ा जाता है तब मंत्र के प्रति सतत् सजगता रहती है।

अजपा जप के वास्तविक अभ्यास का वर्णन करने के पूर्व हमें एक बात और समझ लेनी चाहिए। यदि आपके हाथ में चोट लगे और पूछें कि क्या आपको दर्द हो रहा है तो आपका उत्तर 'हाँ' रहेगा। परन्तु दर्द है कहाँ? आप कहेंगे, मेरे मन में। यह दर्द का स्थान निर्धारित करना है। योग में भी चेतना के विशिष्ट स्थान की एक प्रक्रिया है।

आपकी चेतना कहाँ हैं? आप स्वयं कुछ क्षणों के लिए सोचिए कि आप कहाँ हैं। आप नहीं जानते कि आप कहाँ हैं। आपकी सजगता या चेतना अभी बहिर्मुखी और बिखरी हुई है, परन्तु शरीर के किसी भी विशेष केन्द्र पर उसकी स्थिति नियत की जा सकती है।

मान लीजिए, ध्यान करते समय अचानक आप अपने मानस-पटल पर प्रकाश देखते हैं। आप उसे एक सैकण्ड के लिए देखते हैं। यौगिक भाषा में यह 'चेतना का स्थान निर्धारण' कहलाता है। आध्यात्मिक मार्ग की प्रगति

में यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है। इसी विधि के द्वारा योगी चेतना को सम्प्रेषित करते हैं। साधारणतः हमें इस बात का ज्ञान नहीं रहता कि हमारा कारण शरीर कहाँ है। अजपाजप के अभ्यास से आप यह जान पायेंगे कि आपकी सजगता कहाँ है।

सफेद और काले रंग के दो पक्षी दो रस्सियों द्वारा एक खूँटी से बँधे हैं। वे कुछ समय के लिए उड़ते हैं, परन्तु उन्हें उड़कर पुनः वापस आना पड़ता है, क्योंकि वे बन्धे हुए हैं। अनेक बार वे उड़ते हैं। अन्त में वे थककर शान्तिपूर्वक खूँटे के पास सो जाते हैं। यह उदाहरण 'इड़ा और पिंगला' के सन्दर्भ में दिया गया है। मानो उन्हीं की तरह वे दो पक्षी हैं। दाहिनी नासिका से होकर जाने वाली 'पिंगला' (सूर्य नाड़ी) है और बायीं नासिका से होकर जाने वाली इड़ा (चन्द्रनाड़ी) है। एकान्तर रूप से कार्य करने वाली इड़ा एवं पिंगला व्यक्ति को अन्तश्चेतना से दूर रखती हैं। जब तक वे एकान्तर क्रम से कार्य करती हैं तब तक समाधि की प्राप्ति नहीं हो सकती। यह प्राप्ति तभी होती है जब दोनों पक्षी-इड़ा और पिंगला थक कर केन्द्र पर आराम करते हैं, और तब 'सुषुम्ना' के जाग्रत होने पर ध्यान की क्रिया अपने आप प्रारम्भ हो जाती है।

'स्वर योग' के अनुसार जब दोनों नासिका छिद्रों से समान रूप से प्रवाह हो तो यह इस तथ्य का द्योतक है कि सुषुम्ना का प्रवाह हो रहा है। ऐसी स्थिति में सब सांसारिक कार्यों को त्याग कर व्यक्ति को ध्यानस्थ हो जाना चाहिए। यह सामान्य अनुभव की बात है कि ध्यान कभी-कभी ही सरलतापूर्वक होता है। कारण यह है कि उस समय सम्पूर्ण संस्थान में अनुरूपता होती है। जब सुषुम्ना कार्य नहीं करती तब प्रयत्न के बाद भी एकाग्रता नहीं आती। अतः यह महत्त्वपूर्ण है कि योगाभ्यासों और ध्यान के द्वारा इड़ा एवं पिंगला के कार्य में समस्वरता लायी जाए, ताकि सुषुम्ना क्रियाशील हो सके।

विचारों के प्रवाह को रोकने के लिए व्यक्ति को विचारों को देखना पड़ता है, सचेत होकर उनका निरीक्षण करना पड़ता है। अजपा जप के समय आपको पूर्ण सजगता रखनी चाहिए कि आप क्या कर रहे हैं। अविरल तेल-धारा की तरह, जो बीच में टूटती नहीं, अपनी चेतना को निरन्तर बनाए रखें। आप क्या कर रहे हैं, इसके प्रति आप निरन्तर जागरूक रहें।

अजपा में द्वितीय महत्त्वपूर्ण बात यह है कि व्यक्ति को ध्यान के केन्द्र पर मन को एकाग्र करना चाहिए। यह केन्द्र 'आज्ञाचक्र' (तृतीय नेत्र या

भ्रूमध्य), अनाहत चक्र (हृदय) या शरीर का कोई अन्य केन्द्र हो सकता है। यह 'ईश्वर प्रणिधान' कहलाता है। अजपा में तीन बातें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं– तपस्या, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान। इसके अतिरिक्त अजपा के लिए तीन और प्रमुख बातें हैं–1. गहरी श्वास की क्रिया, 2. विश्रान्ति 3. पूर्ण सजगता। कोई भी श्वास बिना सजगता के नहीं जानी चाहिए। स्वचालित श्वसन क्रिया नहीं होनी चाहिए। आने-जाने वाली प्रत्येक श्वास पर लगातार आपकी सजगता बनी रहनी चाहिए। जब भी मन भटके, उसे तुरन्त श्वास पर वापस लायें।

इस प्रकार श्वसन क्रिया में मन्त्र जोड़ना ही अजपा है। इसका अभ्यास कुर्सी पर, जमीन पर या किसी भी आसन, अर्थात् पद्मासन, सिद्धासन या सुखासन में किया जा सकता है।

अजपा जप में सबसे महत्त्वपूर्ण है कि सर्वप्रथम आपको सजगतापूर्वक श्वास लेनी और छोड़नी है, श्वास स्वचालित नहीं रहेगी। स्वाभाविक श्वसन क्रिया रात में भी होती है, यह अजपा नहीं है। आपको सचेतन रूप से आने-जाने वाली श्वास को देखना होगा। चौकीदार की तरह दोनों श्वासों के प्रति निरन्तर सतर्क रहें। आपको यह भी देखना चाहिए कि श्वास कहाँ तक जा रही है। जब आप श्वास लेते हैं तो पहले उदर ऊपर उठाना चाहिए, फिर वक्ष। श्वास छोड़ते समय पहले वक्ष को, फिर उदर को शिथिल करें। लेटकर ऐसा अनुभव करें कि आप सोने जा रहे हैं। गहरी नींद में व्यक्ति जैसी गहरी श्वास लेता है, वैसी ही लें। कुछ दिनों के निरन्तर अभ्यास के पश्चात् आपकी श्वास पूर्ण विधिवत् तथा आनुपातिक बन जाएगी। श्वास-प्रश्वास की साधारण गति 1 मिनट में 15 बार रहती है। एक घण्टे में 900 श्वास तथा 24 घण्टे में कुल 21,600 श्वासें ली जाती हैं। जिस व्यक्ति ने अजपा में पूर्णता प्राप्त कर ली हो, वह प्रतिदिन 21,600 चक्र अजपा के करेगा।

जैसे ही एकाग्रता गहरी होती है, श्वसन धीमा पड़ जाता है। 15 के स्थान पर आप प्रति मिनट 10 श्वास लेंगे। खर्राटे लेते हुए आप जितनी लम्बी और गहरी श्वास लेते हैं वैसी ही अजपा में लेंगे। ऐसा करने से आयु में वृद्धि होती है, क्योंकि सम्पूर्ण शरीर-तंत्र पूर्णतः शांत और सुस्थिर हो जाता है, फलतः प्राण-क्षय घट जाता है।

अब हम अजपा के तकनीकी-पक्ष पर आते हैं। अजपा के तकनीकी पक्ष में केवल एक कठिनाई है, तप। तप का अर्थ है अखंड धैर्य। आपको एक

आसन में बैठे रहना चाहिए। न शरीर हिले और न मन इधर-उधर भटके। यह शारीरिक दमन नहीं, बल्कि एक ही स्थिति में अपने को बनाए रखने की सहन-शक्ति है। आप निश्चय करते हैं कि मैं प्रतिदिन 45 मिनट अजपा का अभ्यास करूँगा। एक दिन आप ऐसा करेंगे, परन्तु दूसरे दिन आप धैर्य खो देते हैं, तीसरे दिन आपकी रुचि कम हो जाती है और चौथे दिन आप सब कुछ भूल जाते हैं। अपने निश्चय को बनाए रखिए और धैर्य के साथ एक माह या अधिक समय तक निरन्तर अभ्यास कीजिए, चाहे वह 10 मिनट का हो या एक घण्टे का।

अभ्यास टिप्पणी

‘सोऽहं’ मंत्र के प्रति कुछ गलत धारणा है। *‘सोऽहं’* का अर्थ मात्र ‘मैं वही हूँ’ नहीं होता। भीतर जाने वाली श्वास *‘सो’* शब्द उत्पन्न करती है तथा बाहर आने वाली श्वास से *‘हं’* शब्द की तरंग उत्पन्न होती है। बहरहाल, सोऽहं श्वास-प्रश्वास के आत्म-निरीक्षण के पूर्ण परिपथ का मात्र संकेत करता है। आप *‘सोऽहं’* के शाब्दिक अर्थ पर विचार न करें।

अभ्यास की रूपरेखा

किसी आरामदायक आसन में बैठें। शरीर को शिथिल करें।
गहरी श्वसन-क्रिया शुरू करें।
पश्चात् भीतर जाने वाली श्वास के साथ ‘सो’ और बाहर आने वाली श्वास में ‘हं’ जोड़ें।
अनुभव करें कि आप ‘सोऽहं’ का अन्तरावलोकन कर रहे हैं।
‘सो’और ‘हं’के बीच मानसिक रूप से अन्तराल न आए।
निरन्तरता बनी रहनी चाहिए।
‘हं’के बाद कुछ रुकें।
‘सो’के साथ श्वास लें एवं ‘हं’ के साथ छोड़ें।
श्वास के आने-जाने और सोऽहं पर निरन्तर सजगता बनी रहनी चाहिए।
कुछ समय पश्चात् अजपा बन्द करें और शून्य में जायें।
मन को भृकुटी पर ले जायें और आज्ञा चक्र पर ध्यान करें।
यदि आप चाहें तो हृदय चक्र पर भी ध्यान कर सकते हैं।
कुछ सोचें नहीं, शून्यवत् बन जायें।

जो भी विचार आयें, उन्हें दूर हटाते जायें। केवल शून्यता का ध्यान करें। कुछ देर ऐसा करें, तत्पश्चात् पुन: अजपा प्रारम्भ करें।

अजपा के आरम्भ में एकाग्रता श्वास की दो धाराओं पर होगी, इसके पश्चात् इसमें सोऽहं को समस्वरित करना होगा। इस श्वास प्रक्रिया में आप अपनी पसन्द का कोई अन्य मंत्र भी उपयोग में ला सकते हैं।

अभ्यास

प्रथम चरण

शारीरिक एवं मानसिक रूप से अपने को शान्त करें।

अपने को जितना अधिक आराम की स्थिति में ला सकते हैं, लायें। अपनी चिन्ताओं एवं परेशानियों को कुछ देर के लिए भूल जाएँ।

शान्ति, सुख, आराम एवं आनन्द का अनुभव करें।

अजपा का अभ्यास प्रारम्भ करने के पूर्व मन को पूर्णत: शान्त करें। अनुभव करें कि आप सुखपूर्वक बैठे हैं।

ऊपर वर्णित विधि से श्वास लें।

प्रत्येक आने-जाने वाली श्वास के प्रति सजग रहें।

अनुभव करें कि आने वाली श्वास नाभि से कण्ठ तक ऊपर जाती है और बाहर जाने वाली श्वास कण्ठ से नाभि प्रदेश तक नीचे आती है। सहज श्वसन नहीं, बल्कि सजगतापूर्वक गहरी और आरामदायक श्वसन क्रिया होनी चाहिए। श्वास लेते समय कोई आवाज न हो।

श्वास की दोनों धाराओं का अनुभव करें।

प्राण के प्रति सजगता को बढ़ायें।

अब श्वास के साथ 'सोऽहं' जोड़ें।

श्वास लेते हुए जैसे ही प्राण ऊपर उठता है, 'सो' के स्पन्दन को अनुभव करें और श्वास छोड़ते समय जब प्राण नीचे उतरता है, 'हं' के स्पन्दन को अनुभव करें।

सोऽहं मंत्र के साथ श्वास-प्रश्वास को जारी रखें। श्वास तथा प्राणों के अतीन्द्रिय पथ में आरोहण के समय 'सो' की ध्वनि उत्पन्न होती है। प्रश्वास तथा प्राणों के अतीन्द्रिय पथ में अवरोहण के समय 'हं' की ध्वनि उत्पन्न होती है।

प्राण एवं मन्त्र के प्रति अविरल सजगता बनाए रखें।

अब अपनी चेतना को आज्ञा चक्र या अनाहत चक्र पर एकाग्र करें।
विचार करना बन्द कर दें। अपनी सजगता को केन्द्रित करें। मानसिक शून्यता उत्पन्न करें।
केन्द्र विशेष पर साधारण चेतना बनी रहनी चाहिए।
सजगतापूर्वक श्वास लेने और छोड़ने की क्रिया को जारी रखें।
पहले की तरह आने-जाने वाली श्वास के साथ 'सोऽहं' का जप प्रारम्भ करें।
कुछ समय तक यह अभ्यास जारी रखें। यह अभ्यास एक माह तक करें। इसमें पूर्णता प्राप्त करने के बाद द्वितीय चरण में जायें।

द्वितीय चरण

अजपा के प्रथम अभ्यास के समय आपने भीतर जाने वाली श्वास में 'सो' पर ध्यान केन्द्रित किया था और बाहर आने वाली में 'हं' पर।
अब इस द्वितीय चरण में पूर्ण क्रिया को विपरीत कर दें। श्वास छोड़ते समय 'हं' पर ध्यान केन्द्रित करें और श्वास लेते समय 'सो' पर।
पूरे अभ्यास के दौरान 'हंसो' के बीच कोई अवकाश नहीं होना चाहिए।
बाहर आने वाला 'हं' और भीतर जाने वाला 'सो' शब्द 'प्राण' की तरंगें हैं, जिन पर अतीन्द्रिय पथ में ध्यान केन्द्रित करना है।
'हंसो' के अजपा के पश्चात् शून्य बन जाइये। कुछ भी विचार न कीजिये। चेतना को आज्ञा या अनाहत चक्र पर ले जाइये। ध्यान के केन्द्र की पूर्ण चेतना रहे। केन्द्र पर कोई दबाब न डालें।
केवल अपने मन को वहाँ एकाग्र करें।
सजगता, श्वास, शिथिलीकरण आदि की क्रियाएँ 'हंसो' के इस अभ्यास में वही रहेंगी जो 'सोऽहं' के अभ्यास में थीं।
'हंसो' का अभ्यास एक माह तक किया जा सकता है। इसमें सफलता के पश्चात् अजपा के तृतीय चरण में जाइए।

तृतीय चरण

प्रथम चरण में 'सोऽहं' के विन्यास पर आपने अपनी चेतना को प्रतिपादित किया था।
द्वितीय चरण में विपरीत 'हंसो' पर आपकी चेतना थी। अब हम तृतीय चरण पर आते हैं।

मानसिक रूप से अपने आप को शिथिल करें।
'मैं' का ध्यान रखकर मानसिक रूप से अपने को शान्त करें।
आत्म-सुझाव द्वारा सफलतापूर्वक विश्रान्ति प्राप्त की जा सकती है। 'मैं हूँ' की सजगता को जाग्रत करके भी ऐसा किया जा सकता है।
यदि किसी व्यक्ति के मन में तनाव है तो गिनती द्वारा शिथिलीकरण की विधि अपनाएँ।
भीतर आने वाली श्वास के साथ 1 गिने और बाहर जाने वाली श्वास के साथ 1 गिने।
भीतर आने वाली श्वास के साथ 2 गिने और बाहर जाने वाली श्वास के साथ 2 गिने। इस तरह 4 तक गिने।
5 वीं गिनती में सतर्क रहें।
लगातार सजगता बनी रहे। अनुभव करें कि आप निश्चित रूप से 5 गिन रहे हैं। मानसिक रूप से कहें, "मैं भीतर जाने वाली श्वास के 5 के प्रति सजग हूँ और बाहर आने वाली श्वास के 5 के प्रति भी सजग हूँ।" फिर 9 की संख्या तक पूर्ववत् गिनें। पुनः 10 पर आकर सचेत हो जायें।
पूरी तरह यह ध्यान रखें कि आप 10 गिन रहे हैं।
इस क्रिया को अनेक बार दुहरायें।
अब लययुक्त गहरी श्वसन क्रिया प्रारम्भ करें। श्वास पूर्णतः शान्त, शिथिल और दीर्घ हो।
समस्त श्वसन क्रिया में मन की एकाग्रता को बनाए रखें।
'सोऽहं' या 'हंसो' पर ध्यान न करें, वरन् भीतर जाने वाली श्वास में विशेष रूप से 'सो' और बाहर आने वाली श्वास में 'हं' का अनुभव करें।
अतीन्द्रिय पथ में केवल भीतर जाने वाली श्वास में 'सो' और चेतना के आरोहण का अनुभव करें।
बाहर आने वाली श्वास में 'हं' और चेतना के अवरोहण का अनुभव करें। अलग 'सो' और अलग 'हं'।
इस अभ्यास के पूर्ण होने पर मानसिक शून्यता का अनुभव करें। ध्यान के किसी भी केन्द्र पर अपनी चेतना को केन्द्रित करें। पुनः सचेत होकर श्वसन प्रारम्भ करें। स्वतंत्र रूप से 'सो' और स्वतंत्र रूप से 'हं' का अभ्यास करें।
इसका अभ्यास एक माह या इससे अधिक समय तक पूर्ण सतर्कता के साथ नियमित रूप से करें।

चतुर्थ चरण

आँखें बन्द कर एक स्थिर आसन में बैठ जायें।
आत्म-सुझाव, आत्म-सजगता, शान्ति, प्रसन्नता और आनन्द की अनुभूति द्वारा अपने आप को मानसिक रूप से शिथिल करें।
लययुक्त श्वसन प्रारम्भ करें।
नाभि से श्वास लें और छोड़ें।
उन विभिन्न केन्द्रों के प्रति अपनी सजगता बनाये रखें जहाँ-जहाँ से होकर श्वास नाभि से नासिका तक आती है और नासिका से नाभि तक जाती है। लययुक्त, शान्तिपूर्ण और तनावरहित श्वसन क्रिया करें।
अब भीतर जाने वाली श्वास के साथ 'सो' और बाहर आने वाली श्वास के साथ 'हं' का योग रहेगा, परन्तु आपकी चेतना का रूप प्रारम्भ से लगातार 'सोऽहंसो' रहेगा।
'सो' 'हं' में और 'हं' 'सो' में मिल कर एक अन्तहीन वृत्त का निर्माण करता है। 'हं' की तरंगों का विस्तार कर अन्दर जाती हुई 'सो' की तरंगों से जोड़ें। 'सो' की तरंगों का विस्तार कर 'हं' से जोड़ें। 'हं' का अन्तिम भाग 'सो' के आरम्भ के भाग से जुड़ता है और सोहंसो का एक निरन्तर वृत्त बनता है।
अब अभ्यास रोकें और मन को खाली कर दें। शून्यता का अनुभव करें। ध्यान के किसी भी केन्द्र पर एकाग्रता रखें। सब विचारों को दूर कर दें।
कुछ समय के बाद पुनः 'सोहं-सोहं' का अखंड वृत्त प्रारम्भ करें।
आधे या एक घण्टे के अभ्यास के बाद शान्ति और आराम का मानसिक रूप से अनुभव करें। अजपा के ये सभी अभ्यास मानसिक हैं, मौखिक नहीं।

पंचम चरण का परिचय

अब तक अजपा के चार चरणों का वर्णन किया गया है। अब हम पंचम चरण पर आते हैं। यह अभ्यास अपेक्षाकृत कठिन है। इसमें साधक से अधिक कल्पना अपेक्षित रहती है। इसमें चेतना को मेरुदण्ड में घुमाना पड़ता है।

एकाग्रता और ध्यान की क्रिया के अन्तर्गत दो तत्त्व हैं, बाह्य चेतना का नियंत्रण तथा अपनी शान्त और स्थिर आत्मा की अभिव्यक्ति।

यदि लैम्प का काँच काजल से भरा हो तो उसका पूर्ण प्रकाश नहीं मिल पाता। काँच की सफाई के बाद ही लैम्प का प्रकाश पूर्णतः प्रकट होता

है। इसी प्रकार आत्मा का प्रकाश या शक्ति हमारे अन्दर है, परन्तु मन की उलझनों, विचारों की विषमताओं, मन की अस्थिरता और व्याकुलता आदि के कारण दैनिक जीवन में वह प्रकट नहीं होता। ध्यान व्यक्ति की बाह्य चेतना को मिटाने में सहायक होता है तथा आत्म-सजगता को जाग्रत करता है। यह मन की अशुद्धियों को दूर करता है।

ध्यान की विभिन्न विधियाँ हैं? प्रथम ध्यान शरीर के समूह का है। द्वितीय ध्यान मन के समूह का है, अर्थात् कल्पनात्मक विचार करना। तृतीय ध्यान बुद्धि के समूह का है। ध्यान की चतुर्थ प्रक्रिया उच्च क्षेत्र की है। शारीरिक चेतना, मानसिक चेतना, बौद्धिक सजगता तथा व्यक्तित्व के पूर्णत: परे जाने पर प्रकाश प्रकट होता है। जब तक आप अपने को शरीर, मन तथा बुद्धि से परे नहीं ले जाएँगे तब तक आप पूर्ण पवित्रता एवं शान्ति को प्राप्त नहीं कर पायेंगे। अजपा के विभिन्न अभ्यासों का उद्देश्य इसी लक्ष्य की प्राप्ति है।

शिक्षा के क्षेत्र में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को प्राइमरी, मिडिल, हाई स्कूल एवं कॉलेज की शिक्षा क्रमश: प्राप्त करनी पड़ती है। इसी प्रकार 'ध्यान' की चार अवस्थाएँ हैं। प्रथम है, शिथिलीकरण; द्वितीय है, सजगता; तृतीय है, एकरूपता; एवं चतुर्थ है, विस्मृति। अजपा के पूर्व के अभ्यासों में इनका वर्णन किया जा चुका है।

अब हम अजपा के पाँचवें चरण में आते हैं। अजपा का पहला महत्त्वपूर्ण बिन्दु लययुक्त श्वसन क्रिया है और दूसरा महत्त्वपूर्ण बिन्दु सजगता है। ध्यान की सम्पूर्ण प्रक्रिया में आपको अपने प्रत्येक क्रिया-कलाप के प्रति सजग रहना चाहिए। यदि ध्यान करते समय आप यह भूल जायें कि मैं ध्यान कर रहा हूँ तो आपको ध्यान में कभी सफलता नहीं मिलेगी।

ध्यान करते समय असजगता की अवस्था आती है, जो लगभग नींद के समान ही होती है। प्राय: सभी साधकों के सामने यह कठिनाई आती है। आप लगभग 15 मिनट किसी समस्या पर लगातार विचार करें। जिस समय आप समस्या पर सोचते हैं उस समय आपकी चेतना इस बात की ओर नहीं रहती कि आप बार-बार एक ही समस्या पर विचार कर रहे हैं। सोचने की क्रिया समाप्त होने पर ही आपको ध्यान आता है कि आप अमुक समस्या पर ही विचार कर रहे थे। यह ध्यान नहीं है।

ध्यान में जो भी अभ्यास आप करते हैं, उसमें आपको सजग रहना चाहिए। इसलिए हम एक बात पर हमेशा जोर डालते हैं कि आप क्या कर

रहे हैं, इसके प्रति सजग रहें। चैतन्य रहें कि आप गिन रहे हैं। सजग रहें कि आप श्वास के आने-जाने को देख रहे हैं। संक्षेप में, पूर्णरूप से जागरूक एवं सतर्क रहें। श्वास की प्रत्येक क्रिया के प्रति सजग रहें और आपकी चैतन्यता अखंड बनी रहनी चाहिए।

यदि ध्यान में आप एक, दो, तीन गिने तो एक सैकण्ड के लिए भी आपका मन इधर-उधर न भटके। मन भटके तो भटकने दें, पर ध्यान में रखें कि मन भटक रहा है। यदि आप धारणा करें तो यह बात याद रखें कि आप धारणा कर रहे हैं। मन का स्वभाव ही है भटकना और सोना, आपको इसके लिए परेशान नहीं होना चाहिए, परन्तु मन की प्रत्येक वृत्ति की सजगता रखें।

जब कभी आपका मन, आपकी चेतना, आपकी सजगता भटकती है, सतर्क रहें। किसी भी मानसिक क्रिया को अनदेखा नहीं करना चाहिए। आपको एकाग्रता की प्रक्रिया की सजगता को नहीं छोड़ना चाहिए। केवल यही एक मूलभूत बिन्दु याद रखने योग्य है। यदि आप इस महत्त्वपूर्ण बिन्दु को याद रखना भूल जाते हैं तो सौ वर्षों तक भी ध्यान करने पर उसमें सफल नहीं हो सकते।

द्वितीय है, अतीन्द्रिय पथ में लयबद्ध श्वसन एवं सजगता।

तृतीय है, अतीन्द्रिय पथ में 'सो' और 'हम्' के स्पन्दनों का परिभ्रमण।

यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि जब भी आप मन को नियन्त्रित करना चाहते हैं, वह अधिक उद्दण्डतापूर्वक भटकने लगता है और आप नियन्त्रण रखने में विफल हो जाते हैं, परन्तु यदि आप चुपचाप मानसिक क्रिया को देखते रहें, तो यह शान्त हो जाएगा। अत: अजपा-जप के चारों अभ्यासों में हमने इस बात पर जोर देने का प्रयास किया है कि मन को रुक जाने हेतु बलपूर्वक आदेश देने के स्थान पर, आप उसके प्रत्येक क्रियाशीलन के प्रति सजग रहें। आपको लयबद्ध श्वसन, सजगता, आने-जाने वाली श्वास के साथ मन्त्र को जोड़ने और अन्त में मन में अस्थायी शून्यता उत्पन्न करने के अभ्यास बताये गये हैं।

अजपा के पाँचवें चरण में प्रारम्भ में आपको बहुत-सी कल्पना का उपयोग करना है। बाद में यह वास्तविक प्रक्रिया हो जायेगी। पूर्व के अभ्यास में आपने श्वास लेते समय श्वास को नाभि से ऊपर की ओर प्रवाहित होते हुए और श्वास छोड़ते समय नीचे नाभि की ओर प्रवाहित होते हुए अनुभव किया था।

अब आपको यह प्रक्रिया बदल देनी है और अपनी चेतना को मेरुदण्ड में अतीन्द्रिय चक्रों से होकर परिभ्रमण कराना है।

ये छ: चक्र हैं–नीचे से प्रारम्भ करने पर मूलाधार चक्र, पुरुषों में गुदा और जननेन्द्रिय के बीच मूलाधार पिण्ड में और स्त्रियों में योनिग्रीवा में; स्वाधिष्ठान चक्र, मेरुदण्ड के आधार में; मणिपुर चक्र, नाभि के ठीक पीछे मेरुदण्ड में; अनाहत चक्र, मेरुदण्ड में हृदय के ठीक पीछे; विशुद्धि चक्र, मेरुदण्ड में कण्ठ कूप के पीछे; और आज्ञा चक्र, सिर के मध्य में मेरुदण्ड के शीर्ष पर। सर्वप्रथम स्वयं को शारीरिक और मानसिक रूप से विश्रान्त कर लें और एक सुखद आसन में बैठ जायें।

पंचम चरण

कुछ देर तक लयबद्ध श्वसन करें और लगातार विचारों के प्रति सजग बने रहें।

अब श्वास छोड़ते हुए श्वास को आज्ञा चक्र से विशुद्धि चक्र, फिर अनाहत चक्र, फिर मणिपुर चक्र, फिर स्वाधिष्ठान चक्र और अन्तत: मूलाधार चक्र में ले जायें। श्वास की चेतना को मेरु-पथ में आज्ञा से मूलाधार तक परिभ्रमण करायें।

अब अपनी चेतना को क्षणभर के लिए मूलाधार में स्थिर करें।

अधोमुखी त्रिकोण की स्थिति सुनिश्चित करें, जिसमें कुण्डलिनी है।

कुण्डलिनी हमारे अन्दर की प्रसुप्त शक्ति है, जो मेरुदण्ड के आधार में सर्प के समान कुण्डलिनी मार कर सोई पड़ी है।

त्रिभुज के अन्दर वह कुण्डलिनी एक लिंगम् के चारों ओर साढ़े तीन फेरे लगाए स्थित है।

कुछ क्षणों के लिए कुण्डलिनी पर ध्यान करें।

अब मूलाधार से प्रारम्भ कर मेरुदण्ड में छ: चक्रों से होते हुए श्वास लेते हुए ऊपर जायें, फिर उसी प्रकार श्वास छोड़ते हुए नीचे आयें।

मेरुदण्ड में श्वास की चेतना के सामान्य परिभ्रमण के पश्चात् श्वास लेते समय 'सो' और श्वास छोड़ते समय 'हम्' मन्त्रों को क्रमश: जोड़ें।

चेतना का मार्ग मेरुदण्ड होगा और चेतना का केन्द्र होगा मूलाधार त्रिभुज और उसमें अवस्थित कुण्डलिनी।

श्वास लेते समय 'सो' का मानसिक उच्चारण करें और 'सो' के स्पन्दन को

श्वास लेते समय आज्ञा चक्र तक ले जायें। पुन: श्वास छोड़ते समय आज्ञा से मेरुदण्ड होकर 'हम' स्पन्द के साथ मूलाधार तक नीचे उतरें।
कुछ देर के लिए श्वास की चेतना को वहीं रखें और कुण्डलिनी पर ध्यान करें।
अब पुन: 'सो' स्पन्द के साथ मेरु-पथ में आरोहण करें।
आरोहण पथ 'सो' मन्त्र के साथ मूलाधार से आज्ञा तक है और अवरोहण पथ 'हम्' मन्त्र के साथ आज्ञा से मूलाधार तक है।
'हम्' के साथ मेरु-पथ में अवरोहण करें और कुछ देर तक विश्राम करें।
मात्र अपने प्रति सजग रहें, शून्यता नहीं हो।
सारांश यह है कि 'सो' मन्त्र के साथ मेरु-पथ में आरोहण करें और 'हं' मन्त्र के साथ मूलाधार तक अवरोहण करें। वहाँ पर श्वास बाहर ही रोक कर कुछ क्षणों तक कुण्डलिनी की स्थिति को सुनिश्चित करें।
तत्पश्चात् 'सो' स्पन्दन के साथ मेरु-पथ में आरोहण करें और 'हम्' मन्त्र के साथ अवरोहण करें।
अवरोहण के पश्चात् थोड़ा विश्राम करें और सहज आत्म-सजगता का अभ्यास करें।

इस प्रकार अजपा के इस पंचम चरण में 'सो' और 'हम्' के स्पन्दों के साथ मेरु-पथ में चेतना का आरोहण और अवरोहण कराना है।

सारांश

प्रथम–शिथिलीकरण की क्रिया।
द्वितीय–मेरुदण्ड में लययुक्त श्वसन एवं जागरूकता।
तृतीय–मेरुदण्ड में 'सो' और 'हं' के स्पन्दनों को घुमाना।
चतुर्थ–मूलाधार पर श्वास रोकना। अधोमुखी त्रिभुज एवं उसमें स्थित सर्पाकार शक्ति पर ध्यान करना।
निरन्तर ऊपर आने वाली चेतना, चेतना के केन्द्रीकरण और नीचे जाने वाली चेतना के प्रति सजग रहिये। जब श्वास छोड़ते हैं, उसे 'चेतना का अवरोहण' कहते हैं।
जब आप मूलाधार पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, उसे चेतना का केन्द्रीकरण कहते हैं।
जब आप श्वास लेते हैं तब यह 'चेतना का आरोहण' कहलाता है।

अजपा के इस अभ्यास में लयबद्ध श्वसन क्रिया, कल्पना-शक्ति को बढ़ाना, पूर्ण तथा निरंतर सजगता, पूर्ण विश्रान्ति और आप क्या कर रहे हैं इसके प्रति सजगता ध्यान रखने योग्य मुख्य बातें हैं।

मानसिक शान्ति की सर्वोत्तम विधि है – आत्म-सजगता और आत्म-सुझाव।

प्रारम्भ में चेतना को घुमाना कुछ कठिन जान पड़ता है, क्योंकि इसके लिए बहुत कल्पना की आवश्यकता पड़ती है, परन्तु कुछ अभ्यास के पश्चात् यह बाद में सरल और स्वाभाविक बन जाता है।

यह अभ्यास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इससे व्यक्ति को शान्ति मिलती है, निर्मलता प्राप्त होती है, अच्छे स्वप्न आते हैं और मानसिक दृष्टिकोण बदल जाता है। कहा जाता है कि जिस व्यक्ति की कुण्डलिनी जाग्रत होती है, उसे शान्ति प्राप्त होती है एवं बाद में ज्ञान। व्यक्ति को शान्ति एवं ज्ञान की प्राप्ति होने पर यह अभ्यास सफल माना जाता है। इसकी समाप्ति के बाद हम अन्तिम चरण पर आते हैं।

षष्ठ चरण

यह अभ्यास अधिक कठिन है। इसके लिए अपेक्षाकृत अधिक कल्पना, धैर्य और श्वसन क्रिया पर नियंत्रण की आवश्यकता है।

अपने वस्त्र ढीले कर लें।

मेरुदण्ड को सीधा रखते हुए बैठ जायें।

हाथों की अँगुलियों को एक-दूसरे में फँसा कर गोद में या घुटनों पर रखें।

अपनी मानसिक परेशानी को एक ओर रख दें।

स्वयं के प्रति सजग होने का अभ्यास करें।

आत्म-सुझाव को उपयोग में लायें।

आनन्द एवं शान्ति की कल्पना करें और अपने को पूर्णत: शिथिल कर लें।

अब अँगूठों से कानों को बन्द करें। अपनी अंगुलियों से आँखों और होठों को बन्द कर लें।

गहरी श्वसन क्रिया आरम्भ करें।

श्वास को भीतर लेने के बाद नासिका छिद्रों को मध्यमा अंगुलियों से बन्द कर लें।

अब अपनी चेतना को मेरुदण्ड में घुमायें। 'सो' की ध्वनि के साथ मूलाधार चक्र से ऊपर की ओर आज्ञा चक्र तक जायें।

'हं' के साथ आज्ञा चक्र से मूलाधार चक्र तक आयें। अब श्वास छोड़ें और कुछ देर आराम करें।
आराम के इस क्षण में आत्म-सजगता एवं जागरूकता बनाये रखें।
अजपा के छठे चरण के द्वितीय स्तर में आप आँख, कान, नाक या मुँह बन्द न करें।
केवल साधारण श्वास लेकर श्वास रोकें।
श्वास रोके रहने की अवस्था में अपनी चेतना को मेरु-प्रदेश में आज्ञा चक्र से मूलाधार चक्र तक घुमायें। मूलाधार चक्र पर कुछ देर रुकें।
अब आरोहण करें और श्वास छोड़ें।
आराम करें और आत्म-सजगता का अभ्यास करें।

उपसंहार

अजपा जप की विधि व्यावहारिक होने के कारण इसके वर्णन में यहाँ पर इस अभ्यास के मनोवैज्ञानिक महत्त्व के बारे में कुछ ज्यादा नहीं कहा गया है। फिर भी, यह नहीं भूलना चाहिए कि अजपा जप से मानसिक रोगों में महत्त्वपूर्ण लाभ पहुँचता है और इसके चिकित्सीय प्रभाव ज्ञात हैं। अजपा का एक सुप्रतिष्ठित महत्त्व भी है, जिसे साहित्य के विभिन्न गूढ़ तथा रहस्यमयी सूत्रों में इंगित किया गया है। यह एक गुप्त खजाना था, जिसे शताब्दियों तक छुपा कर रखा गया था और मात्र योग्य और निष्ठावान अभ्यर्थियों को ही बताया जाता था।

योगनिद्रा

योगियों को निद्रा की जिस कला का ज्ञान है उसका अभ्यास बहुत सरल और उपयोगी है। यदि इस कला को कुछ संशोधन के साथ सर्वसाधारण को समझाया जाय तो यह अनन्त लाभ प्रदान करने वाली सिद्ध होगी। यह सोने की कला है। इसे अतीन्द्रिय निद्रा कह सकते हैं।

बहुत कम लोगों को इस बात का ज्ञान है कि किस प्रकार सोना चाहिए। अधिकतर लोग पढ़ते या कुछ विचार करते हुए सोते हैं। सोचने की क्रिया के बीच नींद कब आती है इसका उन्हें ज्ञान नहीं रहता। विचारों से उलझे मन के साथ सोना शरीर एवं मन के लिए लाभदायक नहीं है। परेशान एवं उलझे मन के साथ सोना अच्छा नहीं है। इस प्रकार की नींद शरीर को पूर्ण आराम नहीं पहुँचाती। थकावट इससे दूर नहीं होती। व्यक्ति को बुरे स्वप्न आते हैं, पाचन क्रिया ठीक नहीं रहती एवं प्रातःकाल उन्हें प्रफुल्लता और शक्ति का अनुभव नहीं होता। इस प्रकार की नींद अस्वास्थ्यकर एवं अवैज्ञानिक है।

आपको इस बात की शंका हो रही होगी कि नींद की क्रिया में ऐसी कौन-सी बात विशेष है जिसे सीखने की आवश्यकता पड़ती है। प्रत्येक व्यक्ति को नींद आती है। सोना सबके लिए स्वाभाविक है। इसे सीखने में कोई विशेष बात नहीं है। परन्तु आप अनुभव करेंगे कि नींद जीवन की महत्त्वपूर्ण क्रिया है। नींद का प्रभाव हमारे मन, क्रियाकलाप, स्वभाव, आचरण और बुद्धि पर पड़ता है।

उदाहरण के लिए–यदि आप प्रातः जल्दी उठने की आदत डालेंगे, उसे दृढ़ता से प्रतिदिन के जीवन में व्यावहारिक रूप देंगे तो आप देखेंगे कि आपका पूरा जीवन बदल रहा है। उसका प्रभाव आपके जीवन से सम्बन्धित सभी बातों पर पड़ेगा। सर्वप्रथम आप अपने को ऊर्जावान, ताजा तथा मजबूत

पाएँगे। यदि आप समयाभाव की शिकायत करते रहे हों तो अब आपको लगेगा कि दिन बहुत लम्बा है और आपके पास करने को कार्य उतने नहीं हैं। एक या दो दिन के लिए नहीं, परन्तु जीवनपर्यन्त आप ऐसी दिनचर्या बनायेंगे तो ऐसा अनुभव करेंगे। हर समय आप पूर्ण स्वस्थ रहेंगे। कठिन कार्य के बाद आपको थकान का अनुभव नहीं होगा। नींद न आने की शिकायत नहीं रहेगी और मन हमेशा प्रसन्न और शान्त रहेगा। जीवन के प्रत्येक क्रियाकलाप में आप सफलता प्राप्त करेंगे। शर्त यही है कि आपको इस नियम का दृढ़ता से पालन करना होगा, तभी आप इसके परिणाम से परिचित होंगे। एकमात्र यही नियम आपमें निहित सब शक्तियों को जाग्रत करने में समर्थ होगा। आप अपनी असाधारण इच्छाशक्ति के स्वामी होंगे।

नींद को बिना किसी प्रकार का महत्त्व दिए प्रत्येक व्यक्ति इसे स्वाभाविक तथा साधारण क्रिया के रूप में लेता है। यह अतिशयोक्ति न होगी कि कोई भी सांसारिक व्यक्ति सोने की वैज्ञानिक विधि नहीं जानता। कोई गृहस्थ नहीं जानता कि नींद कैसे ली जाए। गृहस्थों को बहुत मेहनत करनी पड़ती है। यदि वे अतीन्द्रिय निद्रा की विधि सीख लें तो उन्हें विशेष लाभ प्राप्त होगा। वे लोग कम समय में ही नींद पूरी कर लेंगे और अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

साधारणत: बिस्तर छोड़ने के बाद व्यक्ति शरीर में थकान तथा सिर में भारीपन का अनुभव करता है। कुछ व्यक्ति जागने पर सुस्ती का अनुभव करते हैं। वे बिस्तर से उठना नहीं चाहते और आधी सुप्त और आधी जाग्रत अवस्था में पड़े रहते हैं। बहुत से व्यक्ति ऐसे हैं जो आठ घंटे या उससे भी अधिक लम्बी नींद लेते हैं, परन्तु ऐसा अनुभव करते हैं कि उनकी नींद पूरी नहीं हुई है। साधारणत: स्वस्थ व्यक्ति के लिए आठ घण्टे की नींद काफी ही नहीं है बल्कि आवश्यकता से अधिक है। कुछ लोगों को बिना ब्रोमाइड या अन्य प्रशान्तक दवाइयों के बिना नींद नहीं आती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि जहाँ कुछ लोगों को अत्यधिक नींद लेने की समस्या है वहीं बहुत से लोग अनिद्रा से पीड़ित हैं। कुछ लोगों को पुस्तक या उपन्यास पढ़े बिना नींद नहीं आती। स्वास्थ्य के लिए यह आदत भी खराब है। लेटे हुए पढ़ते समय आँखों पर विशेष दबाव पड़ता है। परिणामत: अधिक दबाब के कारण वे थक जाती हैं और शरीर में आलस्य आने से नींद आ जाती है। यह नींद का गलत तरीका है। कुछ लोग ऐसे हैं जिन्हें पैरों में मालिश किए

बिना नींद नहीं आती है। यह विधि खराब ही नहीं, बल्कि खासकर वात से पीड़ित लोगों के लिए खतरनाक भी है। यदि व्यक्ति घर से बाहर है और ऐसी सुविधा नहीं है तो उसे नींद ही नहीं आती। यह सभी खराब आदतें हैं और इन्हें हम निद्रा के रोग ही कहेंगे। निद्रा प्राकृतिक हो तथा उचित तथा स्वाभाविक रूप से आनी चाहिए।

एक और समस्या है। वर्तमान युग का व्यक्ति अत्यधिक व्यस्त रहता है। वह आधुनिक, औद्योगिक और भौतिक युग में महत्त्वाकांक्षाओं एवं इच्छाओं के पीछे दौड़ता रहता है। हम बड़े शहरों में लोगों के व्यस्ततम जीवन को जानते हैं। कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जो विभिन्न कार्यों में इस तरह व्यस्त हैं कि उन्हें उचित आराम करने या सोने का समय नहीं मिलता। उनके लिए यह एक समस्या है। व्यापारी, डॉक्टर, सामाजिक कार्यकर्ता, सरकारी या अन्य बड़े कर्मचारी सभी को नींद सम्बन्धी कुछ कठिनाई है।

योगनिद्रा एक ऐसा सुनहरा नियम है जो सभी के लिए निर्धारित किया जा सकता हैं, जिसके द्वारा वे तीन घंटों में नींद की आवश्यकता की पूर्ति कर सकते हैं। केवल तीन घंटा बिस्तर पर लेट कर ही वे 21 घण्टे के कार्य की थकान दूर कर सकते हैं। नेपोलियन ऐसा व्यक्ति माना जाता है जो कम सोता था। कहा जाता है कि कई दिनों तक उसे घोड़े की पीठ पर ही रहना पड़ता था और वहीं अपनी नींद पूरी कर लेता था। गाँधी जी भी कम सोने वाले व्यक्ति थे। वे कार्यक्रम में जाते समय और वहाँ से लौटते समय यात्रा के दौरान आराम से सो जाते थे। उनके कठिन और निरन्तर बौद्धिक कार्यों से सब परिचित हैं। उनकी सफलता का क्या रहस्य है? सच्चे अर्थों में वे योगी थे। उनके पास मन की पूर्ण एकाग्रता थी। वे गहरी एकाग्रता के साथ अपने उद्‌देश्य की पूर्ति में लगे हुए थे। एकाग्रता में असीम शक्ति है। कहा जाता है कि योगी कभी नहीं सोते। पूरी चेतना के साथ उनका मन अपने उद्‌देश्य की प्राप्ति की ओर लगा रहता है। योगी अपनी नींद को समाधि में परिवर्तित कर देता है।

जिस तरह सोते समय शरीर आराम करता है, उसी तरह मस्तिष्क को भी आराम मिलना चाहिए। रात्रि में भी मन का भटकना बन्द नहीं होता। विभिन्न विचारों को लिए हुए जब हम सोते हैं तब वासना, क्रोध, लालच, अभिमान, आसक्ति आदि के विचार अनेक रूप में हमारे सामने आते हैं। जब मन इधर-उधर भटकता रहता है तो व्यक्ति को अच्छी नींद नहीं आती है और भयंकर

स्वप्न दिखाई देते हैं। मन शान्त नहीं रहता। ताजगी का अनुभव नहीं होता। निरर्थक घटनाओं पर आधारित कामनापूर्ण विचार मध्यरात्रि में आते हैं और आत्मा को इधर-उधर भटकाते हैं तथा उसकी थकावट के कारण बनते हैं। इन अवांच्छित विचारों से ध्यान हटाने की आवश्यकता है। यदि मन को इन विचारों से अलग कर एक विशेष दिशा में निर्देशित किया जाय तो व्यक्ति को मानसिक शान्ति और आनन्द की प्राप्ति होगी।

निद्रा समाधि की ही निम्नतर अवस्था है। सोते समय व्यक्ति सांसारिक चिन्ता, परेशानी, थकावट आदि भूल जाता है और एक दूसरे लोक की यात्रा करता है। किसी प्रकार के दुर्व्यवहारों का प्रभाव उस पर नहीं पड़ता। समाधि में भी व्यक्ति को सांसारिक भावनाओं एवं संवेदनाओं का ध्यान और अनुभव नहीं होता। अंगों से भी किसी प्रकार का संदेश प्राप्त नहीं होता। परन्तु निद्रा और समाधि में भिन्नता है। नींद की अवस्था में व्यक्ति को अपने को नियन्त्रित रखने का न तो ज्ञान होता है और न इसकी शक्ति रहती है। समाधि में यद्यपि अंगों द्वारा उसे सांसारिक बातों का अनुभव नहीं होता, परन्तु वह आत्मिक रूप से जाग्रत रहता है। उसे सभी प्रकार का ज्ञान होता है, परन्तु यह अत्यन्त ऊँची आध्यात्मिक अवस्था है। यह ऐसी उच्चतम अवस्था है जिसमें व्यक्ति पूर्ण ज्ञान और प्रकाश की अवस्था में रहता है और उस समय यह संसार पूर्णत: तमसाच्छन्न प्रतीत होता है।

साधारणत: कुछ व्यक्ति अनिद्रा से कम या अधिक मात्रा में पीड़ित हैं और कुछ अत्यधिक नींद के शिकार हैं। यदि हम इस पर शान्त मन से विचार करें तो ज्ञात होगा कि हम कितना लम्बा और अमूल्य समय नींद में गँवा देते हैं। यदि इस अमूल्य समय का सदुपयोग हम कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए करते तो आश्चर्यजनक परिणाम की प्राप्ति होती।

सारांशत: यदि हम आवश्यक समय ही नींद के लिए दें तथा अन्य समय अपने जीवन के लिए या दूसरों के लिए रचनात्मक कार्य करें तो समाज में उच्च स्थान प्राप्त कर सकते हैं। अनुपयोगी नींद के लिए जो समय हम खर्च करते हैं उसका सदुपयोग अध्ययन, धनोपार्जन, लोक सेवा, आत्मज्ञान के लिए और आध्यात्मिक अभ्यास में करें तो अधिक अच्छा हो।

जब लघु निद्रा पर्याप्त है तब दीर्घ निद्रा की क्या आवश्यकता है? हम सबके लिए निद्रा विज्ञान का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। नींद किस प्रकार की हो? हमें कितनी देर सोना चाहिए? थकावट को किस तरह जल्द

दूर करें? मानसिक तनावों को कैसे हटायें? किस प्रकार न्यूनतम समय में शरीर और मन की थकावट दूर करें? किस प्रकार की नींद हमें ताजगी और ऊर्जा प्रदान करेगी? सार्थक नींद की व्यावहारिक विधियों का कुछ नियमों के साथ यहाँ वर्णन किया जाएगा। उदाहरण के लिए, अत्यधिक निद्रा आलस्य की सूचक तथा अनिद्रा मानसिक तनाव का कारण है। दोनों ही उचित नहीं हैं।

विसरित विचारों के साथ सोना ठीक नहीं। इससे बचना चाहिए। जिस प्रकार दिनभर के कार्यों को महत्त्व प्रदान कर अच्छी तरह सम्पन्न किया जाता है, नींद को भी वैसा ही महत्त्व देना चाहिए। मन को इसका प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। मशीन यदि बिना रूके दिन भर चलती रहे तो वह भी गर्म हो जाती है। इसी प्रकार नींद ठंढक पहुँचाने का साधन है। यह हमारे शरीर की बैटरी को पुन: सक्रिय बना देती है, जो दिन भर के कार्य के बाद निष्क्रिय हो जाती है। वह खर्च की हुई शक्ति को पुन: वापस करती है। बिस्तर पर लेटने से पूर्व 2 से 4 मिनट तक शान्तिपूर्वक बैठें। दिन भर के कार्यों से सम्बद्ध विचारों को मन से दूर करें। ऐसा करने की साधारण विधि यह है कि 'इष्ट मंत्र' का मानसिक रूप से जप आरम्भ करें। आपको परेशान करने वाले दैनिक विचार स्वत: दूर हो जायेंगे। तत्पश्चात् कुछ समय के लिए अपने इष्ट का ध्यान करें। इसी स्थिति में बिस्तर पर लेट जायें।

शारीरिक एवं मानसिक विश्रान्ति के लिए सामान्य निद्रा से योग निद्रा कहीं अधिक उपयोगी और प्रभावकारी है। योगनिद्रा द्वारा हम केवल विश्रान्ति ही नहीं प्राप्त करते हैं, वरन् अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पुनर्निमाण एवं सुधार करते हैं। तनाव-मुक्ति, विश्रान्ति और मानसिक शान्ति रूपान्तरण के मूल मंत्र हैं। तनावग्रस्त होने पर मानव का व्यवहार बदल जाता है और तनाव मुक्त होने पर वह सहज एवं स्वाभाविक हो जाता है। यदि आप योग निद्रा का अभ्यास करें तो आपके मन की प्रवृत्ति बदल सकती है, रोग दूर हो सकता है और आपकी रचनात्मक प्रतिभा वापस आ सकती है। मानव के अन्दर चेतन और अचेतन मन सर्वाधिक शक्तिशाली शक्तियाँ हैं। इस सरल योगनिद्रा में मानव-मन की गहराई में प्रवेश करने की क्षमता है। व्यक्ति को कोई शारीरिक, मानसिक या भावनात्मक समस्या हो या न हो, उसे अपने मन की गहराई में उतरने व चेतना के विकास के लिए नित्य योग निद्रा का अभ्यास करना चाहिए।

अभ्यास–1

योगनिद्रा के लिए कृपया तैयार हो जायें।
फर्श पर पीठ के बल शवासन में चित्त लेट जायें।
पैरों को कुछ अन्तर पर रखें।
दोनों हाथ बगल में रहें। हथेलियाँ ऊपर की ओर खुली रहें।
आँखें बन्द कर लें। उन्हें अभ्यास अवधि में बन्द रखें।
अब पूरे शरीर में आन्तरिक शिथिलता का अनुभव, पूरे शरीर की सजगता और पूर्ण निश्चलता के महत्त्व के प्रति सजग हो जाइये। सिर से लेकर पैरों तक पूरे शरीर के प्रति सजग बनें। पूर्ण स्थिरता तथा शरीर की पूर्ण सजगता।
अपने पूरे शरीर के प्रति सजगता बनाये रखें... पूरा शरीर... पूरा शरीर... पूरा शरीर...।
मानसिक रूप से स्वयं को कहें–मैं सजग हूँ... मैं योग निद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ... मैं सोऊँगा नहीं (जब तक आप अनिद्रा के लिए अभ्यास नहीं कर रहे हो)... मैं सम्पूर्ण अभ्यास के दौरान जाग्रत रहूँगा। अब अपनी चेतना को पूरे शरीर में घुमाना शुरू करें। अपने मन में शरीर के विभिन्न अंगों के नाम लें और साथ में उस अंग के प्रति सजग बनें।
आप अपने शरीर के विभिन्न अंगों का मानस दर्शन मस्तिष्क पटल पर भी कर सकते हैं पर सहजता से, बगैर जोर लगाये।

दाहिना भाग

दाहिने हाथ के प्रति सजग हो जायें। (विराम)
दाहिने हाथ का अंगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवीं अंगुली, हथेली, हथेली के पीछे का हिस्सा, कलाई, भुजा का निचला हिस्सा, केहुनी, भुजा का ऊपरी हिस्सा, कंधा, बगल, कमर का दाहिना भाग, नितम्ब, दाहिनी जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, दाहिने पैर का अंगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवीं अंगुली ...

बायाँ भाग

बायें हाथ के प्रति सजग हो जायें।
बायें हाथ का अंगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवीं अंगुली, हथेली, हथेली के पीछे का हिस्सा, कलाई, भुजा का निचला हिस्सा,

केहुनी, भुजा का ऊपरी हिस्सा, कंधा, बगल, कमर का बायाँ भाग, नितम्ब, बायीं जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर का अंगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवीं अंगुली...

शरीर का पिछला हिस्सा

अब पीठ की तरफ आते हैं। अपनी सजगता को दाहिने नितम्ब, बायें नितम्ब, पीठ के नीचे का हिस्सा, पीठ का दाहिना भाग, पीठ का बायाँ भाग, पीठ के मध्य का भाग... दाहिना पुट्ठा... दोनों पुट्ठों का मध्य भाग... ऊपर से लेकर नीचे तक पूरे मेरुदण्ड की सजगता, गर्दन के पीछे का भाग, सिर से पीछे का भाग... शरीर का पूरा पिछला भाग...

शरीर के सामने का भाग

अब सिर के ऊपरी हिस्से पर जायें, सिर का ऊपरी भाग, माथा, सिर के दोनों भाग, दाहिनी भौंह, बायीं भौंह, भ्रूमध्य, दाहिनी पलक, बायीं पलक, दाहिनी आँख, बायीं आँख, दाहिना कान, बायाँ कान, दाहिना गाल, बायाँ गाल, नाक, नासिकाग्र, ऊपर का होंठ, नीचे का ओंठ, ठुड्डी, गला, छाती का दाहिना भाग, छाती का बायाँ भाग, छाती का मध्य भाग, पेट, नाभि, पेट का निचला भाग...

मुख्य भाग

पूरा दाहिना पैर...पूरा बायाँ पैर... दोनों पैर एक साथ (अंतराल)
पूरी दाहिनी भुजा... पूरी बायीं भुजा.. दोनों भुजाएँ एक साथ (अंतराल)
पूरी पीठ, नितम्ब, मेरुदण्ड, दोनों पुट्ठे... पूरा सामने का भाग, पेट, वक्ष ... पूरा सामने और पीछे का हिस्सा... एक साथ ... पूरा सिर ... पूरा शरीर एक साथ ... पूरा शरीर एक साथ ... पूरा शरीर एक साथ... (एक या दो चक्र की पुनरावृत्ति कर गति को धीमा करते जायें)
कृपया सोइएगा नहीं ... पूर्ण सजगता... सोना नहीं है... कोई हलचल नहीं... (अंतराल)। सम्पूर्ण शरीर फर्श पर पड़ा है... अपने शरीर के प्रति सजग हो जाइये जो फर्श पर लेटा हुआ है। (अन्तराल) आपका शरीर फर्श पर लेटा हुआ है, अपने शरीर को इस कमरे में स्थिर फर्श पर पड़ा देखें। इस चित्र की कल्पना अपने मन में करें। अपने शरीर की सिर से पैर तक सजगता को

बढ़ायें। कमरे व वातावरण के प्रति सजग हो जायें। अपने शरीर के अंगों को हिलाना शुरू करें और पूरे शरीर को तान लें। जब आप पूर्ण रूप से जाग्रत हो जायें, धीरे से उठकर बैठ जायें। योगनिद्रा का अभ्यास पूर्ण हुआ।

अभ्यास–2

अभ्यास 1 के अनुसार विश्रान्त होवें तथा चेतना को उपलब्ध समय के अनुसार अपने सभी अंगों पर या मुख्य अंगों में घुमाएँ। अब अपनी स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग हो जायें।

इसके प्रति सजग रहें कि आप श्वास ले रहे हैं और श्वास छोड़ रहे हैं।

श्वास जोर से नहीं लेनी है, बिलकुल सहज, स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग रहें।

अब श्वास की लय के प्रति सजग हो जायें–चाहे यह धीमी हो या तेज हो, गहरी हो या उथली हो, परन्तु इसमें परिवर्तन न करें। सिर्फ सजगता बनाये रखें।

अब मानसिक रूप से प्रत्येक श्वास-प्रश्वास को गिनना शुरू करें। मानसिक रूप से श्वास और प्रश्वास 1, श्वास और प्रश्वास 2 इसी तरह गिनते जायें। समय की उपलब्धता के अनुसार 27, 49, 99 तक गिनें।

प्रत्येक श्वास और संख्या के प्रति सजग रहें; यदि आप एक भी श्वास गिनना भूलते हों तो पुन: एक से गिनना शुरू करें।

सतत् जाग्रत रहने का प्रयास करें, क्योंकि इस अभ्यास से आपको नींद आ सकती है।

अत: यह अनिद्रा के रोगियों के लिए अच्छा है।

अभ्यास–3

अभ्यास 1 और 2 का अनुसरण करें। अपने भ्रूमध्य के प्रति सजग हो जायें। प्रयास करें और अपने मन को इस बिन्दु पर एकाग्र करें। अब ॐ अथवा सोऽहं का मानसिक जाप इस बिन्दु पर करें। इसे जितना सम्भव हो करें; यदि मन भटकता है तो इसे पुन: धीरे से भ्रूमध्य और मंत्र पर लावें।

अभ्यास–4

पहले अभ्यास के अनुसार अभ्यास करें। अब अपनी स्वाभाविक श्वास के प्रति कुछ मिनटों के लिए सजग हो जायें।

अब श्वास के साथ ॐ अथवा सोऽहं को जोड़ दें।
श्वास लेते समय मानसिक रूप से ॐ या सोऽहं का उच्चारण करें और श्वास छोड़ते समय इस मंत्र की पुनरावृत्ति करें।
जब तक सम्भव हो, करते रहें।
इस जप को चार मंत्रों के साथ भी किया जा सकता है, जैसे, चतुर्थ प्राणायाम में किया जाता है। इसमें मंत्र को प्रत्येक श्वास-प्रश्वास के साथ चार बार उच्चारित किया जाता है।
इस प्रकार के जप से मन अत्यन्त एकाग्र हो जाता है।

उपसंहार

योगनिद्रा के अभ्यास को किसी भी समय किया जा सकता है। दिन के कठिन श्रम के दौरान यदि अवसर हो तो इस अभ्यास को करके आराम लिया जा सकता है। अत्यधिक व्यस्त लोग जो आराम के लिए दस से पन्द्रह मिनट का समय भी नहीं निकाल पाते हैं, वे अपने कार्य के दौरान कुर्सी पर बैठकर योगनिद्रा का अभ्यास कर सकते हैं।

इसका अभ्यास कार्यालय में कुर्सी पर बैठे हुए दो या पाँच मिनटों तक करके थकान और क्लान्ति से छुटकारा पाया जा सकता है। इसके द्वारा समस्त शारीरिक एवं मानसिक तनाव दूर हो जायेंगे। शरीर की खर्च हुई ऊर्जा की भरपाई पर्याप्त मात्रा में हो जायेगी। वे लोग जिन्हें अत्यधिक मानसिक श्रम करना पड़ता है, वे इस क्रिया का अभ्यास दो-दो मिनट तक दिन में अनेक बार करें।

इस अभ्यास की समस्त प्रक्रियाओं को उपलब्ध समयानुसार कम या ज्यादा किया जा सकता है। समय की उपलब्धता कम है तो अभ्यास कम अवधि का होगा। यदि समय पर्याप्त है तो शरीर के हर भाग के प्रत्येक अंग पर चेतना घुमाने में पर्याप्त समय दिया जा सकता है। एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात और है कि इस अभ्यास को दिन के समय करते हुए सतर्क रहना चाहिए कि आपको नींद न आने पाये। यह अभ्यास शीघ्रता से नींद लाता है।

इस अभ्यास की एक और रोचक बात है। यदि आपने पहले से ही नींद की अवधि के बारे में निर्णय कर रखा है तो उस निश्चित समय पर आपको जगाने के लिए एक हल्का झटका लगेगा। यह तथ्य वर्षों के प्रायोगिक अनुभवों पर आधारित है।

आवश्यकता इस बात की है कि आपको अपनी पसन्द के अनुसार एक विधि को चुनकर कुछ दिनों तक या महीनों तक इसका नियमित अभ्यास करना चाहिए। थोड़े से फेर-बदल से यह अभ्यास इच्छुक व्यक्ति को गहन लोक में प्रवेश करा सकता है। इस अभ्यास को आप गुरु से भी सीख सकते हैं। इन गहन और सूक्ष्म अभ्यासों को बिना गुरु-कृपा के नहीं समझा जा सकता है।

अन्तर्मौन

जब आप एकाग्रता का अभ्यास करते हैं तथा मन की भटकती हुई प्रवृत्तियों को एकत्र करने का प्रयास करते हैं तब कभी-कभी आपको कुछ तनाव का अनुभव होता है। इस तनाव के कारण सिर दर्द या अन्य शिकायतें उत्पन्न हो जाती हैं। अत: एकाग्रता के समय ऐसी विधि अपनानी चाहिए जिससे तनाव उत्पन्न न हो। एक थका हुआ व्यक्ति जब बिस्तर पर जाता है, तो बिना परेशानी के उसे तुरन्त नींद आ जाती है। इसी तरह कुछ ऐसी विधियाँ हैं जिनके द्वारा बिना कठिनाई के एकाग्रता एवं ध्यान की प्राप्ति हो जाती है।

एकाग्रता का प्रारम्भ प्रार्थना से करना सर्वोत्तम है। जब हम एकाएक ध्यान प्रारम्भ करते हैं तब रक्त का प्रवाह अचानक मस्तिष्क में बढ़ जाता है। विभिन्न विचार मन में विचरण करने लगते हैं और ध्यान में बाधा उत्पन्न कर देते हैं। दिन में किये गये सम्पूर्ण कार्यकलाप मानस-पटल पर उभरने लगते हैं। यदि ॐ का ध्यान करते हैं तो स्वाभाविक रूप से आप चाहेंगे कि ॐ के सिवाय और कुछ भी आपके मानस-पटल पर न आए, परन्तु कई कारणों से दैनिक अनुभव और उनके प्रभाव ध्यान के समय उपस्थित होते हैं। इसलिए प्रात: काल प्रथम प्रहर ध्यान के लिए सर्वोत्तम समय है।

रात को जब तन्द्रा का प्रभाव आप पर होता है तब अपने इष्टदेव के ध्यान में अत्यधिक सफलता मिलती है। परन्तु प्रात: 4 से 6 बजे के मध्य ध्यान करना उत्तम है। कुछ व्यक्ति दिन के किसी समय भी ध्यान करते हैं। यह निस्संदेह अच्छा है, परन्तु उन्हें अनुभव होगा कि इस समय ध्यान करने पर मस्तिष्क में कुछ तनाव-सा होता है। वास्तव में ध्यान स्वाभाविक होना चाहिए। इसका विकास बिना प्रयत्न के होना चाहिए। यदि आप प्रारम्भ से उचित विधि से ध्यान का अभ्यास करेंगे तो आपको कोई कठिनाई नहीं होगी।

अत: इस अवस्था को लाने के लिए प्रथम अभ्यास आन्तरिक मौन है। आन्तरिक मौन के अनेक क्रमवार चरण हैं। अन्तर्मौन के प्रारम्भ में आपको विचारों से संघर्ष नहीं करना है। केवल उसे साक्षी भाव से देखते जाना है। यदि विचार मन में आते हैं तो आने दें। बन्द आँखों से द्रष्टा भाव से देखते जायें। विचारों को रोकने का प्रयत्न मत करें।

विभिन्न विचार आप पर धावा बोलें तो भी स्थिरता नष्ट न होनें दें। उन विचारों को दूर करने का प्रयास भी नहीं करें। आँखें बन्द करें और मात्र द्रष्टा के समान देखते जायें। अनुभव करें कि एक मालगाड़ी की तरह विचार आपके सामने से निकलते चले जा रहे हैं।

प्रथम चरण की तैयारी

ध्यान का केन्द्र बिन्दु मस्तिष्क है। यदि वहाँ रक्त का संचार कम या अधिक होगा तो ध्यान सफल नहीं होगा। ध्यान के लिए मस्तिष्क में रक्त का अनुपात कितना हो यह बतलाना सम्भव नहीं है। इसे ज्ञात करने के लिए कोई यन्त्र भी नहीं है। परन्तु सन्तों ने इसका एक उपाय बताया है। जब हमारे विचार स्वप्न का रूप लेकर मानस-पटल पर उभरते हैं तब ध्यान के लिए उचित मानसिक अवस्था मानी गई है। जब तक आपके विचारों ने भौतिक रूप धारण नहीं किया है तब तक यह समझें कि आप ध्यान के लिए तैयार नहीं हैं और ऐसी स्थिति में आप सरलतापूर्वक ध्यान नहीं कर सकेंगे।

प्रारम्भिक अवस्था

हम अब परीक्षण करें कि इसका अभ्यास कैसे किया जाए और उस समय आपकी मनोवृत्ति कैसी होनी चाहिए।

आँखें बन्द करें। मानसिक रूप से अपने को आराम की अवस्था में लाने का प्रयास करें। विधि यह है कि आप अनुभव करें कि आप आराम करने जा रहे हैं। किसी तनावपूर्ण विचार को याद न करें, जैसा कि आप साधारणत: करते हैं।

शान्ति, आराम, आनन्द का अनुभव करें। आप अपने को जितना आराम की स्थिति में लायेंगे, उतने ही अधिक समय तक एकाग्रता का अभ्यास कर सकेंगे।

इस आराम की अवस्था में अनुभव करें कि आप कुर्सी पर बैठे हैं और उस पर आपका शरीर आराम की स्थिति में है, अर्थात् आप अपने और अपनी स्थिति के प्रति सजग रहें।

इसे स्वयं के प्रति सजगता कहते हैं।

पैर भी शिथिल रहें। इसके लिए कुछ समय लगेगा।

शिथिलीकरण की क्रिया प्रारम्भ में तनावपूर्ण लगती है, परन्तु बाद में शान्ति देने वाली हो जाती है।

बन्द आँखों से आँखों के पीछे ललाट में अन्धकार को देखें।

क्या इस अन्धकार के रंग में परिवर्तन हो रहा है?

क्या आप वहाँ तारा या कुछ और देखते हैं?

आप वहाँ क्या देखते हैं?

कुछ व्यक्तियों को वहाँ तारा, प्रकाश, या कुछ व्यक्तियों को अन्धकार दिखाई देता है।

आपको कुछ दृष्टिगोचर हो या न हो, इसकी चिन्ता मत करें। केवल इस पर ध्यान करते जायें। बहुत से विचार उत्पन्न होंगे। उनको आने दें।

ये विचार, ध्वनियों की संवेदनायें या अन्य कोई भावनायें हो सकती हैं।

आप शरीर में खुजलाहट या कँपकँपी का भी अनुभव कर सकते हैं।

इन सब अनुभवों के द्रष्टा भर रहें।

किसी विचार, संवेदना, ध्वनि आदि से तद्रूप नहीं होना है।

इसकी समाप्ति के बाद आपको अन्तर्मौन के वास्तविक अभ्यास के लिए अग्रसर होना चाहिए।

प्रथम चरण–एक परिचय

अन्तर्मौन का यह प्रथम अभ्यास है। यह अभ्यास एक ऐसी तकनीक विकसित करता है जो व्यक्तिपरक ढंग से कार्य करके विचार प्रक्रिया में विराम लगाती है। बुरे विचार भी आयें तो इस बात की चेतना बनाए रखें कि आप केवल द्रष्टा हैं। यदि आप उनके तद्रूप नहीं होंगे तो उनका शीघ्र ही ह्रास हो जाएगा। आपको उनसे विचलित नहीं होना चाहिए। आप अच्छे विचारों से भी प्रभावित न होवें। आप यह न सोचें कि आपका ध्यान बहुत सुन्दर हो रहा है, क्योंकि अच्छे विचार आ रहे हैं। चाहे किसी भी प्रकार के विचार हों, शुद्ध या अशुद्ध, अच्छे या बुरे, आप केवल उन्हें देखते रहें। उनके साथ उलझें नहीं।

विचारों को द्रष्टा के रूप में देखते समय कभी-कभी मानसिक निलम्बन की स्थिति हो जाती है। कुछ समय के लिए हम भूल जाते हैं कि हम विचारों को देख रहे हैं। तब चेतनावस्था में भ्रम उत्पन्न हो जाता है। हम नहीं जानते कि हम क्या कर रहे हैं। बाद में हमें अनुभव होता है कि हम अन्तर्मौन का अभ्यास कर रहे थे। पुन: हम अभ्यास प्रारम्भ करते हैं। भ्रम की अवस्था बार-बार आती है, इस अवस्था को दूर करने की एकमात्र विधि यह है कि अन्तर्मौन का अभ्यास जारी रखें। कुछ दिनों के निरन्तर अभ्यास के बाद अन्तर्मौन की स्थिति स्पष्ट होती जाती है और अन्त में अन्तिम चरण में विचारों का अवलोकन साध्य हो जाता है।

एक सफल अभ्यास के बाद विचार एक स्थूल पुंज के रूप में नहीं रहेंगे। वे सूक्ष्म रूप में मानस-पटल पर उभरेंगे। फिर प्रत्येक विचार सूक्ष्म परिमाण के साथ एक सूक्ष्म वास्तविकता हो जाता है।

प्रथम अभ्यास में अन्तर्मौन शिथिलीकरण की क्रिया से प्रारम्भ होता है। दूसरी बात यह है कि आपको अपने विचारों का निष्पक्ष द्रष्टा बनना होगा। तृतीय महत्त्वपूर्ण बात है कि अच्छे या खराब विचारों से प्रभावित नहीं होना चाहिए। अन्त में जब विचार सूक्ष्म रूप में आते हैं तब समझें कि अभ्यास पूर्ण है।

अन्तर्मौन के निरन्तर अभ्यास के बाद आप अपने विचारों को देख सकेंगे। परन्तु यह ध्यान नहीं, यह ध्यान आरम्भ करने से पूर्व का मात्र एक पूर्वाभ्यास है। इस अनुभव की प्राप्ति के बाद आप अपने इष्टदेव का ध्यान कर सकते हैं। आपके लिए अपने इष्टदेव का सूक्ष्म रूप में दर्शन करना सरल हो जायेगा। आप जितनी देर तक चाहें, अपने इष्टदेव का ध्यान कर सकते हैं।

प्रथम चरण – विचारों का आत्मनिरीक्षण

अभ्यास प्रारम्भ करने के पूर्व अपने मन को विश्रान्त कर लें।
किसी भी आरामदायक आसन में बैठ जायें जिसमें रीढ़ की हड्डी सीधी रहे।
स्वयं को मानसिक रूप से विश्रान्त करें।
कल्पना करें कि धूप में कड़ी मेहनत के बाद जब आप एक ठण्ढे कमरे में आकर सोफे पर बैठते हैं तब कितने आराम का अनुभव करते हैं।
ऐसी ही विश्रान्ति का अनुभव करें।
विश्रान्ति ध्यान की एक सहायक क्रिया है।

जिस प्रकार शिथिलीकरण एकाग्रता में सहायक होता है, उसी प्रकार आत्मसुझाव भी सहायक होता है।
अनुभव करें कि आपको कुछ नहीं करना है, सिर्फ आनन्द का अनुभव करें।
इस प्रकार मानसिक रूप से आप अपने को विश्रान्त करने का प्रयत्न करें।
अन्तर्मौन के इस चरण में जागरूक रहें कि आप सोच रहे हैं। 'मैं सोच रहा हूँ' यह चेतना पूरे समय बनाए रखनी है।
केवल एक सावधानी रखनी है कि आप विचारों से जुड़े नहीं।
सजग रहें कि आप विचारों के साथ बह तो नहीं रहे हैं।
पूरे अभ्यास के दौरान विचारों की प्रक्रिया के प्रति जागरूक रहें। 'मैं सोच रहा हूँ' की चेतना बनी रहे।

द्वितीय चरण–एक परिचय

मन में कई विचार उत्पन्न होते हैं। कभी-कभी वे इतने सबल होते हैं मानो हमारे भीतर से कोई अदृश्य शक्ति विचारों की लहर उत्पन्न कर रही हो। हम कुछ आवेशजनित विचारों को नहीं चाहते, परेशानी एवं चिन्ता में भी नहीं पड़ना चाहते। परन्तु बहुत प्रयत्न करने के बाद भी हम विचारों की उन तरंगों को नहीं रोक पाते।

यह इस बात का प्रमाण है कि मन हमारे नियन्त्रण में नहीं है। इन स्वेच्छाचारी शक्तियों को अपने उचित स्थान में बनाए रखने के लिए कोई प्रभावशाली क्रिया आवश्यक है।

यदि समय पर यह नहीं किया गया तो मनोभंग की अवस्था आ जाएगी, फलस्वरूप मानसिक तनाव से मुक्ति के लिए प्रशान्तकों, सम्मोहन एवं मादक द्रव्यों का सहारा लेना पड़ेगा।

यदि विचार तरंगें समय पर नियन्त्रित नहीं की जाती हैं तो वे ही हमारी आदतों का एक हिस्सा बन जाती हैं। फिर तो उन्हीं के सम्मोहक संगीत में हम अपना आने वाला सारा जीवन नष्ट कर देते हैं। हम तो केवल संकटापन्न स्थिति में जागते हैं, जब सारी सम्भावनायें हाथों से निकल गई होती हैं।

हम सचेत तब होते हैं जब नाड़ी मण्डल क्षतिग्रस्त होता है, मनोज्वर, मनोविकार जैसे रोग प्रकट हो जाते हैं। उनको नियंत्रण में लाने में हमसे काफी विलम्ब हो गया होता है। इस अवस्था से निजात दिलाना किसी भी चिकित्सक के वश के बाहर हो जाता है।

यदि संकट शुरू होने के पूर्व ही सावधानी बरती जाये और अपनी मानसिक आदत के रूप में विचार नियमन कर लिया जाये, तो अनेक मानसिक रोगों को अपने से दूर रखने में सफल हो सकते हैं।

तब क्या उपाय है? योग में एक विधि का वर्णन किया गया है। इस विधि के प्रयोग द्वारा व्यक्ति अपने विचारों का स्वामी बन सकता है। उसे विचारों को नियन्त्रित करने की आवश्यकता नहीं। मन को मारने की भी जरूरत नहीं। उसे केवल अपने विचारों का पूर्णरूपेण स्वामी बनना है। जिसने मन पर अधिकार पा लिया वह अपने मन को प्रशिक्षित नौकर की तरह रख सकता है। जब मन को सही ढंग से नियन्त्रण में रखा जाता है तब वह आपके लिए अनेक रूपों में सहायक होगा। मन को प्रशिक्षित करने की विधियों में एक विधि वह है जो अन्तर्मौन में द्वितीय चरण के रूप में वर्णित की गई है।

अन्तर्मौन के इस अभ्यास में एक विशेष विचार उत्पन्न किया जाता है, इस पर स्वेच्छा से कुछ देर विचार करते हैं। तत्पश्चात् उसे पूर्णत: समाप्त कर दिया जाता है। इसमें अपनी इच्छानुसार कोई विचार उत्पन्न करते हैं। उस पर कुछ देर विचार करने के बाद उसे अपनी इच्छा शक्ति द्वारा अलग कर दिया जाता है।

यह अधिक अच्छा होगा कि आप निम्न कोटि के विचार से प्रारम्भ करें। ईर्ष्या, क्रोध, लोभ या इसी तरह के विचार उत्पन्न करें तथा उस पर विचार करें। कुछ समय बाद मानसिक शक्ति से उसे हटा दें। हम इस अभ्यास में इस तरह के विचारों को लाने का सुझाव देते हैं, क्योंकि मन स्थूल विचारों के ईर्द-गिर्द घूमने का आदी होता है और वास्तव में निम्न विचार चेतना के लिए गुरुत्व केन्द्रों के समान होते हैं। अच्छे विचारों को मन जल्दी भूल जाता है। अच्छे विचारों से दूर रहना मन के लिए बहुत आसान होता है। जबकि निम्न विचारों में अरुचि पैदा करना इसके लिए कठिन होता है। ईर्ष्या, क्रोध, लालच, भय, काम, अहं का मन से गहरा सम्बन्ध होता प्रतीत है, जबकि शान्ति, करुणा, प्रेम, क्षमा आदि भाव ध्यान के समय अधिकतर अनुपस्थित रहते हैं। अच्छे संकल्प भुला दिये जाते हैं, बुरी इच्छायें बनी रहती हैं।

अत: आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए–किसी विशेष विचार का निर्माण करें। विभिन्न प्रकार की कल्पना के साथ इसी विचार को कुछ काल तक बनाए रखें। तत्पश्चात् उस विचार को हटा दें। कुछ दिनों तक इस विधि का अभ्यास करने पर आपको एक ऐसी प्रक्रिया का ज्ञान हो जाएगा जिसके द्वारा आप किसी ऐसे स्थायी विचार को दूर कर सकेंगे जो आपको परेशान करता

हो। अन्तर्मौन की यह विधि अत्यधिक लाभकारी है। साथ ही अन्तर्मौन का यह अभ्यास समाप्त होने पर आपको अपने इष्ट का ध्यान करना होगा। यह बताया जा चुका है कि यदि आपने एकाग्रता और अनुभूति की सम्यक् अवस्था प्राप्त कर ली हो तो ही आप इष्टदेव का आन्तरिक दर्शन कर सकेंगे।

द्वितीय चरण – विचार नियमन

अब आपको अन्तर्मौन का अभ्यास करना है।
कोई विचार लायें। उसे कुछ देर बनाए रखें।
इसे हटा दें। इस प्रकार यह अभ्यास करते जायें।
चाहें तो विचार का चुनाव कर लें। पर एक बात ध्यान में रखें कि विचारों के साथ तद्रूप न हों।
आप जो कर रहे हैं उसके प्रति लगातार सजग रहें।
किसी अनिच्छित विचार का प्रवेश न होने दें।
स्वेच्छा से आए विचारों को हटा दें।
स्वत: आने वाले विचारों को हटा दें। अपनी इच्छा से विचार लायें, उसे कुछ देर तक रोकें और पुन: उसे हटा दें।
विचार से आसक्त न रहें।
अनासक्ति के साथ अभ्यास करें।
स्पष्ट रूप से कल्पना करें कि आप क्या सोच रहे हैं।
कभी-कभी सोचते समय भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी।
आप यह नहीं कह पायेंगे कि आप क्या सोच रहे हैं।
जैसे यह स्थिति आती है, आप तुरन्त अपने इष्ट का ध्यान प्रारम्भ कर दें।
अपने इष्ट देव पर ध्यान करते समय कुछ बातें याद रखें। सामान्य अवलोकन द्वारा अपने इष्ट पर विचार करने का प्रयत्न करें। इष्टदेव के पूर्ण चित्र के विषय में सोचें। उस स्थान का ध्यान करें जहाँ वह चित्र है। उसके चारों ओर के वातावरण का विचार करें।
सामान्य से विशेष की ओर कल्पना करते जायें।

व्यावहारिक समस्यायें

तृतीय चरण पर विचार विमर्श करने के पूर्व हम विश्रान्ति तथा अन्तर्मौन के मध्य आने वाली कठिनाइयों पर विचार करेंगे।

मुख्य समस्या है नींद की। इसका अनुभव विशेष रूप से विश्रान्ति के अभ्यास के समय होता है। पहले झपकी आती है, तत्पश्चात् गहरी नींद आती है। जो अत्यधिक तनाव को दूर करना चाहते हैं उनके लिए नींद आवश्यक है, परन्तु जिन्हें आध्यात्मिक उन्नति करनी है उन्हें इस तकलीफ को दूर करने का उपाय ढूंढना होगा। यदि आप समाधि की प्राप्ति चाहते हैं या आध्यात्मिक उत्थान चाहते हैं अथवा सूक्ष्म शरीर से सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं, कुण्डलिनी जाग्रत करना चाहते हैं या अन्य प्रकार के किसी ध्यान का अभ्यास करना चाहते हैं तो इस कठिनाई पर नियन्त्रण पाना आवश्यक है। इस कठिनाई पर नियंत्रण प्राप्त करने की क्रिया का ज्ञान होना आपके लिए और आवश्यक हो जाता है। सभी साधकों की यही शिकायत है कि जैसे ही उन्हें अन्तर्मौन की स्थिति प्राप्त होती है, वे सो जाते हैं, जिसका ज्ञान उन्हें जागने पर ही होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वे ताजगी का अनुभव करते हैं, परन्तु उनका आध्यात्मिक विकास रुक जाता है। सच्चे साधकों का विकास भी इसीलिए रुक जाता है कि वे नींद में पहुँच जाते हैं। गृहस्थों को कई कार्य करने पड़ते हैं, हमेशा व्यस्त रहना पड़ता है, उन्हें निरन्तर तनाव में रहना पड़ता है। अत: थोड़ी-सी एकाग्रता के बाद ही स्वाभाविक रूप से निद्रा आ जाती है।

परन्तु एक कठिनाई यह है कि यदि चेतना तन्द्रा में न रहे तो अन्तर्मौन की प्राप्ति कठिन है। कुछ अंश में मस्तिष्क को निद्रित अवस्था में रखते हुए इस बात के प्रति चेतना बनाए रखना है कि नींद न आए। इसलिए जो लोग चाहते हैं कि ध्यान के समय नींद न आये, तो उनके लिए आवश्यक है कि वे कुछ बातों का ध्यान रखें।

सर्वप्रथम आपको अनासक्ति का अभ्यास करना चाहिए। सतत अभ्यास के द्वारा अविरल विचारों का त्याग करना चाहिए। एक उपाय यह है। दूसरी विधि यह है कि जब आपको नींद का आभास हो, आप तुरन्त कुम्भक के साथ प्राणायाम का अभ्यास प्रारम्भ कर दें। अनुपात 1:4:2 का रहे। इसकी तीन या चार आवृत्तियाँ करें। यह उन व्यक्तियों के लिए है जिन्हें लगातार विचारों तथा अधिक तनाव के कारण अवसाद होता है। यदि आप अवसाद की मात्रा को कम कर लेंगे तो अपने ध्यान की वस्तु को स्पष्ट देख सकेंगे।

कुछ व्यक्ति पद्मासन में बैठकर एक ही बार में कई घंटे ध्यान करते हैं और उन्हें ऐसा अनुभव होता है, मानो उन्होंने समाधि प्राप्त कर ली हो। परन्तु यह समाधि की अवस्था नहीं है। यह प्रतिदिन के तनाव का उत्तरप्रभाव है। लम्बी

अवधि के इस ध्यान द्वारा आप मानसिक अवसाद दूर कर सकते हैं, परन्तु अध्यात्म मार्ग में आगे नहीं बढ़ सकते। सर्वांगासन या शीर्षासन जैसे कुछ आसनों का भी अभ्यास कर सकते हैं। आसनों के द्वारा नींद के कारणों को रोका जा सकता है। बिस्तर से उठिये, हाथ-मुँह धोकर आसन में बैठिये। तब भ्रमपूर्ण अवस्था नहीं रह जाएगी।

कुछ साधक ध्यान के लिए बैठते हैं, परन्तु यह नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं। कुछ व्यक्तियों ने कुण्डलिनी के बारे में सुन रखा होता है। उसे जागृत करने के लिए विशेष दबाब डालते हैं। परन्तु इससे तनाव ही उत्पन्न होगा। इसलिए ध्यान के समय नींद दूर करने के लिए रात को हल्का भोजन, योगासन, प्राणायाम आपके लिए बहुत सहायक है।

नींद को रोकने की अन्य यौगिक विधियाँ भी हैं। उनमें से एक है उज्जायी, गहरी श्वास-क्रिया द्वारा शरीर संस्थान का कार्बन डायऑक्साइड बाहर निकालना, जैसा कि एक स्वस्थ मनुष्य के सोते समय होता है।

जब आप आँखें बन्द कर ध्यान करते हैं और दृश्य सामने आते हैं तब सजगता अस्थायी रूप से निश्चल अवस्था में आ जाती है। पुनः दृश्य, फिर निलम्बन एवं पुन: दृश्य उत्पन्न होते हैं। यह मानसिक स्तर पर संस्कारों के उभरने के कारण होता है।

आप अनेक अवांछित बातों को भूल जाते हैं। उन्हें अस्वीकार कर देते हैं। अत: वे पीछे चली जाती हैं। कुछ समय बाद इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। आप अपनी समस्याओं को युक्तिसंगत विधि से या तो दूर कर लें या उनका उदात्तीकरण करते हुए उनके प्रति अनासक्ति का भाव रखें। यदि आप किसी व्यक्ति को पसन्द नहीं करते तो इसका यह अर्थ नहीं कि वह आपके मन से निकल गया है। अपितु उसने आपके मन में अधिक स्थायी रूप से स्थान बना लिया है। 'ध्यान' में उसकी स्मृति आपको परेशान करेगी। अत: जो भी कठिनाइयाँ हों, हमें अनासक्त भाव से उनकी छाप को युक्तिपूर्वक अथवा उदात्तीकरण के द्वारा उनको समाप्त करना चाहिए। प्रारम्भिक ध्यानावस्था में नींद और दृश्यों का आना यह दूसरा कारण है। इस समस्या के हल का एकमात्र उपाय यही है कि योग की विधि, आसन, प्राणायाम, अन्तर्मौन, योगनिद्रा और ध्यान द्वारा प्रतिदिन के तनावों को दूर किया जाए। नि:सन्देह नींद तथा दृश्यों के रूप में सूक्ष्म अभिव्यक्तियाँ अच्छी हैं। परन्तु जिज्ञासा चूँकि उच्च अवस्था की है, इसलिए हमें हर तरह के आराम से दूर रहना है।

अन्तर्मौन का निम्नलिखित अभ्यास वास्तव में आराम से दूर और 'ध्यान' की वास्तविक अवस्था की ओर ले जाने वाला प्रथम चरण है।

एक आरम्भिक अभ्यासी को यह क्रिया आवश्यकता से अधिक कभी नहीं करनी चाहिए, क्योंकि यह ध्यान विश्रान्ति की क्रिया से बिल्कुल भिन्न है। इस अभ्यास द्वारा आप विश्रान्ति की आरम्भिक प्रक्रिया पूर्ण कर ध्यान के प्रथम चरण में प्रवेश करते हैं। इस स्तर के ध्यान में निपुणता प्राप्त करने के पश्चात् ही आपको इससे उच्च और गहरे ध्यान की ओर अग्रसर होना चाहिए।

तृतीय चरण – चिदाकाश सजगता

पहले आँखें बन्द कर लें।

चिदाकाश पर सजगता ले जायें। ललाट के पीछे जो आन्तरिक आकाश आप देखते हैं, वहाँ की प्रत्येक वस्तु को ध्यान से देखते जायें।

आपको विभिन्न रंग के प्रकाश, तारे, ज्योति नक्षत्रीय स्वरूप आदि के दर्शन होंगे। द्रष्टा के रूप में इन्हें देखते जायें।

चिदाकाश या सूक्ष्म आकाश आपके सम्मुख है।

यदि आपको ध्यान का गहन अनुभव है तो आप अपने अर्धचेतन मन को वहाँ देख सकते हैं। आने वाले सभी विचारों को एक तरफ रखें तथा उनके प्रति सजगता को बनाए रखें।

इन्हें एक ओर हटाने में आप व्यस्त रहेंगे। दूसरी तरफ इस बात को देखने में सजग रहें कि चिदाकाश में क्या दिखाई दे रहा है।

यदि आप ऐसा कर सकेंगे तो आप ध्यान की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

तत्पश्चात् आप सूक्ष्म अवस्था के दृश्य देखते जाएँगे।

आप दरवाजे पर खड़े हैं। आप आते हुए विचारों को देखते जा रहे हैं। आपके आन्तरिक कक्ष के सभी दरवाजे खुले हैं, जिनसे विचार प्रवेश कर सकते हैं।

आप एक केन्द्र में स्थित हो जायें, जहाँ से आपको चारों ओर देखना है। विचार किस ओर से आ रहे हैं?

जब आप किसी विशेष विचार को झाँकते हुए पाते हैं, तो इसे रोक दें।

कुछ समय पश्चात् अपने इष्ट पर ध्यान करें।

यदि इस साधना में आपको अंशमात्र सफलता भी प्राप्त हो जाती है तो आपको इष्ट पर ध्यान करने की आवश्यकता नहीं।

इष्ट का स्वरूप स्वत: आपके अन्तर में प्रकट होगा।

इस क्रिया को यदि आप पूरी ईमानदारी से करेंगे तो आपको निर्विचार अवस्था की प्राप्ति होगी।

चिदाकाश पर निरन्तर सजगता बनाए रखें। उस पर आने वाले सूक्ष्म रूपों को भी देखते जाएँ।

यदि आप कुछ समय तक उन्हें देखते रहें तो आपको समझ में आयेगा कि इन सूक्ष्म रूपों से हमारा क्या अभिप्राय है।

चिदाकाश में अनेक अदृश्य तरंगों का अनुभव आपको होगा। क्रमश: चिदाकाश के प्रति अधिक सजग बनने का प्रयास करें। चेतना को इतना गहरा बनायें कि आपको क्षण भर के लिए भी चिदाकाश से दृष्टि हटाने की इच्छा न हो।

सूक्ष्म स्तर पर जो भी अनुभव हो रहा हो, उसका विश्लेषण नहीं करना चाहिए।

इस तरह जब आप शून्य की स्थिति का अवलोकन करेंगे तब आपको ऐसी सूक्ष्म बातों का अनुभव होगा जो अभी तक दृष्टि से परे थीं।

मन की एक ऐसी स्थिति आएगी जब सूक्ष्म प्रदेश की सभी बातें आपके सम्मुख रहेंगीं और सम्पूर्ण गुह्य ज्ञान का बोध होगा।

जब चिदाकाश पर सूक्ष्म आकृतियाँ दिखाई देने लगें हैं, तभी इष्ट देवता का शान्तिपूर्वक ध्यान प्रारम्भ करें।

आप पूरी प्रक्रिया की पुनरावृत्ति कर सकते हैं।

चिदाकाश विद्या

योग के अभ्यासों में ध्यान की विभिन्न विधियों में एक शक्तिशाली एवं आत्मलीन करने वाली विधि चिदाकाश विद्या है। हमें चिदाकाश विद्या का उल्लेख वेदों में मिलता है। प्राचीन शास्त्रों में सत्य की विस्तार से चर्चा की गई है, परन्तु इसकी प्राप्ति की विधि, इसे सीखने की क्रिया हमेशा 'गुरु-शिष्य' परम्परा के लिए छोड़ दी गयी है।

प्रथम परिचय

चिदाकाश विद्या आत्मज्ञान के लिए ध्यान की एक गुह्य विधि है। विद्या का अर्थ यहाँ ध्यान है। चिदाकाश का अर्थ है–मन की अचेतन सत्ता और आत्मा। जब आप आँखें बन्द करते हैं तो अन्दर में अनन्त अंधकार दिखाई देता है। बाइबिल में इसे 'आत्मा की अंधेरी रात' कहा गया है। यह सूक्ष्म, अलक्षित आत्मसत्ता, जो अंधकार के एकल एवं सतत् सजगता के रूप में अभिव्यक्त होती है, चिदाकाश का ही रूप है।

अंधकार (अज्ञान) आत्मा के प्रकाश को ढक लेता है। शिष्य को इस अन्धकार में घुसना है और उसमें से गुजरना है। जब तक उसे 'अनन्त प्रकाश' के दर्शन नहीं होते, गुरु के वचन केवल निर्देशक का कार्य करते हैं और शिष्य को स्वयं इस अन्धकार से अपने गुरु वचनों के प्रति निष्ठा और भक्ति रखते हुए निकलना है।

जब आप बन्द नेत्रों से आरामदायक आसन में चिदाकाश विद्या के अभ्यास के लिए बैठते हैं तब आप सर्वप्रथम अन्धकार में प्रवेश करते हैं। इसलिए उपनिषदों में कहा गया है कि "जो अज्ञान में उपासना करते हैं वे अन्धकार (नींद) में प्रवेश करते हैं, पर जो ध्यान की उपासना करते हैं वे भी बंद आँखों

से उसी अंधकार में प्रविष्ट होते हैं।" पर यह चिरस्थायी अंधकार नहीं है। यह लुप्त हो जाता है। यह परिवर्तित होता है।

प्रतीक की अभिव्यक्ति

यदि आप 'चिदाकाश विद्या' के अभ्यास का प्रयास करेंगे तो आपको कोहरा, धुआँ, अन्धकार, सूर्य, चन्द्र, तारा, वायु, अग्नि, चिंगारी, उड़ती चिड़ियाँ, स्फटिक, छोटे-छोटे कणादि, अनेक वस्तुएँ क्रमशः दृष्टिगोचर होंगी। अचेतन और अर्द्धचेतन मन की गहराई में छिपे हुए संस्कारों के अनुसार आपको वस्तुएँ दिखाई देंगीं। अतः साधारणतः साधक चिदाकाश में उपर्युक्त चिह्नों को अपने परिश्रम से या निर्देशक के सुझाव पर देखने में सफल होता है। जब निर्देशक द्वारा बताई बातें कार्यान्वित होती हैं तब सब वस्तुएँ कल्पनात्मक रूप से दिखाई देती हैं, परन्तु गहरे ध्यान के बाद एक ऐसी अवस्था आती है जब साधक इन वस्तुओं को वस्तुतः देखता है। ये सभी प्रतीक मन के निम्न स्तर पर सघन रूप में रहते हैं और विभिन्न प्रकार से अपने को प्रकट करते हैं।

पूर्ण श्रद्धा एवं विश्वास के साथ यदि इस अभ्यास को आप करते रहेंगे तो एक दिन आप चिदाकाश को प्रदीप्त हुआ पायेंगे और एक आनन्ददायक दिन को आप एक प्रकाशपुंज के रूप में 'आत्मा के प्रकाश' का दर्शन करेंगे। वह अवस्था चिरस्थायी आनन्द और तृप्ति की, कल्पनातीत, प्रसन्नता, शान्ति और शक्ति की है।

चिदाकाश विद्या के अभ्यास के लिए आरम्भ से ही आपके लिए दो बातें आवश्यक हैं। सर्वप्रथम आपमें निर्देशक या गुरु के प्रति पूर्ण श्रद्धा एवं सर्मपण का भाव होना चाहिए। यह आवश्यक है, परन्तु बहुत कठिन शर्त है। द्वितीय , ध्यान के एक आसन में निपुणता भी आवश्यक है। इसके आध्यात्मिक मूल्य के अतिरिक्त चिदाकाश विद्या मनोवैज्ञानिक उपचार भी है। यह ईश्वर दर्शन की कुन्जी भी है। आधुनिक पाठकों के लिए इसका मनोवैज्ञानिक पक्ष अधिक आकर्षक, मनोरंजक एवं प्रेरणादायक होगा, क्योंकि रहस्यात्मक पक्ष आपकी इच्छा के विरूद्ध स्वयं को अच्छा बताता है और भगवान् की याद दिलाता है। भले ही आप इस जीवन में ईश्वर-दर्शन की इच्छा न रखते हों, फिर भी इस विद्या का अभ्यास आप करेंगे तो कुछ ही समय के बाद आपको अच्छे परिणाम की प्राप्ति होगी। आप अमूल्य ज्ञान अर्जन करेंगे।

आप पूछ सकते हैं कि ध्यान के समय हम आसन-परिवर्तन कर सकते हैं क्या। हाँ, आप आसन बदल सकते हैं, इसके लिए कोई बाध्यता नहीं है, परन्तु आसन बदलने पर आपकी भीतर गई हुई, ऊपर की ओर अग्रसर चेतना पुन: भौतिक स्तर पर आ जाएगी, और अन्तर्मुखता के लिए आपको नये सिरे से प्रयास करना पड़ेगा। आसन-परिवर्तन की याद दिलाता हुआ पैरों का दर्द चेतना की आन्तरिक यात्रा में बाधक है। यदि आपने आसन में पूर्णता प्राप्त नहीं की है तो आप एक ही आसन में अधिक देर तक नहीं बैठ सकते। एक क्षण के लिए भी उस आसन से हटने का अर्थ है अभ्यास को नये सिरे से प्रारम्भ करना। अत: प्रारम्भिक साधकों को चाहिए कि सर्वप्रथम आसनों में पूर्णता प्राप्त कर लें।

प्राथमिकता के आधार पर ध्यान के लिए उपयुक्त आसनों का क्रम इस प्रकार है–सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन, पद्मासन, स्वस्तिकासन, सुखासन। इनमें से आप किसी एक आसन का चुनाव कर लें। जब भी समय मिले आप इसका अभ्यास करते रहें ताकि ध्यान के समय उत्पन्न होने वाले दर्द पर आप विजय प्राप्त कर सकें।

आसन में पूर्णता प्राप्ति के लिए मेरुदण्ड तथा हड्डियों का लचीलापन विशेष रूप से आवश्यक है। हड्डियों, जोड़ों तथा अस्थिबन्धों का कड़ापन न मांसपेशीय स्वास्थ्य के लिए उचित है और न ध्यान के लिए अच्छा है। योगासन और प्राणायाम के नियमित अभ्यास के द्वारा यह कमजोरी स्वत: दूर हो जायेगी।

साधना का समय

चिदाकाश विद्या के अभ्यास के लिए ब्रह्ममुहूर्त और स्नान करने के पश्चात् रात्रि का समय सर्वोत्तम है।

स्नान का महत्त्व

जल से स्नान करना बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसका मन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। स्नान के बाद मन ताजगी का अनुभव करता है। अधिक समय की नींद भी स्नान के समान मन को ताजा नहीं कर सकती। नींद या भोजन भी आपको वैसी स्नायविक अथवा भावनात्मक शक्ति और ताजगी की अनुभूति प्रदान नहीं कर सकते हैं जितना कि स्नान कुछ क्षणों में दे देता है। स्नान से शरीर एवं मन

की थकान पूर्णत: दूर हो जाती है तथा स्नान से जो मानसिक स्थिति प्राप्त होती है, वह ध्यान के लिए हितकर है।

आध्यात्मिक प्रतीक

चिदाकाश क्या है? इस शब्द के अर्थ को सही ढंग से समझाना होगा। इसके पहले कि आप इसका अभ्यास आरम्भ करें, इसके वास्तविक अर्थ से परिचित हो लेना चाहिए। चिदाकाश दो शब्दों के मेल से बना है–चित् और आकाश। चित् का अर्थ यहाँ चेतना, सजगता से है। हमारी चेतना काल और आकाश तक जाती है और यह हमारी व्यक्तिपरक समझ का एक भाग है। चिदाकाश आन्तरिक व्योम को दर्शाता है, सजगता जो आन्तरिक आकाश में विचरण करती है, अर्थात् वह चेतना जो सर्वव्यापी है।

पश्चिमी देशों के मनोवैज्ञानिकों ने मानव मन को टटोलने का प्रयास किया है और उन्होंने तीन स्तरों की पहचान की है–चेतन, अवचेतन तथा अचेतन। भारतीय दार्शनिकों ने स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों की चर्चा की है, जहाँ चेतना का निवास है। साथ ही चेतना की जाग्रतावस्था, स्वप्नावस्था और निद्रावस्था का भी वर्णन है। वे चतुर्थ अवस्था को ज्ञानातीत कहते हैं, परन्तु यह सामान्य वर्गीकरण है। प्राचीन सन्तों ने अनुभव के द्वारा यह ज्ञान प्राप्त किया था कि चेतना या चित् चौदह स्तरों पर कार्य करता है। आपकी चेतना इन्द्रिय स्तर पर है, इसलिए बहिर्मुखी है। निद्रावस्था में भी आपकी चेतना बनी रहती है, परन्तु आप उसके प्रति सजग केवल जागने पर ही होते हैं। यही अवस्था उस समय होती है, जब आप स्वप्न देखते हैं। जैसे-जैसे चित् या सजगता अधिक सूक्ष्म होती जाती है, वह शुद्ध चेतना की स्थिति में पहुँचने तक सूक्ष्म से सूक्ष्मतम प्रदेश में चली जाती है।

चिदाकाश विद्या चेतना को पूर्णत: शुद्ध बनाने का अभ्यास है। इसी कारण जब आप चेतना को स्थूल जगत् से खींचकर भीतर की ओर ले जाते हैं तब आपको चिह्न तथा दृश्य दिखाई देते हैं। यह सब आन्तरिक प्रक्रियाएँ हैं जिनके द्वारा कारण शरीर अथवा अचेतन में एकत्र तथा संचित संस्कार धीरे-धीरे बाहर निकलते हैं। इन अनुभवों के सूक्ष्म होते हुए भी इनमें कुछ स्थूल तत्त्व होते हैं। इस प्रकार आप देखेंगे कि चित् चेतना है। चेतना के सीमित अनुभव क्षेत्र से अधिक विस्तृत, सूक्ष्म और अधिक शुद्ध क्षेत्र तक का विस्तार ही चिदाकाश विद्या का उद्देश्य है।

हमारे अन्दर अनन्त आकाश है। जब आप नेत्र बन्द करते हैं तब इस संसार में अपने अनन्त अस्तित्व के कुछ अंश को चेतना के रूप में मापने में समर्थ होते हैं। बन्द आँखों से आपकी दृष्टि अधिक गहराई तक देख सकती है। इन्द्रियाँ अधिक सूक्ष्म ढंग से कार्य करती हैं। इस प्रकार चिदाकाश रहस्यवाद का साकार रूप है। अपनी कल्पनाशक्ति, विचारशक्ति, इच्छाशक्ति के द्वारा वह विश्व के किसी भी क्षेत्र तक पहुँच सकती है। जब आप अन्तर्तम में निवास करते हैं तब चिदाकाश के स्तर पर ही आप अपने अस्तित्व के प्रति सजग रहते हैं, यद्यपि आप अपने भौतिक अस्तित्व को, अर्थात् अपने शरीर और अंगों को देखने में समर्थ नहीं होते। आत्मा एवं उसके कार्यों के ये सूक्ष्म और सजीव अनुभव चिदाकाश की पृष्ठभूमि पर उभरते हैं। चिदाकाश का अनन्त, एक-आयामी, निस्सीम क्षेत्र आपकी चेतना को प्रकट करने का एक मंच है।

यौगिक शरीर विज्ञान

चित् क्या है–यह समझने का प्रयत्न करने के पूर्व यौगिक शरीर विज्ञान का कुछ ज्ञान होना चाहिए। यौगिक शरीर विज्ञान के अनुसार कहा जाता है कि मनुष्य विभिन्न प्रकार के बीस तत्त्वों से बना है–पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच प्राण, अन्त:करण के चार घटक और चेतना। अन्त:करण, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार के समुच्चय का नाम है। इस प्रकार हम पाते हैं कि हमारे प्राचीन ऋषि मनुष्य के अचेतन और अर्धचेतन क्षेत्र से पूर्णत: अवगत थे।

चिदाकाश का स्थान

चित् एक-आयामी चेतना या हमारे आन्तरिक व्यक्तित्व की सजगता है। सभी प्रकार के ज्ञान का यह एक विशाल खजाना है। वह भूत, वर्तमान एवं भविष्य का विस्तृत लेखा रखता है। चित् मनुष्य के चेतन और अचेतन दोनों अस्तित्व को छिपाए हुए आन्तरिक चेतना का एक असीम गगन मण्डल है। स्थूल रूप से चित् की स्थिति भ्रू-मध्य के ऊपर ललाट पर दर्शायी जा सकती है। एक ही चेतना ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा उस समय कार्य करती है जब हम बहिर्मुखी रहते हैं, और वही चेतना तब अन्तर्मुखी हो जाती है जब हम भौतिक और मानसिक प्रयत्नों के द्वारा बाह्य ज्ञानेन्द्रियों के द्वार बन्द कर देते हैं। चित् मानसिक और बौद्धिक उपकरणों द्वारा कार्य करता हुआ ज्ञात होता है, परन्तु

यह उनकी पहुँच के बाहर है। इसका अनुभव केवल उस समय होता है जब मन और बुद्धि, दोनों इन्द्रियों के साथ अपने स्वाभाविक कार्य बन्द कर देते हैं। चित् सभी मानवीय क्रियाओं का मूल कारण है। इसलिए उसके विषय में पूर्ण ज्ञान रखना आवश्यक है। चिदाकाश की स्थिति निर्धारित करने के लिए ललाट की अस्थिओं के भीतर सिर की गुहा में किसी स्थान पर अपनी चेतना को बनाए रखें। दृढ़ता के साथ उस बिन्दु पर बने रहें जहाँ पर नेत्र बन्द करते समय आपकी चेतना स्थित थी। बहुधा, इसका स्थान ललाट के पीछे की गुहा को माना गया है। अत: चिदाकाश पर ध्यान करते समय ललाट के पीछे का स्थान उस भौतिक आधार का कार्य करेगा, जिस पर आपको अपनी चेतना को स्थिर करना है।

चिदाकाश धारणा का अभ्यास

चिदाकाश धारणा का अभ्यास निम्नलिखित पाँच चरणों में विभाजित है–

प्रथम चरण

प्रथम चरण उस अन्धकार के अवलोकन का है, जो आँखें बंद करने पर चिदाकाश को आच्छादित करता है। द्रष्टा की तरह इसे देखते जायें, मानो आपकी मानसिक आँखों के सम्मुख किसी नाटक का प्रदर्शन हो रहा है। द्वितीय चरण में पहुँचने तक यह अभ्यास जारी रखें।

द्वितीय चरण

द्वितीय चरण में आप अन्धकार की जगह विभिन्न रंग–लाल, पीला, सुनहरा, नीला आदि देखेंगे। यह भी सम्भव है कि अन्धकार सुनहरे रंग में बदल जाय। कुछ समय तक आपका ध्यान रंगों की इसी अन्त:क्रीड़ा पर केन्द्रित रहना चाहिए। आपको न इस पर कुछ सोचना, न समझना और न ही विश्लेषण करना है। कुछ काल तक इसी क्रिया में लगे रहें, फिर आगे बढ़ें।

तृतीय चरण

तृतीय चरण में अपनी चेतना को अन्धकार के पर्दे अथवा रंगों के खेल की गहराई में उतरने दें। उसे और गहन करें। आपकी एकाग्रता तीव्र होती जाएगी। मानसिक दूरसंवेदन का आधार भी यहीं है। इसलिए आपको सावधान रहना

है। अपनी एकाग्रता को तीव्र करें। साथ ही 'आत्मा की अन्धेरी रात्रि' में चेतना की उड़ान के प्रति द्रष्टा भाव बनाए रखें। ज्यों-ज्यों अभ्यास गहरा होगा, आपको अनोखे अनुभव प्राप्त होंगे। कुछ समय तक यह अभ्यास जारी रखें।

चतुर्थ चरण

चतुर्थ चरण में चिदाकाश का पूर्ण निरीक्षण करना है। ऊपर, नीचे, आगे, पीछे, सभी ओर चेतना व्यापक हो जाती है। यह उस व्यक्ति की भाँति व्यवहार करती है, जो अपने चारों ओर किसी वस्तु की खोज करता है और इस बात से अवगत रहता है कि वह क्या कर रहा है। इसलिए आपको कुछ समय तक चिदाकाश का निरीक्षण अवश्य करना चाहिए और साथ में, सावधानीपूर्वक सजग भी रहना है कि आप ऐसा कर रहे हैं।

पंचम चरण

पंचम चरण में स्वयं को चिदाकाश के मध्य में रखना है। आन्तरिक आकाश मण्डल या चिदाकाश को देखें और उसके मध्य स्वयं को रखें। अभ्यास के द्वारा आपकी चेतना सूक्ष्म होकर अधिक गहराई में पहुँचेगी। इसके बाद कुछ समय के लिए चिदाकाश पर अपने इष्टदेव का ध्यान करें और फिर अभ्यास समाप्त कर दें।

सारांश

चिदाकाश धारणा के अभ्यास के द्वारा आपको चित् के अस्तित्व का बहुत अच्छा अनुभव होगा। इसके उपचारात्मक महत्त्व और शारीरिक एवं मानसिक रोगों से बचाव के लिए आपको अपने व्यक्तित्व की इस गहराई तक पहुँचना होगा। अपनी कामना की पूर्ति के लिए आपको चित् तक जाना होगा।

इस विज्ञान के प्रयोगों एवं सूक्ष्म अनुभवों को शब्दों में व्यक्त करना बहुत कठिन है। सम्भवतः यहाँ हमने सभी सैद्धान्तिक बातों के वर्णन का प्रयास किया है। इस क्षेत्र में आपका ज्ञान तभी पूर्ण होगा जब आप प्रतिदिन ध्यान के लिए बैठेंगे और कुछ महीनों के अभ्यास के पश्चात् इसे समझने लगेंगे और इस सूक्ष्म वस्तु की उपस्थिति का अनुभव प्राप्त करने लगेंगे।

अतीन्द्रिय जगत्

एक अन्वेषण

अलौकिक रहस्य के ज्ञाता, अध्यात्मवादी, साधु, सन्तों, सिद्धों और शास्त्रों के पास इस बात का प्रमाण है कि हमारे इस जगत् के अतिरिक्त भी अन्य सृष्टियाँ हैं। हजारों व्यक्तियों के दैनिक जीवन के अलौकिक अनुभव भी इस बात का विश्वास दिलाते हैं कि भौतिक आँखों की ग्रहण शक्ति से परे भी कुछ रहस्यमय क्षेत्र हैं।

इसके अतिरिक्त प्रतिदिन हम अनेक व्यक्तियों को मृत्यु द्वार से होते हुए दूसरे लोक में जाते देखते हैं। क्या हमें इससे अधिक और प्रमाण की आवश्यकता है? यदि है तो शान्तिपूर्वक बैठिये। एक क्षण के लिए सोचिये कि दूसरे पल आपकी मृत्यु होने वाली है। डरिये नहीं। अपने विचारों को समीप से देखिये। यदि आप मर जायेंगे तो क्या होगा? आपको कैसा अनुभव होगा? आप अभी जीवित हैं, पूर्ण चेतना और अच्छी बुद्धि तथा ज्ञान से पूर्ण हैं। क्या मर कर आप कुछ भी नहीं रह जायेंगे? नहीं, आप यह कभी अनुभव नहीं करेंगे कि आप शरीर की मृत्यु के बाद नहीं रहेंगे। आपकी चेतना कहीं और रहेगी। यही अतीन्द्रिय जगत् है, जो अदृश्य और अगोचर है।

इसी कारण हमारा यह विश्वास है कि रहने के लिए केवल यही जगत् नहीं है। कुछ अन्य जगत् भी हैं, जहाँ हम अपने सूक्ष्म शरीर में भ्रमण और विचरण करते हैं। जो सूक्ष्म तत्त्वों से बने हैं। हमारा यह दृष्टिगोचर जगत् पाँच स्थूल तत्त्वों से निर्मित है। ये तत्त्व हैं–पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश।

अतीन्द्रिय सूक्ष्म लोक आकाशीय तत्त्वों से बने हैं, जिसमें अति परिष्कृत सूक्ष्म कम्पन हैं, जिन्हें किसी भी विधि से हमारी वर्तमान इन्द्रियों द्वारा पकड़ा

नहीं जा सकता, जिनका प्रयोग हम सूक्ष्म लोक के स्पन्दन की तुलना में स्थूल स्पन्दनों को ग्रहण करने में करते हैं।

मनुष्य की बुद्धि और शक्ति उस दीपक के तुल्य है जो अन्धकार को दूर करती है। यदि इस शक्ति का उपयोग आप ललित कलाओं के अभ्यास एवं अध्ययन में करेंगे तो आप कलाकार कहलायेंगे। यदि आप संगीत में लगायेंगे तो आप संगीतज्ञ कहलायेंगे। यदि आप वैज्ञानिक शोध कार्य में लगायें तो एक वैज्ञानिक के नाम से जाने जाएँगे। इसी शक्ति का उपयोग जब अदृश्य सत्ता और प्रकृति के नियमों की खोज के लिए किया जाता है तब वह योग कहलाता है। योग वह दर्शनशास्त्र है जहाँ शरीर एवं मन की सीमाओं का अतिक्रमण करने की विधि सिखाई जाती है। योग के अध्ययन और अभ्यास के लिए जो व्यक्ति अपनी शक्ति का उपयोग करते हैं, वे निम्न स्तर से अपनी ऊर्जा का अनुप्रेषण करके अपनी दृष्टि का सुधार और विस्तार करते हैं।

जब हम उन इन्द्रिय सुखों में व्यय होने वाली अपनी शक्ति को रोकते हैं जिनका कोई स्थायी मूल्य नहीं है तब हम अपने को अधिक मजबूत, ऊर्जावान् और शक्तिशाली अनुभव करते हैं। जब व्यक्ति किसी वस्तु पर ध्यान करता है या अदृश्य गुप्त सत्य को ज्ञात करने का प्रयत्न करता है तो इस संचित शक्ति के द्वारा उसे सफलता हाथ लगती है। उसकी दृष्टि एवं ग्रहण शक्ति इतनी सूक्ष्म हो जाती है कि वह पदार्थ के मोटे आवरण के भीतर देख सकता है।

अतीन्द्रिय जगत् जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं बहुत पास है, लेकिन पास होते हुए भी इस मायने में बहुत दूर है कि यह आम आदमी की पहुँच के बाहर है। फिर भी जो व्यक्ति कठिन परिश्रम के लिए तैयार हैं, वे यहाँ पहुँच सकते हैं। इसके द्वारा प्राप्त ज्ञान का सदुपयोग स्वयं के हित के लिए नहीं, वरन् मानव जाति की उन्नति के लिए किया जाना चाहिए।

अभ्यास के लिए दृढ़ता एवं व्यक्तिगत प्रयत्न प्राथमिक आवश्यकतायें है। परन्तु जब व्यक्ति को इस अलौकिक ज्ञान की प्राप्ति होती है तब उसे सांसारिक लोगों की तरह इच्छाएँ नहीं रखनी चाहिए। उसे चेतना की उच्चतम स्थिति में रहना चाहिए। कम-से-कम उसे उस समय तक प्रयत्नशील रहना चाहिए जब तक अनुमति पत्र की प्राप्ति न हो जाय। उसे भोजन, फैशन, यश-लिप्सा, राजनीति, शक्ति, धन आदि का ध्यान नहीं रखना चाहिए। ऐसा करने में हानि नहीं है, परन्तु इसमें अपव्यय होने वाली शक्ति को संचय कर उसे योगाभ्यास में लगाना चाहिए। साधकों या आध्यात्मिक खोज करने वाले विद्यार्थियों को एकनिष्ठ स्वतंत्र विचार

रखना चाहिए और दूसरे के विपरीत प्रभावों से अपने को बचाना चाहिए, जो आपके द्वारा प्राप्त परिणामों पर खराब प्रभाव डाल सकते हैं।

यदि आप सांसारिकता के प्रति अनासक्ति का भाव रखें तो आपके लिए उच्च चेतना का मार्ग प्रशस्त होता जाएगा। जब तक आप संसार की वस्तुओं के प्रति आसक्ति की डोर नहीं काटेंगे तब तक आप अपना सम्बन्ध आधिभौतिक जगत् से नहीं जोड़ सकते। यही कारण है कि शास्त्रों एवं सन्तों ने वैराग्य, अर्थात् अनासक्ति की सलाह दी है। इसकी प्राप्ति तभी हो सकती है जब हम अपनी भावनाओं एवं विचारों के निरन्तर प्रवाह को सभी निरर्थक बातों से, अर्थात् कम्प्यूटर चिप से लेकर जेट हवाई जहाज, अन्तरिक्ष-यान आदि की ओर जाने से रोकें। यदि हम ऐसा करें तो धीरे-धीरे नाद की ध्वनि सुनने, अदृश्य को देखने, स्वाद-रहित वस्तु का स्वाद लेने एवं गन्धहीन वस्तु को भी सूंघने आदि की शक्ति का विकास करने में समर्थ होंगे।

इसके पीछे यह रहस्य है कि इस पृथ्वी के परे भी एक विशाल जगत्, जीवन का विशाल परिदृश्य, एक विशाल दिव्य ज्ञान का संग्रह है। हम उस संसार में रहते हुए भी उससे अनभिज्ञ हैं। हम इनके प्रति जागरूक शायद इसलिए नहीं हैं कि हमारी सम्पूर्ण शक्ति संसार की केवल सारहीन वस्तुओं की प्राप्ति की ओर लगी है। हम रोटी, कपड़े, टेलीविजन, शिक्षा, पद आदि अनेक वस्तुओं के लिए जीते हैं। अलौकिक या दिव्य ज्ञान की प्राप्ति के लिए श्रम करने की किसे चिन्ता है, परन्तु जो व्यक्ति इसकी प्राप्ति के लिए तनिक भी प्रयास करते हैं उन्हें प्रचुर मात्रा में ज्ञान की प्राप्ति होती है। मानव इतिहास में इन व्यक्तियों को सन्त, महात्मा, योगी, मनीषी, सिद्ध आदि कहा जाता है। गुणज्ञ अपनी कला को व्यवस्थित कर अपने उत्तराधिकारी को सौंपने में सावधान रहते हैं। यही कारण है कि अनेक अविरोधी परिस्थितियों के बाद भी उनका ज्ञान सुरक्षित है।

यदि आप अतीन्द्रिय जगत् के विषय में कुछ जानना चाहते हैं तो सर्वप्रथम कुछ अभ्यासों को नियमित रूप से करने के लिए अपने को तैयार करें। प्रात: दो बजे उठें। इस प्रारम्भिक विधि का अभ्यास करें जो नवीन साधकों के लिए आवश्यक है, परन्तु यह अभ्यास अन्तत: आपको अतीन्द्रिय जगत् की ओर ले जायेगा।

खोज की विधि

तैयारी–इस कार्य के लिए आपके पास एक स्वतंत्र कक्ष होना चाहिए। यदि वहाँ के वातावरण को बाहर के प्रभावों से मुक्त रखा जाये तो अच्छा रहेगा। एक

पुराना लटकता हुआ कैलेन्डर लें। पौन इंच व्यास का एक काला गोलाकार चिह्न कैलेन्डर के पीछे बनायें। एक मोमबत्ती जलायें। कुर्सी पर या भूमि पर दीवार के समीप अपने बैठने की व्यवस्था करें। कैलेन्डर को दीवार पर इतनी ऊँचाई पर लटकायें कि चिह्न आपकी आँखों की सतह पर रहे। अपनी कुर्सी या आसन के बायीं ओर एक छोटा टेबल रखें। जब अभ्यास करें तब एक मोमबत्ती जला कर उसे टेबल पर रखें।

अभ्यास

प्रतिदिन प्रात: दो बजे अभ्यास के लिए बैठें।
काले बिन्दु को बिना पलक झपकाये देखते जायें।
पूर्ण एकाग्रता से देखें। दृष्टि एकाग्र एवं स्थिर हो।
प्रारम्भ में यदि आपकी आँखें थक जाती हैं या उनमें जल भर आता है तो आँखें बन्द कर दस सैकण्ड आराम कर लें।
इसके पश्चात् पुन: बिन्दु की ओर टकटकी लगाकर देखना प्रारम्भ करें।
जब आप बिन्दु की ओर देखने का प्रयास कर रहे हों, उस समय बिन्दु के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु पर दृष्टि न डालें।
जैसे ही देखने की क्रिया में पूर्ण एकाग्रता आ जाएगी वैसे ही काले बिन्दु के चारों ओर श्वेत प्रकाश घिर जाएगा। यह प्रकाश घूमेगा और आपको इसे देखने की इच्छा होगी परन्तु आप ऐसा करने से बचें। इसी काले बिन्दु को देखते जायें जब तक आँखों के सामने कुछ भी दिखाई नहीं दे और आपका मन शून्य हो जाए।
इस समय अनेक विचार आपके मन में उत्पन्न होंगे और आपके कार्य से आपको डिगाने का प्रयास करेंगे, परन्तु इन विचारों से आप अलग रहें। विचारों को अपने मन में न आने दें।
बिन्दु की ओर तब तक देखते जायें जब तक कि वह अदृश्य नहीं हो जाता और खुली या बन्द आँखों से आपको कुछ स्वरूप दिखाई नहीं पड़े।

यह अभ्यास चारों ओर के संसार से मन का सम्बन्ध विच्छेद कर देता है और उसे अर्धचेतन शक्ति के अधिकार में दे देता है जिसका सीधा सम्बन्ध अतीन्द्रिय जगत् से है।

आत्मानुभूति योग

आत्म-सजगता का विकास कई चरणों में किया जाता है। इस क्रिया के द्वारा आप अन्ततः अपने भीतर छुपी शक्ति के अस्तित्व का अनुभव कर सकेंगे। जप और ध्यान के यौगिक अभ्यास के समय आप इसका विकास कर सकते हैं। उचित विकास के बाद आत्मसजगता एक वास्तविकता और अनुभूति बन जाती है।

आत्म-सजगता के लिए किए जाने वाले अभ्यास के पूर्व हम कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं का वर्णन कर रहे हैं।

इन शब्दों को स्मरण रखें– शारीरिक चेतना, प्राणिक चेतना, मानसिक चेतना, सूक्ष्म चेतना, कारण चेतना और देहमुक्त चेतना। चेतना की इन छः अवस्थाओं को स्मरण रखना है।

जब आप एक आसन में बैठते हैं तब प्रथम चेतना शारीरिक चेतना कहलाती है। फिर आप धीरे-धीरे श्वास लेते और छोड़ते हैं। कुछ समय बाद आपको अनुभव होता है कि आपकी शारीरिक चेतना कम होती जा रही है और आप आने-जाने वाली श्वास के प्रति अधिक चैतन्य हैं। धीरे-धीरे आप प्राण के प्रवाह के प्रति अधिक चैतन्य हो जाते हैं। परिणामतः कुछ समय बाद शारीरिक चेतना गौण हो जाती है और प्राणिक चेतना प्रधान हो जाती है। इस स्तर पर आप अनुभव करेंगे कि आप मात्र श्वसन, श्वसन और श्वसन ही कर रहे हैं।

जब आप श्वसन के प्रति सजग रहते हैं तब उसे प्राणिक चेतना कहते हैं और जब यह प्रधान बन जाती है तब यह शारीरिक अचेतनावस्था कहलाती है। आप अपने शरीर के प्रति अचेतन हो जाते हैं। आप सिर्फ प्राण-प्रवाह के प्रति ही सजग रहते हैं।

अब उस प्राणिक चेतना में मंत्र ॐ या 'सोऽहं' का संयोग करें और मंत्र के प्रति सजग बनें। तब आप भीतर जाने वाली श्वास के साथ 'सो' और बाहर जाने वाली श्वास के साथ 'हं' मन्त्र का अनुभव करें। कुछ समय बाद श्वास के दो प्रवाहों की सजगता विलुप्त हो जायेगी, केवल 'सोऽहं' आपकी सजगता में रहेगा। जब यह चेतना तीव्र हो जाएगी तब आपको दृश्य दिखाई देंगे।

जैसे ही आप दृश्य देखते हैं, मानसिक चेतना का सूक्ष्म चेतना के साथ लय होना प्रारम्भ हो जाता है। इस अवस्था में अजपा के समस्त रूप निरन्तर बढ़ती हुई सूक्ष्म चेतना में विलीन हो जाते हैं। आप मानसिक धरातल से परे चले जाते हैं।

यहाँ व्यक्तिगत चेतना स्थगित हो जाती है। परिणामतः, साधक गहरी तन्द्रा की अवस्था में पहुँच जाता है और वह क्रिया के प्रति भी सचेत नहीं रह पाता है। जो व्यक्ति शवासन में इसका अभ्यास करते हैं, वे केवल प्रातःकाल में ही पुनः सजगता को प्राप्त कर सकेंगे, परन्तु पद्मासन में अभ्यास करने वाले व्यक्ति को इस सजगता का अनुभव किसी भी समय हो सकता है।

प्रत्येक आध्यात्मिक साधक सूक्ष्म चेतना तक साधारण निर्देशन और अभ्यास से पहुँच सकता है और उसका अनुभव कर सकता है। परन्तु जब आत्मा अचेतनावस्था को प्राप्त करती है तब साधक को भिन्न-भिन्न अनुभव प्राप्त होने लगते हैं। तब उसे झपकी, दृश्य, स्वप्न, पुनः तन्द्रा इत्यादि का चक्रवत् अनुभव होता है। इस स्थिति में वह आत्मा के सूक्ष्म एवं कारण क्षेत्रों के बीच विचरण करता है। इसके आगे व्यक्ति अकेला नहीं जा सकता। यह पूर्ण अन्धकार का क्षेत्र है। यहाँ आपको समय, स्थान आदि की सजगता नहीं रहती। मन की सभी क्रियाएँ पूर्णतः निरुद्ध रहती हैं। यहाँ इच्छा की कोई क्रिया नहीं होती। परिणामतः साधक पुनः दृश्य जगत में लौटता है, फिर अचानक या धीरे-धीरे वह मानसिक, प्राणिक और शारीरिक स्तर पर वापस लौट आता है। योग की भाषा में इसे हम आना और जाना या बार-बार जन्म लेना कहते हैं, जिसका वास्तविक अर्थ है, चेतना का पुनरुत्थान।

यदि आप चेतना के इस क्षेत्र से आगे जाना चाहते हैं तो केवल निर्देश ही पर्याप्त नहीं है। किताबें, निर्देश, सत्संग आपके लिए सहायक नहीं होंगे। यहाँ गुरु की आवश्यकता है, जो अंधकार में प्रकाश उत्पन्न कर सके। चिदाकाश के अंधकार को गुरु ही दूर कर सकता है। वही आपको अचेतन कक्ष से ले जाता है। योग में इसे पंचम कक्ष कहते हैं जिसे बिना गुरु की कृपा के कोई साधक

भेद नहीं सकता है, क्योंकि जैसे ही साधक इस कक्ष में प्रवेश करता है, वह स्वयं के प्रति अचेतन हो जाता है। उसमें रत्ती भर इच्छाशक्ति नहीं रहती है। अतएव पंचम कक्ष से ले जाने हेतु उसे गुरु की आवश्यकता होती है। जब साधक ध्यान के इस पंचम कक्ष में सोता है तब वह कानों से कुछ नहीं सुन सकता। वह केवल गुरु के निर्देशों का पालन करता जाता है। गुरु की आज्ञा आज्ञाचक्र द्वारा ग्रहण की जाती है और जिनका आज्ञा चक्र जाग्रत हो रहा है, केवल वे ही गुरु के आदेशों को सुन सकते हैं, अन्य कोई नहीं। सर्वसाधारण विधि यह है–

1. शरीर पर ध्यान करें और शरीर के परे जायें।
2. प्राण पर ध्यान करें और प्राणों के परे जायें।
3. मन पर ध्यान करें तथा उसे पार करें।
4. दृश्यों पर ध्यान करें और उन्हें पार करें।

इसके पश्चात् जो व्यक्ति गुरु के बिना आगे बढ़ना चाहते हैं, वे अचेतन मन पर ध्यान करें और उसे भी पार कर जायें। यह विधि इतनी सरल नहीं है। मात्र एकाग्रता और सजगता के द्वारा ही इस कक्ष को पार करने से गुरु से सम्पर्क करना सरल है, यद्यपि वह एक दुर्लभ महापुरुष है।

अभ्यास

पैरों को फैलायें और अपने को पूर्ण सजगता के साथ शिथिल करें।
अपने पूरे शरीर के प्रति आपको सजग होना चाहिए।
केवल एक ही विचार लायें–अपने शरीर के प्रति सजग हूँ।
आपके मन को निरन्तर यही सोचना चाहिए।
शरीर की चेतना निरन्तर बनी रहे।
यदि आप किसी रेडियो या मोटर की आवाज सुनते हैं तो उसके प्रति उपेक्षा भाव रखें।
मन में यह विचार रख कर ध्यान में न बैठें कि अभ्यास के दौरान किसी प्रकार का विघ्न नहीं आयेगा। यदि आप इस प्रकार की धारणा उत्पन्न करेंगे तो बाह्य घटक अधिक विघ्न डालेंगे। एक बार मानसिक चेतना के क्षेत्र में पहुँचने के बाद कोई भी वस्तु आपकी स्थिरता भंग नहीं कर सकती।
जब आप शारीरिक सजगता का अभ्यास करेंगे तब आप नींद की पहली अवस्था का अनुभव कर सकते हैं। परन्तु तन एवं मन की मध्यवर्ती रेखा पर अपनी चेतना बनाए रखें।

जब आप ध्यान करेंगे तो इस सीमावर्ती रेखा को स्पष्ट देखेंगे। इस सीमा रेखा पर अपनी चेतना रखें।
यदि आप शरीर पर ध्यान करते हैं और इस सीमा रेखा की सजगता बनाये रखते हैं तो आप प्राणिक, मानसिक और सूक्ष्म चेतना के क्षेत्रों का अनुभव कर पायेंगे। तब आप अचेतन क्षेत्र में जाएँगे। यदि आप किसी कारणवश शरीर की चेतना को खो देते हैं तो निश्चित रूप से आप अचेतन में पहुँच जाएँगे, परन्तु वहाँ कोई दृश्य नहीं रहेगा। इसलिये अखण्ड रूप से अपनी चेतना बनाए रखें। सतत् सजगता।
आप खुली या बन्द आँखों से इसका अभ्यास कर सकते हैं। बन्द आँखों से अभ्यास करना अपेक्षाकृत अच्छा है।

अतिरिक्त विवरण

चाहे किसी भी आसन में आप इसका अभ्यास करें, आपको शरीर का मानसदर्शन करना होगा। कृपया ज्यादा विस्तार में न जायें। यह मत कहें– सीधा बैठा हूँ, मैं मोटा हूँ, केवल कहें–मैं हूँ। यदि अभ्यास के समय झपकी आए तो इच्छाशक्ति को जाग्रत करें और मानसिक रूप से कहें–मैं हूँ। इस स्थिति में शारीरिक चेतना कम होगी। आप पूर्णत: शरीर के प्रति अचेतन नहीं रहेंगे, परन्तु शारीरिक चेतना कम होती जाएगी। यह शरीर रहित चेतना है। 'मैं हूँ' के प्रति चेतना रहेगी, परन्तु शरीर के प्रति जागरूकता नहीं रहेगी।

जब आप नींद लेते हैं तब आपको अनुभव होता है कि आपको नींद आ रही है। उस समय शरीर के रहते हुए भी उसका ज्ञान नहीं रहता। यह लगभग उसी तरह का अनुभव है। कृपया इसे अच्छी तरह समझें, अन्यथा आपको दो कठिनाइयाँ होंगी। या तो आप शरीर के विचार को पुनर्जीवित करेंगे, या सो जायेंगे। आपको बहुत सावधान रहना पड़ेगा। यह वैसी ही स्थिति है मानो आप तनी हुई रस्सी पर चल रहे हैं।

यह 'मैं हूँ' कालान्तर में 'मैं ब्रह्म या भगवान हूँ' में परिवर्तित हो जाता है। सर्वप्रथम आप स्वयं के प्रति जागरूक होते हैं। जब आप इस अभ्यास में दृढ़ हो जाते हैं तब आप परम चेतना के प्रति सजग हो जाते हैं। यह मात्र बौद्धिक परिकल्पना नहीं वरन् अर्जित ज्ञान है। छठे कक्ष में इस शारीरिक चेतना को पार करना पड़ता है।

चेतना का अनुबन्ध

अन्वेषण विधि

वह जो मुझमें है, वही सबमें है। वह जो मैं हूँ, वही अन्य सभी में है। जीवन में इसी बोध को प्राप्त करना है और इसी का अनुभव करना है। समग्र सृष्टि का यह एक सार है। यह मेरा दृढ़ अनुभव होना चाहिए कि समस्त सृष्टि *मुझसे* अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है, क्योंकि मुझे यह जानना और अनुभव करना चाहिए कि मन, शरीर और इन्द्रियों से बहुत परे एक अदृश्य सम्पर्क-सूत्र है, जिसने दृश्य एवं अदृश्य जगत् के विविध मनकों को एक लड़ी में पिरो रखा है। हम 'रक्त-सम्बन्ध', 'सामुदायिक सम्बन्ध', 'सामाजिक सम्बन्ध' और विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों की चर्चा करते हैं। आइए, हम उन विविध प्रकार के सम्बन्धों में एक विशिष्ट और एकात्म सम्बन्ध को जोड़ दें जो चिरस्थायी और विश्वव्यापी है–अन्तरात्मा का सम्बन्ध। इसका निहितार्थ यह है कि तत्त्वत: समस्त जगत् एक आत्मा की एकता के सूत्र में निबद्ध है।

इस बोध की अनुभूति हमारे विचारों को सुस्थिर बनाकर रखती है और जीवन के सभी क्षेत्रों में अपने बन्धु-बान्धवों, मित्रों, तथा-कथित शत्रुओं और भू-मंडल के समस्त प्राणियों के साथ हमारे व्यवहार के स्वरूप का निर्धारण करती है। जब हम इन सबके बीच होते हैं तब कम-से-कम एक क्षण के लिए यह महसूस करने की चेष्टा करें कि *वह* जो मुझमें है, वही उनमें भी है और तत्त्वत: हम सभी एक ही हैं। इस प्रकार, विभक्त विविधता की प्रतीति के बीच एक अखण्ड एकता विद्यमान होती है।

इस बोध को हृदयंगम करने की विधि क्या है? उसे जीवन के आचार-व्यवहार में लाने का तरीका कौन सा है? आइए हम इस प्रकार प्रयोग करें।

अपने पिता, भाई, बहन, पति, पत्नी या मित्र की बात लें, जो हमारे विचार, सिद्धान्त और विश्वास से मेल नहीं रखते हैं और हमसे कटे-कटे से रहते हैं। अभ्यास और तप से प्राप्त इस बोध को प्रयोग में लायें कि वह जो हममें है वही उनमें भी है। हमारे और उनके बीच एक ही तत्त्व सदा से रहा है और सदा बना रहेगा। यही बोध बार-बार आपके अन्तर्तम में गूँजता रहे और तब तक गूँजता रहे जब तक मन के निगूढ़तम क्षेत्र तक वह न पहुँच जाय अथवा आप यह अनुभव न करने लग जायें कि वह जो हमारे भीतर है, वही उनमें भी है।

तात्त्विक एकत्व पर सम्यक् ध्यान के अभ्यास के द्वारा जब यह बोध उच्च आवृत्ति और प्रबलता प्राप्त कर लेता है तब एक अदृश्य कड़ी स्थापित हो जाती है। तब महसूस होगा कि हमारे और उनके बीच एकत्व की यह डोर पहले से ही कायम थी। फलतः दूसरा व्यक्ति आपके विचार, सिद्धान्त और विश्वास के प्रति संवेदनशील होने लगेगा। आप दोनों के बीच का मतभेद विलुप्त हो जाएगा और दोनों के दृष्टिकोण समान हो जायेंगे। वह व्यक्ति आपसे ज्ञान सम्पन्न व्यक्ति की तरह व्यवहार करने लगेगा। शारीरिक या मानसिक मतभेद से बिल्कुल परे, यह आध्यात्मिक संयुक्ति है।

अब हम किसी पशु का उदाहरण लेते हैं, जो अपने अपरिपक्व एवं अविकसित मनो-शारीरिक संस्थान के कारण हमारे ज्ञान और हमारी क्षमताओं के केन्द्र से अलग-थलग पड़ा हुआ है। यहाँ भी आप उस बोध को प्रयोग में लें आयें और अनुभव करें कि '*वह* जो मुझमें है वही उसमें भी है' और दोनों का आन्तरिक तत्त्व एक ही है। यह बोध आपके भीतर तब तक ध्यान के रूप में घूमता रहे जब तक आप, वास्तव में आप-दोनों के बीच कायम अन्तर्सम्बन्ध के सनातन अस्तित्व का प्रत्यक्ष अनुभव नहीं करने लग जायें। तात्त्विक एकत्व पर सम्यक ध्यान-विधि द्वारा जब यह कड़ी कायम हो जायेगी तब दोनों के बीच एक अदृश्य बन्धुत्व स्थापित हो जाएगा।

वह जो मुझमें है, वही सबमें है। यही वास्तविक ज्ञान हम आपके मन पर अंकित करना चाहते हैं। हम चाहेंगे कि आप आत्मा की इस अजर, अमर कड़ी को आत्मसात् करें, जो समस्त प्राणियों के जीवन का मूल आधार है। आप इस बात को भी पूर्ण रूप से समझ लें कि आप अपने विश्वास, सिद्धान्त और व्यवहार के अनुरूप उनके ऊपर काम कर सकते हैं।

यद्यपि अपने सम्मुख यह संकल्प सर्वदा रखें कि आप इस बोध का उपयोग अपनी स्वार्थ पूर्ति अथवा अपावन उद्देश्य या व्यक्तितत्त्वों को आविष्ट करने

की नीयत से नहीं करेंगे। अपनी मानसिक आँख से सदा यह देखें कि आप यह प्रयोग इस तथ्य का अनुभव करने के उद्देश्य से कर रहे हैं कि आत्मा या ईश्वर इस जगत् के प्रत्येक वस्तु में अन्तर्निहित है, कण-कण में व्याप्त है। आपको इस पवित्र और ऊर्ध्वगामी सिद्धान्त के प्रति सजग और सचेत रहना चाहिए कि आप यह अनुभव कर सकें कि *वह* जो आप में है, वही समस्त जीवों में है। इतना ही नहीं आप यह अनुभव भी कर सकें कि शरीर, विचार, संवेग, संवेदन एवं अचेतनता, जो प्रत्येक प्राणी में भिन्न-भिन्न है, उन सबके ऊपर एक समान अदृश्य सिद्धान्त है, जो इस अनन्त व्यापक ब्रह्माण्ड में सर्वत्र समान रूप से व्याप्त है।

किन्तु यह प्रयोग सिर्फ ध्यान के माध्यम से ही होना चाहिए, शरीर या मन के साथ किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं होना चाहिए। अपवित्र भावना से रहित, किन्तु शुद्ध इच्छा से प्रेरित ध्यान निश्चय ही सफल होगा। यदि यह प्रयोग शुद्ध मन से, परिष्कृत उद्देश्य से नहीं किया गया तो आपकी अपेक्षा के विरुद्ध प्रयुक्त व्यक्ति दुर्भावग्रस्त होकर प्रतिकूल प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकता है, जिसके अहितकर परिणाम हो सकते हैं। अतएव, किसी शत्रु को मित्र बनाने का प्रयास न करें और अपने समस्त प्रयोगों मे चेतना की लुप्त कड़ी को ढूँढ़ने पर अपना ध्यान केन्द्रित रखें। जिसने इस खोयी हुई कड़ी को ढूँढ़ निकाला है, वह योगी है, क्योंकि उसने एकत्व का बोध प्राप्त कर विभिन्न कारकों को जोड़कर सुदृढ़ कर दिया है।

जो लोग अपने भीतर घृणा का भाव रखते हैं या विद्वेष आदि नकारात्मक भावों से ग्रस्त रहते हैं, उन्हें इस प्रयोग से अपने को दूर ही रखना चाहिए। सर्वप्रथम उन्हें अपनी दुर्भावनाओं को प्रेम, दान, समझ, सहानुभूति, करुणा और मैत्री से दूर करना चाहिए। वासनाग्रस्त व्यक्तियों को भी तब तक इस प्रयोग से दूर रहना चाहिए जब तक वे विविध योगाभ्यासों और ब्रह्मचर्य के पालन द्वारा वासना पर विजय नहीं प्राप्त कर लेते हैं। लोभ-लालच से ग्रस्त व्यक्ति भी तब तक यह अभ्यास प्रारम्भ न करें जब तक वे संतोष एवं त्याग द्वारा इस कुवृत्ति को पराभूत नहीं कर देते।

वह जो मुझमें है, वही सब में है, इस बोध को हमें एकत्व के क्षेत्र के सन्निकट पहुँचा देना चाहिए। यह हमें सबके साथ एकता के सूत्र में पिरो देता है और हमारे भीतर दैवी गुणों का विकास करता है। अन्ततः यह हमें ईश्वरानुभूति के लक्ष्य तक पहुँचने में अथवा दिव्य चेतना की अनुभूति कराने में सहायक होता है।

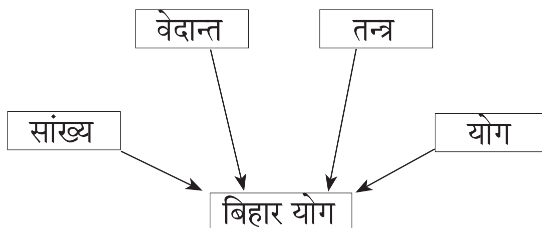
बिहार योग

विकास का सिंहावलोकन

पाठक को बिहार योग के इतिहास, क्रमिक विकास एवं भारत तथा विदेशों में इसके विविध कार्यक्रमों का सिंहावलोकन प्रदान करने के लिए इस अध्याय को पुस्तक में जोड़ा गया है।

बिहार योग का उद्‌भव

बिहार योग (अथवा सत्यानन्द योग) परम्परा स्वामी सत्यानन्द एवं उनके शिष्य स्वामी निरंजनानन्द द्वारा विकसित एवं प्रतिपादित योग की एक प्रणाली है, जो प्राचीन संन्यास परम्परा से प्राप्त सांख्य, वेदान्त, योग और तन्त्र के सिद्धान्तों और वाङमय पर आधारित है।



स्वामी सत्यानन्द ने आधुनिक युग की आवश्यकताओं के अनुरूप प्राचीन योग विज्ञान को पुनर्जीवित कर एक नये स्वरूप में विश्व के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस प्रकार बिहार योग एक समृद्ध आध्यात्मिक परम्परा से विकसित होकर प्रकट हुआ है। इन प्राचीन योग परम्पराओं और सिद्धान्तों पर निरन्तर शोध के द्वारा योग के क्षेत्र में सम्पूर्ण मानवीय प्रकृति

एवं व्यक्तित्व के विकास हेतु मूल्यवान् जानकारियाँ प्राप्त की जा रही हैं। बिहार योग की विधियाँ अतीत के ज्ञान को आज की आवश्यकता के अनुरूप समाकलित कर रही हैं।

बिहार योग का समांगी मार्ग

- बिहार योग में ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग, हठयोग, राजयोग, मन्त्रयोग, कुण्डलिनीयोग और क्रियायोग के प्रति समेकित दृष्टि अपनायी जाती है, जिसके आधार पर योगाभ्यासी अपने जीवन के विभिन्न पहलुओं को इस प्रकार सुगठित कर सकता है कि वे आध्यात्मिक उन्नयन में सहायक हों।
- ज्ञानयोग बौद्धिक ज्ञान को व्यावहारिक प्रज्ञा में रूपान्तरित करने की प्रक्रिया है। यह प्रकृति, मानव-समाज और ब्रह्माण्ड के साथ मानवीय धर्म की खोज है। परम्परा द्वारा उच्चतम ध्यानावस्था एवं आन्तरिक प्रज्ञा की उपलब्धि के साधन के रूप में ज्ञानयोग को पारिभाषित किया गया है। यह उपलब्धि चेतना के अनुशासनिक प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त की जा सकती है।
- भक्तियोग संवेगों एवं भावनाओं को दिशान्तरित कर अन्तर्निहित अतीन्द्रिय एवं दिव्य मानवीय प्रकृति की अनुभूति प्राप्त कराने हेतु मार्ग प्रदान करता है। यह मानवीय भावों एवं संवेगों को सकारात्मक अभिव्यक्ति में रूपान्तरित करता है। कई लोग भक्तियोग को धार्मिक दृष्टि से देखते हैं। भक्तियोग के माध्यम से समग्र जीवन की एकात्मकता का बोध प्राप्त होना संभव है।
- 'कर्मयोग' योग की वह पद्धति है, जो कार्य के प्रतिक्रियात्मक एवं नकारात्मक घटकों के प्रति शोध-क्षमता विकसित करती है। कार्य के प्रति यह सजगता इच्छाओं, महत्त्वाकांक्षाओं, अहम् और व्यक्तित्व के अन्य घटकों के रूप में अभिव्यक्त मानसिक अभिव्यक्तियों को संभालने में कारगर साबित होती है। कर्मयोग एक साधना है, न कि दर्शन। यह अतीत के अनुभवों से अभिप्रेरित एक साधना है। यह अतीत के अनुभवों से प्रेरित हो भविष्य की चिन्ताओं से मुक्त रह कर वर्तमान में जीने और कार्य करने की पद्धति प्रदान करती है। कर्मयोग की अवस्था सेवा में निरत रहकर प्राप्त की जा सकती है। इसके लिए प्रेरणा एक योग्य गुरु के मार्गदर्शन से प्राप्त की जा सकती है।

बिहार योग पद्धति में मनुष्य के शरीर अथवा बुद्धि को ही नहीं, वरन् समग्र व्यक्तित्व को एकीकृत करने की शिक्षा दी जाती है। यहाँ सजगता पर बल दिया जाता है और अभ्यासियों को योगाभ्यास द्वारा अपने व्यक्तित्व के विविध पहलुओं का अन्वेषण करने और उन्हें समझने के लिए प्रेरित किया जाता है। सकारात्मक परिवर्तन एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, जो पूर्ण सजगता के साथ नियमित अभ्यास करने पर घटित होता है। इसमें मन और शरीर पर एक सीमा के बाहर दबाव नहीं दिया जाता है।

बिहार योग के प्रेरणा-स्त्रोत

बिहार योग परम्परा की जड़ें हिमालय की गोद में स्थित ऋषिकेश में हैं, जहाँ योग के विख्यात महागुरु स्वामी शिवानन्द योग की समेकित पद्धति का प्रशिक्षण दिया करते थे। उनकी मूल प्रेरणा से प्रारम्भ कर आज तक सम्पूर्ण विश्व में प्रचार, प्रसार और प्रशिक्षण हेतु बिहार योग आज की आवश्यकताओं के अनुरूप एक समेकित योग-पद्धति को विकसित करने में अपनी अहम् भूमिका निभाता चला आ रहा है। उत्तरवर्ती योग गुरुओं और अभिप्रेरकों के मार्ग-दर्शन और प्रशिक्षण के माध्यम से प्राचीन योग-विद्या साधकों और अभीप्सुओं को विभिन्न प्रकार से लाभान्वित कर रही है।

बिहार योग-पद्धति के प्रेरक महापुरुष

बिहार योग-पद्धति की जड़ें हिमालय की तराई में अवस्थित ऋषिकेश में है, जहाँ प्रख्यात योग गुरु स्वामी शिवानन्द ने योग की सामंजस्यपूर्ण अवधारणा की शिक्षा दी। उनकी मूल प्रेरणा से लेकर आज तक, बिहार योग पद्धति सम्पूर्ण विश्व में एक सामंजस्यपूर्ण योग पद्धति के रूप में विकसित हुई है, जो आज की सामुदायिक आवश्यकताओं को पूर्णता प्रदान करने में सक्षम है। योग गुरुओं एवं प्रेरकों की शिक्षाओं एवं मार्गदर्शन से प्राचीन ज्ञान सतत् परिष्कृत होता हुआ योग पिपासुओं को तृप्त करता रहा है।

स्वामी शिवानन्द सरस्वती ने जीवनभर योग एवं अध्यात्म पर सैंकड़ों पुस्तकें एवं लेख लिखे, जो आज भी जनसामान्य के मन एवं हृदय में योग के मूल्यों को स्थापित कर रहे हैं। स्वामी शिवानन्द का जोर उन प्रचलित बाधाओं को तोड़ने पर था जो जरूरतमंदों को योग शिक्षा से विलग कर देती थीं, चाहे इसका स्वरूप शारीरिक स्वास्थ्य हो या मानसिक शान्ति या आध्यात्मिक अभीप्सा।

स्वामी शिवानन्द के योग सिद्धान्त को संक्षेप में उनके द्वारा प्रतिपादित अष्टांग योग–सेवा, प्रेम, दान, शुद्धता, सत्कर्म, सदाचार, ध्यान एवं आत्मानुभूति द्वारा समझा जा सकता है। यही सिद्धान्त बिहार योग-पद्धति को मार्गदर्शन देता रहा है।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती ने अपने शिष्यों तथा प्रामाणिक शिक्षण एवं लेखन द्वारा स्वामी शिवानन्द के योग-सन्देश को विश्वभर में फैलाया। ऋषिकेश में बारह वर्ष का प्रशिक्षण पूरा करने के बाद उन्होंने नौ वर्षों तक परिव्राजक के रूप में सम्पूर्ण भारत की यात्रा कर, समाज के समस्त वर्गों में व्याप्त मानवीय पीड़ा का गहन अवलोकन किया। अन्ततोगत्वा वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि योग आज के आधुनिक मनुष्य की समस्याओं का समाधान प्रदान कर सकता है और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है।

बिहार योग विद्यालय एवं अन्य योग-संस्थानों (देखिये–बिहार योग परिवार) की स्थापना द्वारा स्वामी सत्यानन्द योग एवं आध्यात्मिक जीवन की सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करने हेतु शिक्षण केन्द्र उपलब्ध कराने में कृतकार्य हुए। उनके संन्यासियों ने योग पर अनुसन्धान करने में पथ-प्रदर्शक की भूमिका निभायी और स्वास्थ्य, मन एवं मानव के उत्थान से सम्बन्धित क्षेत्रों में योग के लाभ पर अन्वेषण किया।

सत्यानन्द योग ऐसी परम्परा बन गयी, जिसमें शास्त्रीय और अनुभवात्मक ज्ञान तथा आधुनिक दृष्टिकोण का सुन्दर समन्वय है।

उपलब्धियों के शिखर पर पहुँच कर उन्होंने सबकुछ त्याग दिया और क्षेत्र संन्यास लेकर परमहंस संन्यासी की जीवनपद्धति अपना ली। सन् 1989 में उन्हें रिखिया आने का दैवी आदेश हुआ। यहाँ उन्होंने एकान्तवास करते हुए उच्च वैदिक साधनाएँ कीं।

स्वामी सत्यानन्द 5 दिसम्बर 2009 की मध्यरात्रि में अपने शिष्यों की उपस्थिति में महासमाधि में लीन हो गये। किन्तु आज भी उनकी प्रेरणा बिहार योग पद्धति के प्रयोग एवं विकास को मार्गदर्शन प्रदान कर रही है।

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती ने अपने गुरु एवं परमगुरु का कार्य जारी रखते हुए समाज की परिवर्तनशील आवश्यकताओं पर ध्यान केन्द्रित कर इन क्षेत्रों में योग के प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया (देखें सामाजिक विकास)। वे व्यापक यात्राओं, सम्मेलनों एवं कार्यक्रमों द्वारा भारत एवं विश्वभर में स्वामी सत्यानन्द द्वारा प्रारम्भ किये गये योग केन्द्रों एवं आश्रमों

को मार्गदर्शन और प्रेरणा दे रहे हैं। उन देशों अथवा क्षेत्रों में, जहाँ योग के प्रति रुचि विकसित हो रही है, उनके द्वारा योग शिक्षा एवं क्रियाकलापों के नये केन्द्र भी विकसित हो रहे हैं।

सन् 1994 में स्वामी निरंजनानन्द ने योग विज्ञान में उच्च शिक्षा के लिए बिहार योग भारती नामक संस्था की स्थापना की। गुरुकुल पद्धति पर आधारित इस संस्था का उद्देश्य आध्यात्मिक ज्ञान के साथ शैक्षिक एवं वैज्ञानिक विधियों को सम्मिलित कर योग विज्ञान को सुरक्षित रखना एवं उसे पुनर्जीवित करना था। सन् 1995 में उनके द्वारा स्थापित बाल योग मित्र मण्डल द्वारा बच्चों को योग से जोड़ा गया।

सन् 2009 में उन्हें अपने गुरु से संन्यास जीवन का एक नया अध्याय शुरू करने का आदेश प्राप्त हुआ, जिसे मूर्त्त रूप देने के उद्देश्य से उन्होंने सन् 2010 में संन्यास पीठ की स्थापना की। (बिहार योग परिवार देखें)।

स्वामी निरंजनानन्द योग दर्शन, अभ्यास एवं जीवनशैली की गहन जानकारी और समझ रखते हैं तथा योग, तंत्र एवं उपनिषदों पर अनेक प्रमाणिक पुस्तकों के प्रणेता भी हैं। प्राचीन तथा अर्वाचीन परम्पराओं का सुन्दर समन्वय करते हुए वे इस समय मुंगेर में अपने गुरु के मिशन को आगे बढ़ाने के कार्य में संलग्न हैं।

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती–स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती झारखण्ड, देवघर में स्थित रिखिया के शोषित स्थानीय समुदाय के उत्थान का अपने गुरु का सपना पूरा कर रही हैं। यहाँ पर रिखियापीठ आश्रम की स्थापना की गई है। 1989 से शिवानंद मठ के कार्यकलापों को दिशा प्रदान कर उन्होंने इस क्षेत्र के स्थानीय ग्रामीणों तथा बच्चों के जीवन को रूपान्तरित कर दिया है। स्थानीय लोगों के भौतिक एवं आध्यात्मिक उत्थान के स्वामी सत्यानन्द के संकल्प को तीव्रता से कार्यान्वित करने के लिए उन्होंने 2004 में शिवानन्द आश्रम की स्थापना की।

रिखियापीठ की पीठाधीश्वरी के रूप में स्वामी सत्यसंगानन्द, स्वामी शिवानन्द के तीन नीति वचनों–सेवा, प्रेम और दान को व्यावहारिक रूप देने के लिए कृतसंकल्प हैं।

स्वामी सूर्यप्रकाश सरस्वती–स्वामी सूर्यप्रकाश का पालन-पोषण ऐसे वातावरण में हुआ जहाँ उनके भीतर गहन आध्यात्मिक रुझान का विकास

स्वाभाविक रूप से हुआ। अपनी स्कूली शिक्षा समाप्त कर स्वामी सूर्यप्रकाश अपने गुरु के मिशन में योगदान देने आश्रम आ गए। आश्रम एवं आध्यात्मिक जीवन में गहन प्रशिक्षण के उपरान्त स्वामी सूर्यप्रकाश को सन् 2008 में बिहार योग विद्यालय के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया गया।

स्वामी सूर्यप्रकाश अब आश्रम की सभी गतिविधियों का कुशलतापूर्वक निर्देशन करते हैं। वे गुरु के मिशन के प्रति पूर्ण प्रतिबद्धता के ज्वलन्त उदाहरण हैं। उनके व्यक्तित्व में पारम्परिक आध्यात्मिकता और तकनीकी आधुनिकता का सुन्दर समन्वय है। वे संगीत और भाषण-कला में निष्णात हैं। हिन्दी, अँग्रेजी और स्पैनिश भाषाओं में धारा-प्रवाह होने के साथ-साथ काटलान, फ्रेंच, इटालियन, ग्रीक और संस्कृत भाषाओं में भी उनकी अभिरुचि है।

बिहार योग पद्धति का विकास

बिहार योग पद्धति द्वारा विकसित योग का शिक्षण एवं प्रशिक्षण निम्नलिखित बिन्दुओं को प्रस्तुत करता है–

- शास्त्रानुगत हठयोग एवं राजयोग की तकनीकों (विधियों) द्वारा शारीरिक एवं मानसिक संतुलन एवं स्वास्थ्य में विकास।
- प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, मंत्र योग, कर्मयोग, राजयोग एवं भक्तियोग के क्रमबद्ध विकास द्वारा मानसिक एवं भावनात्मक स्थिरता प्रदान करना।
- शास्त्रीय क्रियाओं और कुण्डलिनी योग द्वारा आत्मान्वेषण और अन्त: जागरण में सक्षम बनना।

यह ज्ञानयोग द्वारा सभी स्तरों पर समरसता एवं भावात्मक समृद्धि में परिवर्तित होता है।

वैज्ञानिक प्रयोग एवं अनुसन्धान बिहार योग पद्धति की धुरी रहे हैं। आरम्भ से ही स्वामी सत्यानन्द ने शास्त्रों के ज्ञान पर प्रयोग कर जो उपयोगी था, उसे एकत्र कर प्रयोगात्मक रूप से पुन: प्रस्तुत किया। आसनों को उनकी स्थिति और क्रमानुसार व्यवस्थित कर विभिन्न समूहों में विभाजित किया। उनका एक महत्त्वपूर्ण योगदान पवनमुक्तासन समूह के आसन भाग-1 (गठिया रोधी), भाग-2 (वात रोधी) एवं भाग-3 (शक्तिबन्ध या ऊर्जा विमोचन हेतु) हैं। षट्कर्मों को सम्मिलित करना भी बिहार योग पद्धति का एक महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

पूर्व में प्राणायाम की क्रियायें कुछ गिने-चुने लोगों को उच्च योग-साधना के लिए सिखायी जाती थीं, परन्तु स्वामी सत्यानन्द ने प्राणायाम को दैनिक योग-साधना का एक भाग बनाकर उसे पुनः प्रस्तुत किया। आज अनेक योग विद्यालयों द्वारा प्राणायाम को जिस शृंखलाबद्ध विधि से सिखाया जाता है, वह बिहार योग परम्परा द्वारा विकसित की गई विधि है।

मुद्रा एवं बन्ध के शरीर-विज्ञान एवं मनोवैज्ञानिक प्रभावों का परीक्षण कर उन्हें सुव्यवस्थित बनाया गया। स्वामी सत्यानन्द प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने मुद्रा एवं बन्ध के कार्यों का वैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण किया। बिहार योग पद्धति में मुद्राओं एवं बन्धों को विभिन्न आसनों, प्राणायामों एवं ध्यान की तकनीकों में जोड़ा गया है, जिससे प्राणिक प्रभावों में वृद्धि होती है।

स्वामी सत्यानन्दजी ने सन् 1964 के प्रारम्भ में प्राचीन एवं परम्परागत तान्त्रिक अभ्यासों से योगनिद्रा के अभ्यास का आविष्कार किया, जिसका योग जगत् पर व्यापक प्रभाव है। योगनिद्रा व्यवस्थित विधि से पूर्ण शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक विश्राम की अवस्था उत्पन्न करती है, जो आरम्भिक, मध्यम और उच्च अभ्यासियों द्वारा प्रयोग में लायी जा सकती है। योग निद्रा मानसिक तनाव से जनित व्याधियों हेतु एक महत्त्वपूर्ण उपचार-पद्धति एवं व्यक्तित्व के रूपान्तरण और अन्ततः आध्यात्मिक क्रम-विकास के लिए व्यापक रूप से स्वीकृत हुई है।

बिहार योग पद्धति द्वारा प्राचीन शास्त्रों से प्राप्त एकाग्रता एवं ध्यान की विविध विधियाँ विकसित की गयी हैं। स्वामी सत्यानन्द ने तंत्रशास्त्रों से ध्यान की विभिन्न तकनीकों को विकसित किया, जिसे उन्होंने अन्तर्मौन, अजपाजप, त्राटक, चिदाकाश धारणा और प्राणविद्या के रूप में सिखाया है। उपनिषदों, तन्त्रों एवं अन्य परम्पराओं से प्रत्याहार (इन्द्रिय संयम), धारणा (एकाग्रता) और ध्यान (ध्यानात्मक सजगता) की साधना को प्राप्त कर उनका वर्गीकरण किया गया, लोगों को प्रशिक्षण दिया गया और प्रकाशित किया गया। बिहार योग परम्परा द्वारा वर्गीकृत समस्त विधियों के अभ्यास के भिन्न-भिन्न स्तर एवं चरण हैं।

स्वामी सत्यानन्द जी ने योग एवं तंत्र-शास्त्रों में वर्णित गुह्य विद्याओं से क्रिया-योग की तकनीकों का प्रचार-प्रसार किया। उन्होंने साधनाओं के सार का परिशोधन कर, साधना को शृंखलाबद्ध कर एक निश्चित स्वरूप प्रदान किया। बिहार योग पद्धति द्वारा सिखाया जाने वाला क्रियायोग विश्वभर में मान्यता प्राप्त दो विधियों में एक है, दूसरा परमहंस योगानन्द का है।

बिहार योग-पद्धति में सजगता की सामर्थ्य के विकास पर बल दिया जाता है, जिससे साधना से अधिकतम लाभ प्राप्त कर स्वयं की चेतना के क्रमविकास में वृद्धि हो। उदाहरणार्थ, आसनों के अभ्यासी शनैः-शनैः अपनी सजगता का विस्तार स्थूल से सूक्ष्म स्तर तक कर लेते हैं। सजगता के विस्तार-क्रम में भौतिक सजगता के पश्चात्, श्वसन की सजगता, मानसिक सजगता और अन्ततः प्राणिक सजगता विस्तृत होती है। द्रष्टा-भाव की क्षमता का विकास, जो सजगता के सामर्थ्य का और अधिक विस्तार करता है, बिहार योग पद्धति का एक और महत्त्वपूर्ण पक्ष है। साधक शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक या आत्मविषयक, जो भी अनुभव करे, वह द्रष्टा भाव से करे–यही सफल योग साधना का आधार है, फिर चाहे वह किसी भी प्रकार की गतिविधि में संलिप्त रहे। जीवन की परिवर्तनशील अवस्थाओं में द्रष्टा-भाव से व्यवहार करने से प्रतिक्रियात्मक के स्थान पर सकारात्मक वैयक्तिक अनुशासन की प्रवृत्ति विकसित होती है।

बिहार योग पद्धति का तीसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष यौगिक जीवन शैली को अंगीकार करने पर बल देना है, जो व्यक्ति के चरित्र में आशावादिता और रचनात्मकता का विकास करता है।

योग का सामाजिक अवलम्बन

बिहार योग विद्यालय, व्यावसायिक व्यक्तियों, बुद्धिजीवियों एवं शिक्षा कर्मियों के साथ ही उद्योगों की आधारिक संरचना, निजी एवं सार्वजनिक उपक्रमों, कम्पनियों, चिकित्सा एवं अन्य सामाजिक संस्थाओं में योग को प्रवेश दिलाने में सफल हुआ है। बिहार योग विद्यालय और विश्वभर में फैले योग केन्द्र योग-कार्यक्रमों के आयोजनों द्वारा समाज में आन्तरिक समरसता, कार्यदक्षता और स्वानुशासन में वृद्धि करते हैं। निम्नलिखित कार्यक्रम योग विद्यालय के सामाजिक एवं मानव संसाधन विकास की योजना का एक भाग हैं–

- तनाव प्रबन्धन एवं व्यवसाय प्रबन्धन के कार्यक्रम।
- योग स्वास्थ्य प्रबन्धन पर प्रशिक्षण और अनुसन्धान।
- सेना, पुलिस, कारागृहों, रेलवे, निजी एवं सार्वजनिक संगठनों, खेलों से सम्बन्धित संगठनों, शैक्षणिक संस्थाओं, चिकित्सा महाविद्यालयों एवं चिकित्सालयों हेतु विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम।

- योग पर सम्पूर्ण भारत एवं विश्वभर में शिविरों, सम्मेलनों, गोष्ठियों, कार्यशालाओं, मंचों एवं सभाओं का आयोजन।

आज भारत में योग कार्यक्रमों के अन्तर्गत बिहार योग पद्धति को वर्त्तमान में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों के उद्योगों, जैसे, इण्डियन ऑयल कॉरपोरेशन, कोल इन्डिया लिमिटेड, ऑयल एण्ड नेचुरल गैस कॉरपोरेशन, स्टील ऑथोरिटी ऑफ इण्डिया, हिन्दुस्तान पेपर कॉरपोरेशन, हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड तथा अन्य अनेक उद्योग संगठनों द्वारा अपनाया जा रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बिहार योग पद्धति के प्रयोग द्वारा समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं, जैसे, नशाखोरी एवं मद्य-पान से मुक्ति दिलाना, शारीरिक एवं मानसिक रूप से विकलांगों (बच्चों सहित), संकटग्रस्त एवं गृहविहीन किशोरों, वृद्धों, कैदियों, समाज द्वारा पीड़ित महिलाओं, एच. आई. वी से ग्रस्त रोगियों, आत्मविमोहित वयस्कों के पुनर्वास की समस्याओं का समाधान ढूँढ़ा जा रहा है तथा योगनिद्रा द्वारा रचनात्मक विकास प्राप्त हो रहा है। नियमित रूप से चल रही योग कक्षाओं और कार्यक्रमों के अलावा विशेष सामुदायिक कार्यक्रमों का संचालन किया जाता है।

शैक्षणिक संस्थाओं में योग

शासकीय विद्यालयों में विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों का प्रबन्ध किया गया है, जिससे उत्तम स्वास्थ्य, सकारात्मक, आशावादी एवं रचनात्मक मानसिकता तथा ग्रहणशीलता में वृद्धि के साथ ही विद्यार्जन एवं स्मरणशक्ति में प्रवीणता का विकास हो। इन योग पाठ्यक्रमों का बिहार, उड़ीसा, उत्तरप्रदेश और मध्य प्रदेश आदि राज्यों में संचालन किया जा रहा है। बिहार राज्य की सरकार के अनुरोध पर सन् 1985–1987 तक माध्यमिक विद्यालयों के 2000 शिक्षकों एवं विद्यार्थियों को योग की तकनीकों में शिक्षित करने हेतु बिहार योग पद्धति का प्रशिक्षण दिया गया।

चिकित्सा महाविद्यालयों में योग प्रशिक्षण

बिहार सरकार के स्वास्थ्य विभाग के अनुरोध पर चिकित्सक-संन्यासियों और योग शिक्षकों ने चिकित्सा महाविद्यालयों के छात्रों एवं चिकित्सकों के लिए योग चिकित्सा पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों को भागलपुर, पटना, नालन्दा,

दरभंगा, रांची और धनबाद के चिकित्सा महाविद्यालयों और अन्य राज्यों के चिकित्सा संस्थानों में (माँग के आधार पर) आयोजित किया।

सेना और पुलिस के लिए योग प्रशिक्षण

सेना के प्रशिक्षकों को युद्धरत सैनिकों की शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक अनुकूलता और सहनशीलता में वृद्धि करने हेतु दानापुर, बीकानेर, जबलपुर, महू और हिमालय क्षेत्र के सियाचीन ग्लेशियर में विशेष योग प्रशिक्षण शिविर संचालित किये जा रहे हैं। बिहार योग विद्यालय द्वारा बिहार सेना पुलिस की सोलह यूनिटों के प्रशिक्षकों को भी प्रशिक्षण दिया जाता है।

योग शिविर और कार्यक्रम

संन्यासियों एवं योग शिक्षकों द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर नियमित योग शिविरों और कार्यक्रमों का संचालन किया जाता है। एक आदर्श योग शिविर के दो व्यावहारिक कक्षा-सत्र होते हैं–प्रथम, प्रात: 6:30 से 8:00 बजे तक तथा द्वितीय, दोपहर 3:00 से 4:00 बजे तक। प्रात:कालीन सत्र में आसन और प्राणायाम का तथा दोपहर के सत्र में ध्यान (प्रत्याहार) और मंत्र योग का अभ्यास कराया जाता है। दिन में तथा शाम को उपयुक्त प्रसंगों पर व्याख्यानों, सत्संगों, कीर्त्तनों और कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है।

खेलों में योग

स्पोर्ट्स ऑथौरिटी ऑफ इण्डिया (भारतीय खेल प्राधिकरण) के आग्रह पर खिलाड़ियों, प्रशिक्षकों और व्यायाम शिक्षकों की शारीरिक एवं मानसिक दक्षता में वृद्धि करने हेतु लघु एवं दीर्घ अवधि के पाठ्यक्रमों का संचालन किया गया।

ग्रामीण विकास में योग

प्रशिक्षित संन्यासियों, योग शिक्षकों और स्वयं-सेवकों द्वारा, आदिवासियों और ग्रामवासियों की कुशलता एवं उन्नति के लिए पूरे बिहार राज्य के दूरस्थ ग्रामों और ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर बिहार योग पद्धति से परिचय करवाया जाता है। योग के ये पाठ्यक्रम ग्रामीण स्वास्थ्य, ग्रामीण जीवनशैली, ग्रामीण चरित्र एवं आदतों पर केन्द्रित होते हैं।

बिहार योग परिवार

अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र-मण्डल 1956

इस संस्था की परिकल्पना स्वामी सत्यानन्द ने परिव्राजक संन्यासी के रूप में अपने भारत-भ्रमण के दौरान की थी। उनकी अभिप्रेरणा एक ऐसे वैश्विक परिवार को स्थापित करने की थी जो योग की भावना एवं यौगिक जीवनशैली के प्रति समर्पित व्यक्तियों से गठित हो। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उन्होंने 1956 में अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल की स्थापना की। बहुत ही साधारण स्तर से प्रारम्भ होकर यह आन्दोलन योग के संदेश को विश्व के देशों और घरों में फैलाता रहा है। इस आन्दोलन का संकल्प समाज के हर वर्ग को न सिर्फ आध्यात्मिक और यौगिक शैली में शिक्षित करना था, अपितु भौतिक और सामाजिक दृष्टि से भी लोगों की सहायता करना था।

अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र आन्दोलन एक दार्शनिक आन्दोलन के रूप में आरम्भ हुआ था, परन्तु आगे चलकर जब लोग इसके द्वारा सिखायी जाने वाली जीवनशैली, दर्शन और साधना में रुचि प्रकट करने लगे, तब बिहार योग विद्यालय इसके मुख्यालय के रूप में स्थापित किया गया। यह उन व्यक्तियों के लिए एक केन्द्र बिन्दु बन गया जो योग के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्ष और आध्यात्मिक जीवन के बारे में जानना और सीखना चाहते थे। आज अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल के परमाचार्य पद पर स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती के आसीन होने से यह आन्दोलन एक विश्व-समुदाय बन गया है, जो विश्वभर में योगाभ्यासी परिवार को बिहार योग पद्धति के प्रचार-प्रसार हेतु एकीकृत कर उन्हें प्रेरित एवं समन्वित करता है।

बिहार योग विद्यालय 1963

बिहार योग विद्यालय की स्थापना सन् 1963 में स्वामी सत्यानन्द ने गृहस्थों और संन्यासियों को एक समान योग प्रशिक्षण प्रदान करने के उद्देश्य से की थी। यहाँ विकसित की गई योग की तकनीकें व्यक्तिगत विकास की अनेकों विद्याओं का संश्लिष्ट रूप हैं, जो पारम्परिक, वेदान्तिक, तान्त्रिक एवं यौगिक शिक्षाओं के साथ समकालीन शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य विज्ञानों पर आधारित हैं।

अध्यात्म विज्ञान और योग सीखने के लिए आज बिहार योग विद्यालय को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक प्रतिष्ठित और प्रामाणिक केन्द्र की मान्यता प्राप्त है। योग की विधियों का अधिकाधिक विकास निरन्तर जारी है और इनका प्रशिक्षण बिहार योग विद्यालय द्वारा दिया जाता है। साथ-ही यह चिकित्सालयों और अन्य संगठनों की साझेदारी से होने वाली योग अनुसंधान परियोजनाओं तथा चिकित्सा अनुसंधानों को मार्गदर्शन प्रदान करता है।

योग रिसर्च फाउण्डेशन 1984

योग रिसर्च फाउण्डेशन एक अनुसंधानरत संस्था है, जिसकी स्थापना स्वामी सत्यानन्द द्वारा सन् 1984 में विभिन्न रोगों, जैसे–श्वसन सम्बन्धी रोगों, हृदय रोग, पाचन सम्बन्धी रोग, गर्भावस्था, गठिया, स्पॉन्डिलाइटिस, रक्तचाप, स्त्री-रोग, मधुमेह, कैंसर, एच.आई.वी. ग्रस्त और नशे की लत आदि के यौगिक प्रबन्धन की भूमिका को पारिभाषित करने हेतु वैज्ञानिक और चिकित्सकीय अनुसन्धान करने के उद्देश्य से की थी।

योग रिसर्च फाउन्डेशन का लक्ष्य वैज्ञानिक ढाँचे में योग की विभिन्न शाखाओं के अभ्यासों का त्रुटिहीन मूल्यांकन करना तथा मानव जाति के विकास में योग को एक आवश्यक विज्ञान के रूप में प्रतिष्ठित करना है। वर्तमान में यह फाउन्डेशन मूलभूत अनुसन्धानों और चिकित्सीय अनुसन्धानों के क्षेत्रों में चल रही परियोजनाओं पर कार्य कर रहा है। यह दक्षता के विकास में विभिन्न सामाजिक परियोजनाओं, जैसे–सेना, कैदियों एवं बच्चों पर योग के प्रभावों का अध्ययन कर रहा है। ये परियोजनायें विश्वभर में सम्बद्ध केन्द्रों द्वारा कार्यान्वित की जा रही हैं।

योग रिसर्च फाउन्डेशन साहित्यिक, शास्त्रीय, चिकित्सीय और वैज्ञानिक अन्वेषणों को शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य और आध्यात्मिक उत्थान हेतु योग के अन्य अल्प ज्ञात पक्षों के साथ अपनी भावी योजनाओं में सम्मिलित करने जा रहा है।

शिवानन्द मठ 1984

यह एक पंजीकृत सामाजिक और दातव्य संस्था है। स्वामी सत्यानन्द ने सन् 1984 में अपने गुरु, ऋषिकेश के स्वामी शिवानन्द की स्मृति में इस संस्था की

स्थापना की थी। इसका लक्ष्य विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में समाज के कमजोर एवं अर्ध-विकसित वर्ग के उत्थान के लिए सहायता देना है। स्वामी शिवानन्द द्वारा प्रतिपादित सेवा, करुणा, प्रेम एवं स्नेह के उपदेशों पर चलने के लिए इसकी स्थापना की गई है।

हर वर्ष नवम्बर एवं दिसम्बर में शिवानन्द मठ द्वारा 'सीता कल्याणम्' के नाम से विख्यात एक विशेष आयोजन रिखिया में आयोजित किया जाता है, जो हाल ही में अस्तित्व में आये झारखण्ड (पूर्व में बिहार का भाग) राज्य का एक ग्रामीण क्षेत्र है। यह आयोजन विश्वभर से पधारे शिष्यों एवं योग प्रेमियों को शिवानन्द मठ की गतिविधियों और परियोजनाओं में सम्मिलित होने एवं सहायता देने का अवसर प्रदान करता है।

बिहार योग भारती 1994

बिहार योग भारती की स्थापना स्वामी निरंजनानन्द द्वारा सन् 1994 में की गयी। योग विज्ञान के उच्च शिक्षा संस्थान के रूप में आज की आवश्यकताओं के अनुरूप बिहार योग भारती व्यापक वैज्ञानिक तथा यौगिक शिक्षा प्रदान कर रहा है, जिसमें योगदर्शन, योगमनोविज्ञान, प्रायोगिक योग विज्ञान और योग पर्यावरण के क्षेत्र में योग अध्ययन में सर्टिफिकेट तथा डिप्लोमा देने का प्रावधान है। वर्तमान में बिहार योग भारती योग अध्ययन में चार माह के पूर्णत: आवासीय पाठ्यक्रम प्रदान कर रही है।

बिहार योग भारती विस्तृत अभिरुचियों और विविध पृष्ठभूमियों से सम्बन्धित विद्यार्थियों को प्रवेश देती है। योग शिक्षा के अतिरिक्त सेवा, समर्पण एवं करुणा की भावना विद्यार्थियों द्वारा हृदयंगम की जाती है। यह एक आवासीय संस्था है, जहाँ विद्यार्थी आश्रम-वातावरण में रहकर यौगिक जीवनशैली एवं प्रशिक्षण को गुरुकुल के अंग के रूप में ग्रहण करते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बिहार योग भारती के ज्ञान को ऑस्ट्रेलिया, यूरोप, उत्तर तथा दक्षिण अमेरिका में अनुषगी अकादमियों द्वारा व्यापक रूप में जिज्ञासुओं तक पहुँचाया जा रहा है।

बाल योग मित्र मण्डल 1995

बाल योग मित्र मण्डल बच्चों का, बच्चों के लिए, बच्चों के द्वारा चलाया जाने वाला एक संगठन है। बाल योग मित्र मण्डल की स्थापना स्वामी निरंजनानन्द

ने सन् 1995 में मात्र सात स्कूली बच्चों एवं एक महाविद्यालय के विद्यार्थी की पहल पर की थी। सन् 2011 तक बाल योग मित्र-मण्डल के बच्चों की संख्या 33,000 तथा पूरे भारत में 1,22,770 थी। ये सभी बच्चे योग सीखने और सिखाने में संलग्न हैं। वर्तमान में बाल योग मित्र मण्डल में 6,500 शिक्षकों का केन्द्रीय समूह है। 3000 से अधिक बच्चों को, योग प्रचारक, योग अनुदेशक और योग प्रदर्शक का प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

बाल योग मित्र मण्डल निम्नांकित बिन्दुओं के प्रति समर्पित है–

- 7 से 14 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास।
- बाल योग प्रचारकों, अनुदेशकों और प्रदर्शकों को प्रशिक्षण देना।
- योग शिक्षा के क्षेत्र में अनुसन्धान का संचालन और समन्वय करना।

सम्पूर्ण विकास को सुसाध्य बनाने के लिए बाल योग मित्र मण्डल में योग सिखाने, योग सीखने, व्यक्तित्व विकास तथा अनुसंधान के लिए चार परिचालन समूह हैं।

बाल योग मित्र मण्डल ने भारत में सैंकड़ों स्कूलों में योग प्रशिक्षण प्रदान किया है तथा वह सन् 1997 से विश्व के सबसे बड़े बाल योग महोत्सव को संचालित करता आ रहा है। इसमें प्रतिवर्ष 5000 से अधिक बच्चे भाग लेते हैं।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट 2000

राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यौगिक और आध्यात्मिक ज्ञान, जीवन शैली व अभ्यास के प्रचार-प्रसार के लिए योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की स्थापना सन् 2000 में स्वामी निरंजनानन्द द्वारा की गयी थी। यह संगठन योग मनोविज्ञान, प्रायोगिक योग विज्ञान, योग पर्यावरण, वैदिक, औपनिषदिक, तांत्रिक दर्शनों, यौगिक तथा आध्यात्मिक दर्शन, रहस्यवाद एवं प्रबुद्ध आध्यात्मिक विभूतियों एवं लेखकों की प्रेरणादायी वार्ताओं को पुस्तकों, पत्रिकाओं, अनुसंधान सामग्री, अभ्यास पुस्तकों, दृश्य-श्रव्य कैसेटों और मल्टीमीडिया प्रस्तुतीकरणों के रूप में प्रकाशित तथा निःशुल्क वितरण करता है।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट का उद्देश्य योग के शाश्वत ज्ञान, जीवनशैली और अभ्यास को समकालीन विश्व की आवश्यकताओं के अनुरूप व्यावहारिक तथा स्पष्ट रूप में प्रस्तुत कर मानवता का उत्थान करना है।

शिवानन्द आश्रम 2004

शिवानन्द आश्रम एक सामाजिक एवं दातव्य संस्था है। इसकी स्थापना स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की प्रेरणा से स्वामी सत्यसंगानन्द द्वारा सन् 2004 में की गयी। इसका मुख्यालय मुंगेर (बिहार) में स्थित है। वर्तमान में संस्था की गतिविधियों का केन्द्र रिखिया, जिला देवघर (झारखण्ड क्षेत्र) है।

इसका लक्ष्य योग विज्ञान एवं संस्कृति के माध्यम से मानव की आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आध्यात्मिक प्रशिक्षण एवं ज्ञान उपलब्ध कराकर श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती के दर्शन का प्रचार करना है। वर्तमान में शिवानन्द आश्रम में रिखिया पंचायत के बच्चे भारत की गौरवशाली संस्कृति के साथ-साथ आधुनिक शिक्षा प्राप्त कर एक उन्नत समाज की रूप-रेखा तैयार कर रहे हैं।

रिखिया के सभी ग्रामीण एवं अभावग्रस्त बच्चों को प्रतिदिन आश्रम में एक समय का भोजन उपलब्ध कराने के स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संकल्प को मूर्त रूप देने के लिए वर्ष 2010 में शिवानन्द आश्रम ने दीपावली के शुभ दिन 'अन्नपूर्णा कन्या क्षेत्रम्' का शुभारम्भ किया, जहाँ शीघ्र ही नियमित रूप से यह कार्य सुचारु रूप से संचालित होने लगेगा।

रिखियापीठ 2007

रिखियापीठ एक सामाजिक एवं दातव्य संस्था है, जिसकी स्थापना स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की प्रेरणा से स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती द्वारा सन् 2007 में की गयी। इसका मुख्यालय रिखिया (झारखण्ड) में स्थित है।

पीठ का मुख्य उद्देश्य है आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार-प्रसार और सम्पूर्ण मानवता के शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक कल्याण हेतु वैदिक एवं यौगिक संस्कृति का पुनर्जागरण। भारत की स्वर्णिम सांस्कृतिक विरासत के परिरक्षण हेतु रिखियापीठ में नियमित रूप से स्थानीय ग्रामीण बच्चों को हवन, नाम संकीर्तन, भजन, गीता, रामचरितमानस पाठ एवं मंत्रोच्चारण का प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

भारतीय संस्कृति की धरोहर को ये बच्चे ही संभालकर रखेंगे और इसे अगली पीढ़ी को हस्तांतरित करेंगे, इस प्रयोजन से इन बच्चों को हर प्रकार की सांस्कृतिक विधा का प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

रिखियापीठ में बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए उन्हें सांस्कृतिक शिक्षा के साथ-साथ, अँग्रेजी एवं कम्प्यूटर का प्रशिक्षण भी दिया जा रहा है, जिससे वे अपने जीवन में प्राचीन एवं आधुनिक संस्कृति का समन्वय करते हुए जीवन के हर क्षेत्र में पूरे आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ सकें। जनवरी 2012 से रिखियापीठ ने एक द्विमासिक पत्रिका, 'आराधना : हृदय का योग' का प्रकाशन आरंभ किया है। नि:शुल्क वितरण हेतु इस पत्रिका में सर्वसाधारण के लाभ के लिए जीवनोपयोगी शिक्षाओं का प्रकाशन किया जा रहा है।

संन्यास पीठ 2010

सन् 2009 में महासमाधि में लीन होने से पहले स्वामी सत्यानन्द सरस्वती ने भारत की सनातन आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक धरोहर को सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग बनाए रखने के उद्देश्य से अपने उत्तराधिकारी, स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती को संन्यास पीठ की स्थापना का आदेश दिया।

इसी प्रयोजन की पूर्ति हेतु स्वामी निरंजनानन्द ने अपने गुरु की प्रथम पुण्य तिथि, 6 दिसम्बर, 2010 को ऐतिहासिक मुंगेर नगरी में गंगा के पावन तट पर स्थित पादुका दर्शन गुरुकुल में संन्यास पीठ की स्थापना की।

संन्यास प्रशिक्षण जीवन में पूर्णता और प्रवीणता लाने का मार्ग है। संन्यास जीवनशैली का उद्देश्य हमारी चेतना का विस्तार और जागरण है, जिससे हमारे कर्मों में रचनात्मकता आए और हमारा जीवन सृजनात्मक बने।

जनवरी 2012 में संन्यास पीठ ने देश-विदेश से आए 108 प्रशिक्षणार्थियों को चुनकर अपना प्रथम त्रिवर्षीय संन्यास प्रशिक्षण आरंभ किया है। भारत की प्राचीन संन्यास एवं आश्रम परम्परा में विहित प्रक्रियाओं द्वारा उन्हें सेवा, समर्पण, स्वाध्याय, साधना और संयम को अपनी जीवनशैली का अंग बनाकर अपने भीतर विवेक, वैराग्य एवं त्याग की भावना जाग्रत करने का प्रशिक्षण दिया जा रहा है, जिससे उनकी क्षमताओं को उभार कर उन्हें मानवता की अहर्निश नि:स्वार्थ सेवा हेतु तत्पर किया जा सके।

योग-साहित्य

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट के हिन्दी प्रकाशन

रिखियापीठ सत्संग

भक्ति योग सागर, भाग 1 (पृ.375)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
भक्ति योग सागर, भाग 2 (पृ.450)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
भक्ति योग सागर, भाग 3 (पृ.208)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
भक्ति योग सागर, भाग 4 (पृ.376)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
भक्ति योग सागर, भाग 5 (पृ.232)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
भक्ति योग सागर, भाग 6 (पृ.168)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
भक्ति योग सागर, भाग 7 (पृ.192)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ सत्संग, भाग 1 (पृ.376)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ सत्संग, भाग 2 (पृ.238)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ सत्संग, भाग 3 (पृ.312)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

योग एवं तन्त्र सम्बन्धी सत्संग

योग प्रदीप–1 (पृ.382)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
योग प्रदीप–5 (पृ.460)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
योग साधना (पृ.436)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
शिष्य धर्म (पृ.92)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
बुद्धि, भावना और कर्म (पृ.58)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
प्रवृत्ति एवं निवृत्ति (पृ.70)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
भक्ति साधना (पृ.86)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

अभ्यास सम्बन्धी

आसन प्राणायाम मुद्रा बन्ध (पृ.568)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
बच्चों के लिए योग शिक्षा (पृ.246)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
ध्यान : तन्त्र के आलोक में (पृ.335)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
तन्त्र योग क्रिया (पृ.893)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
धारणा दर्शन (पृ.453)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

ईश्वर दर्शन (पृ.486)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
नवयोगिनी तन्त्र (पृ.250)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
जागो माँ कुल कुण्डलिनी (पृ.146)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
मूल बन्ध (पृ.114)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
घेरण्ड संहिता (पृ.394)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
कुण्डलिनी योग (पृ.456)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
अजपाजप और चिदाकाश धारणा (पृ.72)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
योग निद्रा (पृ.280)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

योगोपचार सम्बन्धी

समस्या पेट की समाधान योग का (पृ.215)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वता
रोग और योग (पृ.247)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
दमा, मधुमेह और योग (पृ.262)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
उच्च रक्तचाप पर योग का प्रभाव (पृ.228)	स्वामी शंकरदेवानन्द सरस्वती

योग एवं तन्त्र

योग दर्शन (पृ.457)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
सूर्य नमस्कार (पृ.112)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
स्वर योग (पृ.168)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
मुक्ति के चार सोपान (पृ.212)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
गुरु शिष्य सम्बन्ध (पृ.288)	स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती
गीता दर्शन (पृ.248)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
शिव चरित्र (पृ.232)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
संन्यास दर्शन (पृ.416)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

अन्य

कर्म संन्यास (पृ.231)	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
प्रश्नोपनिषद् (पृ.205)	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
मेरे आराध्य (पृ.376)	स्वामी धर्मशक्ति सरस्वती
स्वर्णिम संग्रह-1 (पृ.210)	बिहार योग का मौलिक प्रकाशन
संस्कृत प्रबोधिनी (सोपान 1, 3 एवं 4)	स्वामी प्रज्ञातीर्थ सरस्वती

हिन्दी ऑडियो कैसेट

योगनिद्रा एवं ध्यान

योगनिद्रा एवं तपोवन संगीत	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
आरंम्भिक योगनिद्रा एवं अन्तर्मौन	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
मध्यम योगनिद्रा एवं अजपाजप	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
उच्च योगनिद्रा एवं चिदाकाश धारणा	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

भजन एवं कीर्तन

तपोवन मन्त्र	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
स्वान सिंग्स 1–4	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
श्री दुर्गा अनुष्ठान 2011	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
श्री कात्यायनी अनुष्ठान 2012	स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती



स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा ग्राम (उत्तरांचल) में सन् 1923 की मार्गशीर्ष पूर्णिमा को हुआ। उनमें बाल्यावस्था से ही आध्यात्मिक जीवन के प्रति झुकाव था और विलक्षण प्रतिभाएँ परिलक्षित होती थीं। 18 वर्ष की अवस्था में उन्होंने गुरु की खोज में घर छोड़ दिया। 1943 में उन्हें ऋषिकेश में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के दर्शन हुए। 12 सितम्बर 1947 को गुरु ने उन्हें परमहंस संन्यास में दीक्षित किया। वे 12 वर्ष गुरु की सेवा में रहे और आध्यात्मिक जीवन के हर आयाम में दक्षता प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होंने परिव्राजक संन्यासी के रूप में आठ वर्षों तक सम्पूर्ण भारत, अफगानिस्तान, बर्मा, नेपाल एवं श्रीलंका का भ्रमण किया। इस अवधि का उपयोग उन्होंने यौगिक तकनीकों को प्रतिपादित एवं परिष्कृत करने में किया, ताकि मानवता को कष्टों से त्राण मिल सके।

योग की प्राचीन पद्धति को आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की आवश्यकता का अनुभव होने पर उन्होंने 1956 में अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल एवं 1963 में बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। अगले 20 वर्षों तक विश्व भ्रमण करते हुए उन्होंने योग की पताका विश्व के कोने-कोने में फहरा दी और बिहार योग विद्यालय को योग की एक अग्रगण्य संस्था के रूप में ख्याति दिलायी। उन्होंने योग, तंत्र एवं आध्यात्मिक जीवन पर अस्सी से अधिक ग्रन्थों का प्रणयन किया।

'सत्यानन्द योग' एक ऐसी परम्परा बन गयी, जिसमें शास्त्रीय और अनुभवात्मक ज्ञान तथा आधुनिक दृष्टिकोण का सुन्दर समन्वय है। ग्राम्य-विकास की भावना से 1984 में उन्होंने दातव्य संस्था 'शिवानन्द मठ' की एवं योग पर वैज्ञानिक शोध की दृष्टि से 'योग शोध संस्थान' की स्थापना की। सन् 1988 में उपलब्धियों के शिखर पर पहुँचकर उन्होंने सब कुछ त्याग दिया और क्षेत्र संन्यास लेकर परमहंस संन्यासी की जीवन पद्धति अपना ली। सन् 1989 में उन्हें रिखिया आने का दैवी आदेश हुआ, यहाँ उन्होंने एकान्तवास करते हुए उच्च वैदिक साधनाएँ कीं। सन् 1991 में अपने पड़ोसियों को सुविधाएँ उपलब्ध कराने का आदेश मिलने पर उन्होंने आश्रम को उस क्षेत्र के अभावग्रस्त ग्रामीणों की सहायता करने की अनुमति दी। सन् 1995 में उन्होंने वैश्विक सुख, शान्ति एवं समृद्धि का संकल्प लेकर बारह वर्षीय राजसूय यज्ञ आरम्भ किया और सन् 2007 में 'सेवा, प्रेम और दान' को अपनी मुख्य गतिविधि बनाने का आदेश देकर रिखियापीठ की स्थापना की घोषणा की।

स्वामी सत्यानन्द 5 दिसम्बर 2009 की मध्यरात्रि में अपने शिष्यों की उपस्थिति में महासमाधि में लीन हो गये।



क्रियात्मक योग में योग की उन मूल धारणाओं और अभ्यासों पर प्रकाश डाला गया है, जो बिहार योग या सत्यानन्द योग की नींव हैं। बिहार योग से परिचय कराने के लिए ये आदर्श अभ्यास हैं। स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की इन आरम्भिक शिक्षाओं का उद्देश्य पाठकों को योग की जानकारी प्रदान करना है। योग तथा ध्यान के मुख्य अभ्यासों को मनो-नियन्त्रण और सजगता के विकास पर बल देते हुए विशेष रूप से समझाया गया है।

योग को एक कला और विज्ञान के रूप में प्रस्तुत करने वाली यह एक कालजयी कृति है।



[bar code here]

ISBN : 978-81-85787-59-6